
सूर्य-नमस्कार
Bagchi

सूर्य-नमस्कार

अथवा

स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु प्राप्ति के लिए सर्वोत्तम
व्यायाम-पद्धति

[औंध-राज्य के चीफ़, स्वनाम धन्य, श्रीमंत बालासाहब पंत
प्रतिनिधि जी की 'सूर्य-नमस्कार' नाम की अँगरेज़ी
पुस्तक का हिन्दी-रूपान्तर]

पं० भगवती प्रसाद पाण्डे, बी० ए०

पाचवाँ संस्करण
११००

सन् १९३८ ई०

मूल्य १)

ALLAHABAD :
Printed and Published by Krishna Ram Mehta at the
Leader Prass.

प्रकाशक का वक्तव्य

हमें यह निश्चय है कि ऐसे समय में, जब शारीरिक व्यायाम की ओर इस देश में अधिक ध्यान दिया जा रहा है, औंध-राज्य के चीफ़ साहब की लिखी हुई तत्सम्बन्धी मूल्यवान पुस्तक, 'सूर्य-नस्कार' का जिसका यह हिन्दी अनुवाद है, खूब प्रचार होगा। यह पुस्तक सबसे पहिले मराठी भाषा में प्रकाशित हुई थी। उसके बाद जब उसकी देश में अधिक मांग बढ़ी, तब वह अँगरेज़ी में प्रकाशित की गई। हम औंध-राज्य के देश-भक्त चीफ़ साहब के बड़े आभारी हैं कि उन्होंने हमें इस पुस्तक का हिन्दी-अनुवाद प्रकाशित करने की अनुमति दे दी है। आपने हमें इस पुस्तक के व्यायाम सम्बन्धी सब ब्लाक भेजने की भी कृपा की है, जिसके लिए हम आपको धन्यवाद देते हैं।

यह पुस्तक चीफ़ साहब की कोई मौलिक रचना नहीं है, बल्कि इसमें जिस व्यायाम-पद्धति का वर्णन है, वह बहुत पुरानी है। चीफ़ साहब ने इसका स्वयं अभ्यास किया है और इसके गुणों का अनुभव किया है। आपने इस पद्धति के सिद्धांतों का बहुत स्पष्ट और प्रभावशाली विवेचन किया है। इसका मुख्य अंग यह है कि इसमें कुछ वैदिक और बीज-मंत्रों का उच्चारण करना होता है। हमारे प्राचीन ऋषियों ने शारीरिक और आत्मिक स्वास्थ्य के महत्व-पूर्ण सम्बन्ध का अनुभव किया था। वे जानते थे कि मन का शरीर पर प्रभाव पड़ता है। इसके अलावा शरीर के आन्तरिक अंगों पर, जिनका संचालन किसी प्रकार की व्यायाम-पद्धति से नहीं हो सकता है, जो केवल शरीर

के विकास के लिए है, प्राणायाम और शब्द का जो प्रभाव पड़ता है, उसका उनको अद्भुत ज्ञान प्राप्त था। व्यायाम सम्बन्धी पश्चिमी पद्धतियां इसलिए पिछड़ी हुई हैं क्योंकि वे मनुष्य की मानसिक, धार्मिक तथा आत्मिक पहलुओं की उपेक्षा करती हैं और उसके केवल शारीरिक-विकास ही पर ज़ोर देती हैं। परन्तु अब योरप के स्वास्थ्य के कुछ खोजियों ने भी उन गहन सिद्धान्तों का पता लगा लिया है, जिनका आधार हम हिन्दुओं का मंत्र-शास्त्र है। इस पुस्तक के लेखक ने इसके आठवें प्रकरण में एक योरपीय विद्वान का तत्सम्बन्धी अनुभव भी दिया है, जिसके पढ़ने से अविश्वासियों को भी इस व्यायाम-पद्धति में विश्वास उत्पन्न हो जायगा! इंगलैंड के एक प्रसिद्ध हैल्थ आफ़ीसर डाक्टर चार्ल्स एस० टामसन ने 'डेली टैलीग्राफ़' नाम के एक पत्र में अपने एक लेख में यह लिखा था—

"मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति के लिए, जिसके साथ शारीरिक स्वास्थ्त का भी सम्बन्ध है, किसी धर्म अथवा तत्वदर्शन का अवलम्बन लेना आवश्यक है।" इसके आगे वे कहते हैं, "शिक्षा का उद्देश्य यह होना चाहिए कि अपने भावों पर अधिकार हो जाय और उनको आध्यात्मिक रूप में प्रकट करने की योग्यता बढ़ जाय। यह स्मरण रहे कि मानसिक कार्य की अधिकता ही से स्वास्थ्य नहीं बिगड़ता है, बल्कि स्वास्थ्य उस समय ख़राब होता है, जब मानसिक कार्य को अधिकता के साथ साथ हमारे भावों पर भी असह्य दबाव पड़ता है।" इस बात को सब जानते हैं कि प्रचंड भावों का शरीर के उन आन्तरिक अंगों के स्वाभविक संचालन पर असर पड़ता है, जो स्वास्थ्य-प्राप्ति के लिए लाभ-कारी हैं। इसलिए यह साफ़ ज़ाहिर है कि मन और शरीर, दोनों का व्यायाम ही स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है और रोग के

लिए बाधक है। औंध-राज्य के चीफ़ साहब अपने १७ साल के अनुभव के आधार पर इस पुस्तक में लिखते हैं, "हम सूर्य-नमस्कारों को बीज तथा वेद-मंत्रों के साथ प्रतिदिन नियमानुकूल करते आ रहे हैं, जिसका फल यह हुआ है कि हमारा शरीर और दिमाग़ बहुत हलका हो गया है और हमको युवावस्था का सा अनुभव होने लगा है। परन्तु सब से बड़ा लाभ इन नमस्कारों से हमें यह हुआ है कि हम गत १७ वर्ष से ज्वरादि रोगों का तो नाम ही क्या, जुकाम और खांसी से भी पीड़ित नहीं हुए हैं। हम में अच्छा सामर्थ्य है, जिसका अति आश्चर्य-जनक प्रमाण यह है कि यद्यपि हमारे प्लेग का चार बार टीका लग चुका है, परन्तु हमें न तो कभी ज्वर आया और न हमें कभी ऐसी पीड़ा अनुभव हुई है. जिसके कारण हमने अपने दैनिक सूर्य-नमस्कार के व्यायाम को छोड़ दिया हो। हमें इन गत १७ वर्ष के अनुभव तथा अध्ययन ने यह कहने के लिए अधिकारी बना दिया है कि सूर्य-नमस्कार अन्य सब व्यायाम-शैलियों में इस बात में बढ़कर है कि यह उस शारीरिक पुरुषार्थ, मानसिक बल तथा सहिष्णुता को, जो कठिन से कठिन परिस्थित में भी विचलित नहीं हो सकती है, बढ़ाता है।"

यह हिन्दी-अनुवाद हमने इस आशय और आशा से प्रकाशित किया है कि इस वैज्ञानिक व्यायाम-पद्धति की जानकारी, जिसका अनुशीलन करने से मन और शरीर, दोनों का विकास होता है, हिन्दी जानने वाली जनता को भी हो जाय। यह पुस्तक स्वास्थ्य सामर्थ्य तथा दीर्घायु का रास्ता दिखलाती है। इसमें भोजन-व्यसन सम्बन्धी अनेक लाभकारी उपदेश भी हैं, जो पालन करने योग्य हैं।

हर्ष का विषय है कि परमोपकारी एवं अमूल्य पुस्तक 'सूर्य

नमस्कार ' के हिन्दी संस्करण का हिन्दी जनता ने भी समुचित आदर किया और यह पुस्तक उनके लिए लाभदायक और मूल्यवान सिद्ध हुई । आज सहस्रों सज्जन—बाल, युवा, वृद्ध, स्त्री और पुरुष दोनों—इस व्यायाम को नियमानुसार नित्यप्रति करने लगे हैं और उन्हें बल, स्वास्थ्य, सामर्थ्य और दीर्घायु भी प्राप्त होने लगी है । कई स्कूलों, पाठशालों आदि में भी यह व्यायाम कराया जाने लगा है ।

हिन्दी जनता द्वारा इस पुस्तक के अपनाए जाने के कारण ही हमें थोड़े समय ही के अन्दर इसके चार संस्करण छापने पड़े और इन चारों संस्करणों की पुस्तकें हाथों हाथ बिक गईं । यह सब इसकी उपयोगिता का प्रत्यक्ष प्रमाण ही है । हमने इस उपयोगी सिद्ध होने वाली पुस्तक का मूल्य भी अधिकाधिक प्रचार होने के अभिप्राय से ही १॥) से घटा कर दूसरे संस्करण का १।) और तीसरे तथा इस संस्करण का केवल १) कर दिया है ।

आज यह पाचवाँ संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण, नए अंगरेज़ी प्रकरण के अनुसार ही आवश्यक कमी वेशी और परिवर्तन के साथ पाठकों के सम्मुख उपस्थित किया जाता है । पुस्तक अब और भी अधिक उपयोगी हो गई है । दूसरे और तीसरे संस्करण में जो आवश्यक परिवर्त्तन हुए हैं, वे मूल अनुवादक के अतिरिक्त एक दूसरे साहित्य प्रेमी सज्जन से कराए गए हैं ।

आशा है, इस नवीन संशोधित और परिवर्द्धित संस्करण को भी हिन्दी जनता अपना-कर हमारे उत्साह को बढ़ाएगी ।

हमारा निवेदन

हमने जब प्रयाग के अँगरेज़ी दैनिक पत्र, 'लीडर' में सूर्य-नमस्कार नाम की एक अँगरेज़ी पुस्तक की प्रभावशाली आलोचना पढ़ी, तब हमारी इच्छा उसको मँगाकर पढ़ने की हुई। हमने उसी दिन एक पत्र औंध-राज्य के चीफ़ (राजा) के नाम जो इसके श्रद्धेय लेखक हैं, इसकी एक प्रति वी० पी० द्वारा भेजने के लिए लिख दिया। हमारे इस पत्र के लिखने के क़रीब दस दिन के अन्दर ही हमें यह पुस्तक प्राप्त हो गई। हमने बड़े ध्यान और श्रद्धा से इस पुस्तक को आदि से अन्त तक पढ़ा। इसको पढ़कर, वास्तव में, हमें बड़ी प्रसन्नता हुई और इसके अति महत्व-पूर्ण तथा लाभ-कारी विषय को देख कर हमने एक पत्र उपरोक्त चीफ़ साहब की सेवा में और भेजा, जिसमें हमने अपने सब निकट सम्बन्धियों तथा कुछ मित्रों के पते इस आशय से लिख दिए कि इन पतों से वी० पी० द्वारा 'सूर्य-नमस्कार' की प्रतियाँ भेज दी जायँ। दूसरे हमने इस पत्र में चीफ़ साहब को इस अति उपयोगी पुस्तक को जनता के सम्मुख उपस्थित करने के लिए बधाई दी तथा उसमें हमने अपनी यह इच्छा भी प्रकट की कि यदि हमें इस पुस्तक को हिन्दी-भाषा-भाषियों के हितार्थ, जो हमारे देश में अन्य सब भाषा-भाषियों से अति अधिक संख्या में हैं, अपनी मातृ-भाषा तथा राष्ट्र-भाषा, हिन्दी में प्रस्तुत करने के लिए स्वीकृति दे दी जाय, तो देश के बहु-संख्यक भाई बहिनों का बड़ा उपकार हो। इस पत्र के उत्तर में चीफ़ साहब ने बड़ी प्रसन्नता-पूर्वक इस पुस्तक का हिन्दी-अनुवाद करने की हमारी प्रबल इच्छा को कार्यरूप में प्रकट होने

के लिए शीघ्र अपनी अमूल्य अनुमति लिख भेजी। हमने भी "शुभस्य शीघ्रम्" दत्त-चित्त होकर इस अनुवाद-कार्य को समाप्त कर दिया। बस, इस प्रकार इस पुस्तक का यह हिन्दी-रूपान्तर आपके सन्मुख उपस्थित हुआ है।

परन्तु अभी हमें दो शब्द इस सम्बन्ध में अवश्य लिखने हैं कि हम इस पुस्तक का हिन्दी-अनुवाद करने के लिए क्यों सन्नद्ध हुए ? इस प्रश्न के उत्तर में हमें अपने पाठकों से सहसा यह कह देना है—जैसा हमने इस पुस्तक के मुख्य नाम के नीचे इसके उपनाम-संस्कार करने का भी साहस किया है—कि यह व्यायाम सम्बन्धी एक 'सर्वोत्तम पुस्तक' है। हमने इसको यह 'सर्वोत्तम' विशेषण देने का साहस अपने व्यायाम-सम्बन्धी बड़े अनुभव के आधार तथा इस पुस्तक के आलोचनात्मक अध्ययन तथा मनन के बल ही पर किया है। हमने स्वयं अनेक प्रकार की व्यायाम-पद्धतियों का अध्ययन तथा अनुशीलन किया है और तत्सम्बन्धी प्रचुर साहित्य का अवलोकन भी किया है। हमने जिन सुप्रसिद्ध व्यायाम-विशारदों की पद्धतियों का अनुसरण किया है, उनमें से कुछ के नाम यहाँ अवश्य उल्लेखनीय हैं—(१) प्रोफ़ेसर राममूर्ति, (२) प्रोफ़ेसर सी० आर० डी० नायडू, (३) प्रोफ़ेसर सैंडो और (४) प्रोफ़ेसर जे० पी० मुलर। इन सब की व्यायाम-पद्धतियों के सिद्धान्त तथा कार्य-क्रम की जब हम सूर्य-नमस्कार व्यायाम-पद्धति से तुलना करते हैं, तब यह इन सब से अधिक वैज्ञानिक, सर्व-प्रिय तथा पूर्ण ज्ञात होती है। हमने इस पुस्तक का केवल अक्षर-ज्ञान ही प्राप्त नहीं किया है, किन्तु हमने इसको स्वयं करके देख भी लिया है और आजकल हम प्रयाग के बाई-के-बाग़ मुहल्ले में, जहाँ पर हम रहते हैं, कुछ स्कूल, कालिज के विद्यार्थियों के साथ इसका अभ्यास भी कर रहे हैं।

इसका मंत्र-भाग इसका मुख्य अंग है। इसको जो स्त्री-पुरुष बिना मंत्र-प्रयोग के करेंगे, उनके शरीर केवल ऐसे बनेंगे जैसे बिना सुगंध के पुष्प। मनोबल अथवा विचार-बल, भोजन-व्यसन तथा उपवास का इसमें जो विधान है, वह शरीर रूपी पुष्प की सुन्दरता का उत्पादक है। यह पद्धति शरीर के वाह्य तथा आन्तरिक, दोनों अंगों को स्वस्थ, सबल तथा सुन्दर बनाती है। यह लड़का-लड़की, स्त्री-पुरुष, युवा-वृद्ध, सबल-दुर्बल तथा राउ-रंक, सभी के लिए उपयुक्त तथा उपयोगी है। इसको आठ वर्ष की बाल्यावस्था से सौ वर्ब की आयु तक किया जा सकता है। इसके करने के लिए किसी विशेष तैयारी की आवश्यकता नहीं है—न किसी साज-सामान की अवश्कता है, न किसी संगी-साथी की आवश्यकता है और न इसके लिए एक पाई तक व्यय करने की आवश्यकता है। "हर्रा लगे न फिटकरी, रंग अच्छा ही अच्छा," यह इसका आर्थिक दृष्टि से महत्व है। यह अकेले भी की जा सकती है और सैकड़ों के साथ भी। संक्षेप में यह बलवानों का बल, विद्वानों की बुद्धि, वैद्यों की चिकित्सा, ज्ञानियों का ज्ञान, धर्मात्मा का धर्म तथा योगियों का योग है। हमारे इन वचनों को पढ़ कर शायद पाठक लोग हमारे ऊपर अत्युक्ति-दोष को आरोपित करेंगे। परन्तु हम यह कहने का फिर दुस्साहस करते हैं कि यह सब यथार्थ है। 'हाथ कंगन को आरसी क्या?' इसको स्वयं कीजिए। आपको यह सब प्रकट हो जायगा। यदि किसी को इस वाक्य, 'धर्मार्थ-काममोक्षाणामारोग्यं मूलकारणम्' की यथार्थता का साक्षात करना है, तो उसको 'सूर्य-नमस्कार' का विधि-पूर्वक अनुगमन अवश्य करना चाहिए।

इस पुस्तक का सबसे कठिन तथा महत्व-पूर्ण अंग, 'शरीर-रचना' तथा 'शरीर-विज्ञान' का प्रसंग है। यह स्मरण रखना

चाहिए कि यदि हम एक यंत्र को चलावें और उसके कल-पुर्जों की बनावट, गठन, परस्पर सम्बन्ध, कार्य तथा प्रभाव को न जानें, तो भला हम उसको किस प्रकार ठीक तौर से संचालित कर सकते एवं उससे समुचित लाभ उठा सकते हैं। इसी प्रकार व्यायाम करने के लिए भी 'शरीर-रचना' तथा 'शरीर-विज्ञान' का ज्ञान प्राप्त करना अति आवश्यक है। इस प्रस्तक में शरीर के केवल प्रधान-प्रधान अंगों ही के बिषय में ध्यान आकर्षित किया गया है और यह स्पष्ट रूप से प्रकट कर दिया गया है कि सूर्य-नमस्कार करने से इन अंगों का विकास तथा पुष्टि होती है।

इस पुस्तक का भोजन का प्रसंग भी कुछ कम महत्व का नहीं है। भोजन शरीर का आधार है। परन्तु प्रश्न यह है कि कौन-सा भोजन शरीर का आधार तथा उसके लिए उपयुक्त, वल-बर्द्धक तथा पुष्टि-कारक है। इस सम्बन्ध में इस पुस्तक में पूर्णरूप से विवेचना की गई है और पाक-शास्त्र के वर्तमान समय के अनेक देशी तथा विदेशी विद्वान-मर्मज्ञों के प्रमाण तथा वचन उद्धृत किए गए हैं।

इस पुस्तक का आठवाँ प्रकरण भी बहुत रोचक और प्रभावोत्पादक है। इसमें लैज़र लैज़रियो नाम के एक यूरुपीय विद्वान ने एक नयी रीति ही से बीज-मंत्रों के महत्व को मालूम किया है।

बस, अब हमारे सहृदय पाठक पूर्णरूप से समझ गये होंगे कि हमने यह थोड़ा-सा प्रयास आप लोगों की सेवा करने के मुख्य अभिप्राय ही से किया है। यदि इस हमारे परिश्रम से हमारे एक भाई अथवा बहन ने भी समुचित लाभ उठाया, तो हम अपने को केवल इतने ही से कृत-कार्य तथा सफल-प्रयत्न समझेंगे। क्योंकि हमने यह अनुवाद केवल अपने भाई-बहिनों की वर्तमान शारीरिक तथा मानसिक हीनावस्था को देखकर ही उपस्थित किया है।

हमारी यह हार्दिक इच्छा है कि सूर्य-नमस्कार-व्यायाम का प्रचार घर घर में हो और हमारे दुःख-दारिद्रय दूर हों।

हमारी और आप की ओर से इस सब के लिए धन्यवाद के पात्र इस पुस्तक के मूल लेखक, स्वनाम धन्य, सुप्रसिद्ध औंध-राज्य के चीफ़ (राजा) श्रीमन्त बालासाहब पन्त प्रतिनिधि जो ही हैं, जिन्होंने अपने निरन्तर १७ वर्ष के अचूक अनुभव से हमारे पूर्वजों के गड़े हुए इस खज़ाने को उखाड़ कर हम सब को बाँटने का चेष्टा की है।

हम यह कहने के लिए तनिक भी अवसर नहीं है कि हमको इस अनुवाद-कार्य में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव हुआ है। क्योंकि हमारे लिए 'शरीर-रचना,' 'शरीर-विज्ञान' तथा 'रोग-चिकित्सा' सम्बन्धी जो कठिन प्रसंग थे, उनके अनुवाद में हमें अपने प्रियजन पं० प्रयागदत्त जी दुबे से बड़ी सहायता मिली है। हम इस सहायता के लिए आपके बड़े कृतज्ञ हैं। और हम ग्वालियर-राज्य के प्रयागस्थ श्री बेनीमाधव जी के मन्दिर के प्रबन्धक, श्रीयुत पं० ढोंढे पन्त जी के भी बड़े आभारी हैं, क्योंकि उन्होंने हमें मराठी शब्दों के अर्थ को हिन्दी में बताने का प्रयास किया है।

शारदा-सदन, प्रयाग
विजय-दशमी
सम्वत् १९८४ विक्रमी

निवेदक—
भगवती प्रसाद पांडे



औंध राज्य के चीफ़, श्रीयुत बाला साहब पंत, प्रतिनिधि

भूमिका

यह बड़े दुख की बात है कि हमारे देश के निवासी अति अधिक संख्या में दुर्बल और रोगी हैं और वे शायद ही कभी स्वस्थ अवस्था में रहते हैं। स्वास्थ्य-प्राप्ति के लिए कोई विशेष प्रकार की औषधि नहीं है। यह किसी दूसरे मनुष्य की सहायता के द्वारा प्राप्त नहीं हो सकता। यह तो जीवन में कठिन संयम तथा नियमों के पालन करने ही से प्राप्त और संचित होता है। इसलिए, हमको स्वास्थ्य, सामर्थ्य, तथा दीर्घायु की प्राप्ति के लिये स्वास्थ्य-सम्बन्धी हिताहित का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।

हमको अपने बहुत समय के विचार तथा अनुभव से यह विश्वास हो गया है कि प्रत्येक स्त्री-पुरुष को बलवान तथा स्वस्थ बनने और रहने के लिए किसी प्रकार के निरन्तर उद्योग की आवश्यकता है।

इसलिए, हमने इस आशय से कि 'वह उद्योग क्या होना चाहिए,' उन लोगों के लिए जो स्वास्थ्य-प्राप्ति के अति उत्सुक खोजी हैं, 'पुरुषार्थ' नाम की एक मराठी पत्रिका में लेख देने शुरू किये। हमें यह देखकर बड़ा सन्तोष हुआ कि हमारे उन लेखों को बहुत लोगों ने पसन्द किया, और इसके फल-स्वरूप सन् १९२४ ई० में उक्त पत्रिका के सम्पादक महोदय ने उन सब लेखों को एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित कर दिया।

अब इस पुस्तक द्वारा हमारी सूर्य-नमस्कार करने की विधि में जो वैज्ञानिक तथा महत्व-पूर्ण सिद्धान्त हैं, उनके सम्बन्ध में पाठकों का यह विचार निश्चय होगया है कि ये सिद्धान्त शरीर के बहुत

से आवश्यक अंगो को अपने स्वाभाविक रूप से काम करने में प्रवृत्त करते हैं और ये केवल पुट्ठों के बल ही को नहीं बढ़ाते, किन्तु शरीर को पूर्ण-रूप से स्वस्थ भी रखते हैं। इस पुस्तक की इतनी बिक्री हुई कि बहुत थोड़े ही समय में इसके तीन संस्करण निकल गये।

इस पुस्तक को अंगरेज़ी भाषा में प्रकाशित करने के लिए उन प्रान्तों से, जहाँ मराठी भाषा का प्रचार नहीं है, बहुत से पत्र हमारे पास आये। इसलिए, हमको इन दूर-दूर से आये हुए पत्रों के भेजनेवालों की उत्सुकता को देखकर इस पुस्तक को अंगरेज़ी भाषा में भी प्रकाशित करना पड़ा।

इस पुस्तक के अंगरेज़ी संस्करण में, जिसका यह हिन्दी-रूपांतर है, 'भोजन और व्यसन' के सम्बन्ध में एक नया प्रकरण भी जोड़ दिया गया है। और इसके अतिरिक्त इसमें कुछ और भी महत्वपूर्ण बातें बढ़ा दी गई हैं।

इस पुस्तक की उपयोगिता को और भी अधिक बढ़ाने के अभिप्राय से सब आवश्यक चित्र भी इसमें लगा दिये गये हैं।

हम धारवार के फ़र्स्ट क्लास सब-जज, श्रीयुत बाजीराव जी गुट्टीकर और अपनी रानी साहिबा के अध्यापक, श्रीयुत काशीनाथ जी किर्लोस्कर को, जिन्होंने हमें इस पुस्तक को अंगरेज़ी भाषा में उपस्थित करने में बड़ी सहायता दी है, हृदय से धन्यवाद देते हैं। हम श्रीयुत एच० जी० फ़ैक्स को, जो 'टाइम्स आफ़ इंडिया' पत्र के संवाददाता हैं और जिन्होंने अंगरेज़ी संस्करण का प्रूफ़-संशोधन किया है, बिना धन्यवाद दिये इस प्रसंग को समाप्त नहीं कर सकते। इसलिए, इनके लिए भी हमारा हार्दिक धन्यवाद है। इनके अतिरिक्त हम उन लेखक, पत्र तथा पत्रिकाओं को भी हृदय से

धन्यवाद देते हैं, जिनका हवाला हमने इस पुस्तक में स्थान-स्थान पर दिया है।

अन्त में हम आशा करते हैं कि पाठक लोग हमारे इस उद्योग के गुण-दोष पर अवश्य विचार करेंगे।

—ग्रन्थकर्ता

प्रारम्भिक आदेश

(१) सूर्य-नमस्कार आरम्भ करने के पूर्व शरीर की तौल कर लेनी चाहिए और डाक्टर से जाँच करा लेनी चाहिए।

(२) शरीर के इन मुख्य अंगों को नाप लेना चाहिए—गर्दन, बाहों के ऊपर और नीचे के हिस्से, सीना, पेट, कमर, कूल्हा, जांघ और पिंडली।

(३) शरीर की तौल और नाप को हर तीसरे और छठे महीने देखते रहना चाहिए।

(४) चाय, क़हवा, कोको, तम्बाकू, शराब तथा अन्य मादक वस्तुओं से बचना चाहिए।

(५) व्यायाम करते समय हमेशा बहुत थोड़ा कपड़ा पहिनना चाहिए।

(६) खुली हवादार जगह में व्यायाम करना चहिए।

(७) ठंडे जल से स्नान करना चाहिए।

(८) भोजन नियम से करना चाहिए।

(९) सफ़ाई और सादगी से रहना चाहिए।

चित्र-सूची

विषय-सूची

सूर्य-नमस्कार

पहिला प्रकरण

व्यायाम की आवश्यकता तथा उसके मूलतत्व

व्यायाम की आवश्यकता

मनुष्य को स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु की प्राप्ति के लिए शारीरिक व्यायाम की हर काल आवश्यकता रहती है और अब भी है। आजकल के मनुष्यों के लिए तो यह अनिवार्य ही है, क्योंकि इसके द्वारा वे इस वर्तमान समय के कठिन जीवन-संग्राम में अपनी, अपने सम्प्रदाय तथा अपने देश की रक्षा करने और अपनी आजीविका उपार्जन करने के योग्य हो सकते हैं। व्यायाम जीवन के लिए इतना आवश्यक है, जितना पुष्टिकर भोजन, निर्मल जल, शुद्ध वायु और सूर्य का प्रकाश।

'हैल्थ एण्ड एफ़ीशिएंसी' नामक पत्र के जुलाई सन् १९२८ ई० के अंक में व्यायाम के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए मि० राबर्ट एल० फ़र्ग्यूसन इस प्रकार लिखते हैं—

"...सावधानी से चुने और विधि-पूर्वक किए जाने वाले व्यायाम का महत्व बहुत ज्यादा नहीं बतलाया जा सकता; फिर भी यह आवश्यक है कि व्यायाम की भिन्न भिन्न क्रियाओं के करने के समय हमें शरीर के अंगों के सामूहिक विकाश पर

विशेष ध्यान रखना चाहिये। हमारा उद्देश्य संपूर्ण अंगों का विकास होना चाहिये, न कि केवल बल की प्राप्ति करना। इसमें सन्देह नहीं कि अंगों के विकाश से शारीरिक शक्ति का कुछ पता अवश्य लग जाता है, पर यह शरीर के संपूर्ण अंगों के विकाश की पूर्णता का द्योतक नहीं है।

"व्यायाम, स्त्री और पुरुष दोनों तथा हर अवस्था के व्यक्ति के लिए लाभदायक है। हम कोई-सा भी धंधा क्यों न करते हों अथवा हम शरीर से अपनी अयोग्यता का अनुभव क्यों न करते हों, विधि पूर्वक थोड़ा-सा भी उपयुक्त व्यायाम आश्चर्यजनक कार्य कर दिखायेगा।... "

जर्मन देश के बहिष्कृत सम्राट ने इस सम्बन्ध में अपने निम्नांकित विचार प्रकट किये हैं—

"मन और शरीर की पूर्ण शिक्षा की आवश्यकता का प्रचार करना एक बड़ी महत्त्व-पूर्ण बात है। वह विष, जिसको वर्तमान सभ्यता हमारे जीवनों में फैला रही है, इस क़िस्म का है कि जब तक हम उसके विरुद्ध किसी औषधि का प्रयोग न करेंगे, तब तक हम जीवित नहीं रह सकते। इस विष की सर्वोत्तम विरोधात्मक औषधि बस कोई उपयुक्त व्यायाम-पद्धति ही है"।

['फ़िज़ीकल कलचर' के फ़र्वरी, सन १६२१ ई० के अंक से उद्धृत]

एक यूरुपीय विद्वान् श्रीयुत बरनार मैकफ़ैडन का व्यायाम के के सम्बन्ध में यह कहना है—

"बहुत से आदमी अपनी निश्चित आयु से पहिले लगभग पचीस से पचास वर्ष तक की अवस्था ही में मर जाते हैं। इसका कारण यह है कि वे अपने शरीर को पूर्ण जीवित अवस्था में रखने के लिए यथेष्ट मात्रा में व्यायाम नहीं करते।

" कुछ थोड़े से व्यायाम-व्यसनी विद्यार्थियों को छोड़ कर शेष हमारे स्कूल और कालिजों के बहु-संख्यक विद्यार्थी अपने शरीर को सुडौल बनाने के लिए यथेष्ट मात्रा में व्यायाम नहीं करते।

" यदि आपने अपने शरीर के पुट्ठों को शक्तिशाली नहीं बनाया है, तो आपके जीवन में चैतन्यता नहीं आसकती। क्योंकि शरीर के पूर्ण विकाश के लिए मज़बूत पुट्ठों की ज़रूरत है और शरीर को सदा बलवान और शक्तिशाली बनाये रखने के लिए आजीवन व्यायाम करने की आवश्यकता है।

" आप अपने जीवन में जिन चीज़ों के संसर्ग तथा सम्पर्क में आते हैं, उनका जो आपके ऊपर प्रभाव पड़ता है वह सदा बढ़ता ही जाता है।

" आपका प्रत्येक दिन का जीवन आपके लिए एक जीवित तथा प्रभावशाली अनुभव है। आपके ऊपर प्रत्येक वस्तु का बड़ा प्रभाव पड़ता है "।

आठ या दस वर्ष तक के क़रीब क़रीब सब बच्चे दौड़-भाग, कूद-फांद तथा घर के भीतर और बाहर के तरह तरह के खेल खेलकर मगन रहते हैं। इनके लिए किसी नियम-बद्ध व्यायाम-पद्धति की आवश्यकता नहीं है। परन्तु जब कि ये दिन में तीन घंटे सुबह और तीन घंटे शाम अथवा इससे भी अधिक समय तक पढ़ने लगें और इनके बचपन की मोटाई दूर होने लगे, तब इनको, अपने शरीर के विकाश के लिए, कोई नियम-बद्ध व्यायाम प्रतिदिन अवश्य करना चाहिये।

जब तक एक लड़का या लड़की को यह न मालूम हो जाय कि प्रतिदिन व्यायाम करना उसके शारीरिक और मानसिक विकास, स्वास्थ्य, बल, पौरुष, तथा योग्यता के लिए नितान्त आवश्यक है, तब तक माता-पिता तथा घर के अन्य गुरुजनों

और स्कूल के अध्यापकों को अपने लड़के-लड़कियों से नियम-पूर्वक व्यायाम का अभ्यास कराना चाहिए।

व्यायाम के महत्त्व-पूर्ण प्रश्न को विद्यार्थियों ही की इच्छा और विचार पर छोड़ना उचित न होगा—विशेष रूप से इस समय, जब कि हमारी भावी संतान हमारे पूर्वजों की अपेक्षा दिन-प्रति-दिन उत्साह, बल और दीर्घायु में हीन होती चली जाती मालूम होती है। इस समय हमारे लिए यह अति आवश्यक है कि हम इस बढ़ते हुए जातीय-पतन के रोकने के लिए जल्द-से-जल्द कुछ साधन ग्रहण करें। अब हमको इस सम्बन्ध में तनिक भी लापरवाही न करनी चाहिए।

"वास्तव में स्वास्थ्य, जीवन के लिए परमावश्यक प्रारंभिक बात है। स्वास्थ्य एक ऐसा विषय है जिसकी शिक्षा नहीं दी जा सकती। सिद्धान्तों की शिक्षा ग्रहण करने की अपेक्षा बालक, उन कार्यों के करने की शिक्षा से जिन पर स्वास्थ्य निर्भर रहता है, स्वस्थ्य जीवन बिताने की आदतें बहुत शीघ्र डाल लेते हैं। अगर वे योंही छोड़ दिये जायँ तो वे अपने आप इस प्रकार के कार्यों को न करेंगे। स्वस्थ्य जीवन की शिक्षा उन्हें दी जानी आवश्यक है। नैमित्तिक रूप से उन्हें कुछ ऐसे ही कार्य करने की आवश्यकता है। आरंभ ही से स्कूलों में प्रति दिन के कार्य-क्रम में स्वास्थ्य की शिक्षा और व्यवहारिक ज्ञान सम्मिलित रहना चाहिये। बालक के हृदय में केवल अपने साथियों, अपने स्कूल और अपने घर के प्रति ही कर्त्तव्य का ज्ञान न उत्पन्न कराना चाहिये बल्कि अपने देश के स्वास्थ्य-सुख का भी ज्ञान करा देना आवश्यक है।"*

* "हैण्डबुक आफ़ सजेशन्स फ़ार टीचर्स" (१९२७—पृष्ठ ४२१—बोर्ड आफ़ एड्केशन, इंगलैण्ड)

व्यायाम के मूलतत्व

प्रत्येक मनुष्य को शरीर के उन चार मुख्य अंगों को विकसित करने और बलवान बनाने का प्रयत्न करना चाहिए, जिनके उचित रूप से काम करने पर सम्पूर्ण स्वास्थ्य निर्भर है। यह बात अनुभव द्वारा ज्ञात हो चुकी है कि यदि सूर्य-नमस्कार-व्यायाम विधि-पूर्वक तथा वैज्ञानिक रूप से किया जाय, तो इससे ये चारों मुख्य अंग पूर्ण रूप से विकसित होते हैं और रोग अथवा रोग के मूल-कारण का मुक़ाबिला करने के लिए समर्थ होते हैं। ये चार अंग निम्न लिखित हैं—

(१) पेट और अंतड़ियां—अधिकतर मनुष्य पेट और अंतड़ियों के विकारों ही से रोगी होते हैं। इनके मुख्य विकार अजीर्ण (बदहज़मी) और क़ब्ज़ हैं, जिनसे जिगर के रोग, आम-बात, बवासीर और बहु-मूत्र आदि रोग भी उत्पन्न होते हैं।

(२) दिल और फेंफड़े—ज़ुकाम, खांसी, दमा, क्षयीरोग, दिल की धड़कन इत्यादि—ये कुछ रोग दिल और फेंफड़ों के विकार के लक्षण हैं।

(३) दिमाग़—दिमाग़ के विकार के लक्षण सिर-दर्द, पित्त-विकार का सिर-दर्द, आधासीसी और पागलपन आदि रोगों के रूप में प्रकट होते हैं।

(४) रीढ़—धड़ से नीचे का फ़ालिज, हराममग़ज़ की सूजन, हराममग़ज़ का कड़ापन।

मानव शक्ति और स्वास्थ्य का रहस्य अंतड़ियों की क्रियाओं पर निर्भर है। अंतड़ियों की क्रियाएं ही शरीर के अंग-प्रत्यंगों में शक्ति देती हैं। शरीर के पुट्ठे ही मनुष्य को उतना बलशील बनाते हैं जितनी कि उनके पीछे छिपी हुई प्रधान शक्ति! व्यायाम से

साधारण स्वास्थ्य ही नहीं सुधरता बल्कि उससे अंतड़ियों के केन्द्रों को भी उत्तेजना मिलती है।

हमारे हिन्दुस्तान देश में और देशों की अपेक्षा पागल होने की बीमारी बहुत ही कम है। परन्तु हमारे यहाँ ऐसे मनुष्यों की संख्या बहुत है, जो असमय ही में उपरोक्त पहिले दो विकारों के शिकार बन जाते हैं और ये विकार विशेष रूप से उन लोगों को अधिक होते हैं, जो पढ़े-लिखे कहलाते हैं। यह माना जाता है कि बुरा अथवा अधिक भोजन करना यहाँ की भयंकर मृत्यु-संख्या के अनेक कारणों में से एक कारण है। परन्तु यह भी मानना पड़ेगा कि उपयुक्त शारीरिक व्यायाम का अभाव ही शायद इस मृत्यु-संख्या का प्रधान कारण है। इसलिए, यह बात स्पष्ट है कि अगर किसी को स्वास्थ्य संचय करना तथा दीर्घायु प्राप्त करना है, तो उसके लिए सूर्य-नमस्कार जैसी किसी वैज्ञानिक व्यायाम प्रणाली की बड़ी आवश्यकता है।

दूसरा प्रकरण

अन्य व्यायाम-पद्धतियों की त्रुटियां

यह एक मानी हुई बात है कि हर तरह के खेल में चाहे वह पूर्व देश का हो अथवा पश्चिम देश का, एक अथवा एक से अधिक साथियों की आवश्यकता होती है। हिन्दुस्तान के सब से बड़े खेल, कुश्ती लड़ने में भी एक साथी की आवश्यकता होती है। दूसरे बहुत से खेलों में या तो साथियों की या खेल के सामान की ज़रूरत होती है। मामूली से मामूली व्यायाम में भी कुछ-न-कुछ सामान की ज़रूरत पड़ती रही है।

हिन्दुस्तानी मुग्दर के व्यायाम में भी बिना मुग्दर के काम नहीं चल सकता। सवारी के व्यायाम के लिए घोड़े अथवा साइकिल की आवश्यकता पड़ती है। तैरने के लिए जल की आवश्यकता है। पैदल हवा खाने के लिए, यद्यपि किसी सामान अथवा किसी साथी की आवश्यकता नहीं है, परन्तु इसके लिए समय बहुत चाहिए। आठ या दस मील का पैदल चलना साधारणत: दो या ढाई घंटे से कम समय में नहीं हो सकता और इतना समय तब लगेगा, जब १५ या २० मिनट फ़ी मील की चाल से चला जायगा। इस सब के अलावा जो व्यायाम घर से बाहर होता है, उसके लिए उपयुक्त समय की भी आवश्यकता होती है।

किसी भी खेलकूद के लिये अनुकूल स्थान की आवश्यकता होती है और अनुकूल स्थान सदैव प्राप्त भी नहीं हो सकता। बम्बई और पूना इत्यादि बड़े शहरों में संपूर्ण स्कूल और कालेजों के विद्यार्थियों के खेलकूद के लिए आवश्यक स्थान दुर्लभ हैं। उदाहरणार्थ पूने में केवल म्यूनिसिपल स्कूलों में पढ़ने वाले ९ या १० हज़ार विद्यार्थी हैं, किन्तु उनके लिए केवल ४ स्थान हैं, जहां वे खेलकूद सकते हैं और प्रत्येक खेलकूद के स्थान में अधिक-से-अधिक दो या तीन सौ विद्यार्थी खेल सकते हैं।

जिस व्यायाम को लगन के साथ किया जावे, उससे शरीर के बाहरी और भीतरी अंगों ही को विकसित न होना चाहिए, किन्तु उससे मानसिक तथा आध्यात्मिक उन्नति भी होनी चाहिए। इस प्रकार के व्यायाम को विश्व-व्यापी तथा सर्व-प्रिय बनाने के लिए किसी साज-सामान की आवश्यकता न होनी चाहिए; ऐसा व्यायाम करने में भी आसान होना चाहिए, इसके करने में समय भी कम लगना चाहिए; और वह इस प्रकार का होना चाहिए कि उसको कोई भी किसी भी स्थान पर कर सके और उसके करने में किसी साथी की भी आवश्यकता न पड़े।

तीसरा प्रकरण

सर्वोत्तम व्यायाम-पद्धति

दूसरे प्रकरण की समस्त त्रुटियों और कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए और अन्य सभी प्रकार की व्यायाम-शैलियों का अति दिवस तक अनुशीलन करने के उपरान्त हमें यह ज्ञात हुआ है कि सूर्य-नमस्कार सर्वोत्तम व्यायाम-पद्धति है। हमने इस व्यायाम से बड़ा लाभ उठाया है। इसलिए, हमारा यह दृढ़ता-पूर्वक कहना है कि आठ वर्ष से अधिक अवस्था के सभी लड़के लड़कियों और प्रौढ़ अवस्था के सभी स्त्री-पुरुषों को यह व्यायाम नियम पूर्वक तथा निरन्तर रूप से करना चाहिए।

जिन मनुष्यों के हृदय और फेंफड़े दुर्बल हैं, उनकी तत्सम्बन्धी सब आपत्तियाँ सूर्य-नमस्कार को बीज-मंत्र के साथ उचित रूप से करने से सदा के लिए दूर हो जायँगी और सूर्य-नमस्कार से पेट, आँत और स्नायु-केन्द्र भी स्वाभाविक रूप में अपना अपना कार्य करने लगेंगे और रक्त को शुद्ध करेंगे।

बच्चे, चाहे वे लड़के हों अथवा लड़कियाँ, अपनी आठ वर्ष तक की अवस्था तक साधारणतः इतने चंचल होते हैं कि वे अपने शरीर के समस्त अङ्गों को पूर्ण स्वस्थावस्था में रखते हैं और उनको उनके स्वभावानुकूल संचालित करते रहते हैं। परन्तु आठ वर्ष की अवस्था के अनन्तर उनको किसी निश्चित तथा नियमित व्यायाम-पद्धति की आवश्यकता होती है। इसके लिए प्रत्येक

मनुष्य को जाति अथवा धर्म का कुछ भी विचार न करके, उनसे सूर्य-नमस्कार व्यायाम कराना चाहिए।

जिन बच्चों की अवस्था आठ से बारह वर्ष की है, उनको प्रतिदिन २५ से ५० तक सूर्य-नमस्कार करना चाहिये और जो लड़के अथवा लड़कियाँ बारह से सोलह वर्ष के हैं, उनको साधारणतः ५० से १५० तक और जो पुरुष अथवा स्त्रियाँ सोलह वर्ष से अधिक अवस्था के हैं, उनको धीरे धीरे बढ़ाकर ३०० सूर्य नमस्कार प्रतिदिन करनी चाहिए। यदि इस शैली का अनुगमन धार्मिक तथा निरन्तर रूप से किया जावे, तो इसको करनेवाला सब प्रकार के ऐसे रोगों से, जो रोके जा सकते हैं, बच सकता है, और जब तक वह इसको करता रहेगा, तब तक वह मन और शरीर से हर प्रकार के कार्य के लिए योग्य बना रहेगा।

कुछ महीनों तक प्रतिदिन एक हजार नमस्कार करना और फिर २५ नमस्कार पर आजाना अथवा उनको बिल्कुल ही त्याग देना, यह नियम वास्तव में हानिकारक है। यह उसी प्रकार मूर्खतापूर्ण तथा भयंकर बात है, जिस प्रकार कि पहिले साधारण रूप से दिन में दो अथवा तीन बार भोजन करना और उसके पश्चात् उसका पूर्णरूप से त्याग कर देना। जिस प्रकार आहार-विहार के लिए नियम हैं, उसी प्रकार व्यायाम के लिए भी नियम हैं। इसलिए, जो व्यायाम लाभदायक हो, उसको प्रतिदिन समय पर निरन्तर रूप से अपनी शक्ति के अनुकूल करना चाहिये।

इसलिए, मनोवाञ्छित फल की प्राप्ति के लिए सूर्य-नमस्कार को नियमित तथा वैज्ञानिक रूप से करना आवश्यक है। ये नट की कलाबाजियाँ नहीं हैं, प्रत्युत, इनको इस प्रकार करना चाहिए

जिससे शरीर का क़रीब क़रीब प्रत्येक अङ्ग विकसित और बलवान होवे।

जो शब्द, संसार के प्रसिद्ध व्यायाम-शास्त्र के विद्वान श्री जे० पी० मुलर ने अपनी, 'माई सिस्टम' नाम की पुस्तक में दिये हैं, उन्हीं को हम यहाँ सूर्य-नमस्कार के सम्बन्ध में भी दुहराना उचित समझते हैं—

"चाहे आप दुर्बल हों अथवा सबल, युवा हों अथवा वृद्ध मेरा आपके लिए यह परामर्श है कि इस व्यायाम को अभी आरम्भ कर दीजिए और कल नहीं, किन्तु आज ही। परन्तु यह ध्यान रहे कि यदि आपको शारीरिक व्यायाम का अभ्यास नहीं है, तो इसको आरम्भ में अधिक न कर बैठिये।

"यह नित्य प्रतिदिन करने की चीज़ है। यदि इसको प्रतिदिन केवल थोड़ा थोड़ा किया जाय, तो इससे बहुत लाभ होगा। इस लिए व्यायाम का करना एक प्रकार की आदत तथा आवश्यकता होजानी चाहिए। सप्ताह में दो बार एक घंटा प्रतिदिन जमनास्टिक कर लेना अथवा सप्ताह के अंत में एक बार कुछ घंटों तक किसी खेल को खेल लेना आदि व्यायाम, दैनिक व्यायाम के साथ, चाहे कितने ही लाभदायक क्यों न हों, परन्तु ये दैनिक व्यायाम के स्थान पर काम नहीं दे सकते"।

यह हमारा विश्वास है कि जो मनुष्य इस सूर्य-नमस्कार-व्यायाम को हमारे आदेशानुसार करेंगे, उनको अमूल्य फल प्राप्त होगा।

चौथा प्रकरण

सूर्य-नमस्कार करने की विधि

सूर्य-नमस्कार का अर्थ स्वास्थ्य, सामर्थ्य और दीर्घायु के लिये सूर्य की पूजा करना है।

सूर्य-नमस्कार शरीर के इन आठ अंगों से सम्बन्ध रखती है—(१) माथा (२) सीना (३) टांग और पैर (४) बाँह और हाथ (५) घुटने (६) दृष्टि (निगाह) (७) वागेन्द्रिय (बोलने वाली इन्द्रिय) और (८) मन तथा विचार-बल। इस प्रकार का नमस्कार साष्टांग-नमस्कार* कहलाता है।

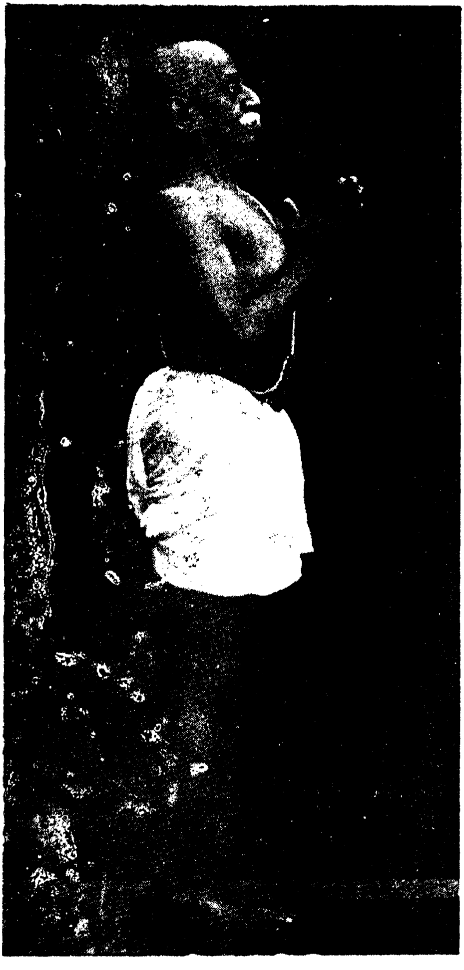
सूर्य-नमस्कार करने की वह प्रतिष्ठित विधि, जिसका अनुशीलन हमारे सुयोग्य पिता, भूतपूर्व चीफ़, रियासत औंध ने किया था, निम्नांकित है। आपने इन नमस्कारों को ५५ वर्ष तक किया था और हम भी इसी विधि के अनुसार इन्हें कर रहे हैं—

सूर्य-नमस्कार करने के लिए केवल ७ फ़ुट लम्बी और २ फ़ुट चौड़ी ऐसी ज़मीन की आवश्यकता है, जिस पर या तो पत्थर का फ़र्श हो या ईंटों का खरंजा, या उसका धरातल इसी प्रकार की किसी और खुरखुरी चीज़ का बना हुआ हो और वह समथल हो। इसको करते समय जितने कम कपड़े हो सकें, उतने कम कपड़े पहिनना चाहिए। क्योंकि अधिक कपड़े पहिनने

---

* उरसा शिरसा दृष्ट्या वचसा मनसा तथा।
पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टांग उच्यते ॥

पहिली सूरत



पृष्ठ १३ देखिए

से एक तो शरीर के अंगों को स्वतंत्रता-पूर्वक हिलाने-डुलाने में बाधा पड़ेगी और दूसरे त्वचा (खाल) की कोमलता बढ़ जायगी, जिससे बाद को खांसी-जुकाम आदि दूसरे रोग उत्पन्न होंगे।

सूर्य-नमस्कारों को सूर्योदय से पहिले खाली पेट करना अति उचित है। प्रातःकाल ५ बजे सो कर उठना चाहिए और शौच तथा स्नानादि की नित्य-क्रिया से निवृत्त होकर, जितने कम हो सकें, उतने कम कपड़े पहिनकर सूर्य-नमस्कार का करना आरम्भ कर देना चाहिए और सूर्योदय होने से पांच मिनट पहिले ही उसको समाप्त कर देना चाहिए, जिससे उस समय निकलते हुए सूर्य्य की किरणों का पान कर लिया जावे। [यदि आप संध्या और प्राणायाम इत्यादि करते हों, तो ये सब सूर्य-नमस्कार करने के उपरान्त ही किये जावें]

प्रत्येक व्यायाम को केवल इतना करना चाहिए कि यदि उसके करने के पश्चात् क़रीब पांच या दस मिनट तक आराम कर लिया जावे, तो शरीर में नित्य के अपने कर्तव्य को करने के लिए नवीनता और आनन्द आजावे। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ यह है कि एक व्यक्ति को अपनी शक्ति के अनुसार व्यायाम करना चाहिए। यह नियम सूर्य-नमस्कार के लिए तो विशेष रूप से लागू है।

पहली सूरत—२२ वर्ग इंच के एक ऊनी रेशमी अथवा सूती कपड़े के एक टुकड़े को फ़र्श पर बिछाओ और पूर्व की ओर मुख करके खड़े होकर दोनों पैरों को मिलाओ और पैरों के अँगूठों को कपड़े के किनारे से छुआओ। जिस प्रकार हाथ जोड़ते हैं, उसी प्रकार दोनों हाथों को सीने के सामने जोड़ो और एक दूसरे को दबाओ। सीने को फैला दो और पेट को अन्दर ले जाओ। खूब गहरा सांस भरो और भुज-दंडों अथवा बांहों के

ऊपरी भाग को कड़ा करो। अपने सामने किसी अपने इष्टदेव अथवा किसी और चिन्ह की ओर देखो। सिर, गर्दन और शरीर को लम्बवत एक सीध में रक्खो।

दसों सूरतें, जिनसे केवल एक नमस्कार पूरी होती है, बिना रुकावट के मुंह बन्द किए और केवल नाक से सांस लेते हुए एक के बाद दूसरी की जानी चाहिये।

अपने सन्मुख दीवाल पर सूर्य अथवा अपने इष्टदेव की प्रतिमा अथवा चित्र लटकालो। यदि तुम्हारा कोई इष्टदेव अथवा पूजनीय पदार्थ नहीं है, तो एक मोटे काग़ज़ पर एक तारे अथवा वृत्त का अच्छा चमकता हुआ रंगीन चित्र बनाकर अपने सामने लटकालो, जिसको देखने से तुम धीरे धीरे एकाग्रचित्त रहने की शक्ति प्राप्त कर लोगे।

दूसरी सूरत-अब सामने झुको और हाथों की हथेलियों को ज़मीन पर रख दो। हाथों की उंगलियाँ एक दूसरे से सटी रहें और माथे को घुटनों से छुआओ अथवा छुआने की कोशिश करो, परन्तु घुटाने न मुड़ने पावें।* हाथों को इस प्रकार रक्खा जावे कि वे या तो कपड़े के इधर उधर के दोनों किनारों के

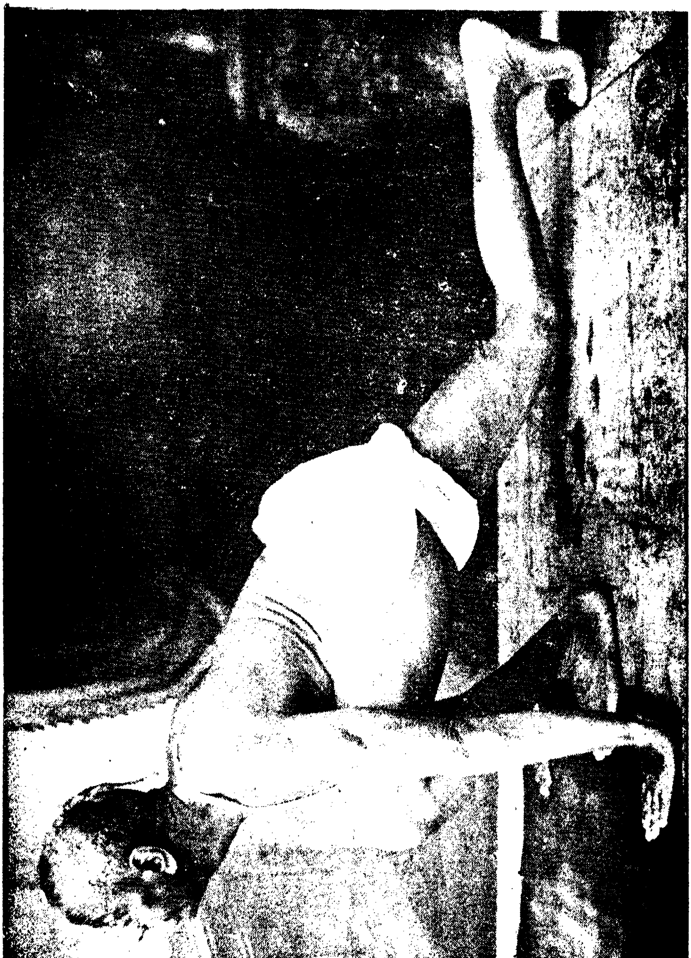
* बहुत आदमियों को शुरू में ऐसा करने में बड़ी कठिनाई मालूम होगी। यदि वे हाथों की उंगलियों से पैरों के अँगूठों ही को छूसकें, तो शुरू में इतना ही काफ़ी होगा। परन्तु इस बात के लिए कोशिश करते रहना चाहिए कि हाथों की हथेलियाँ पूरे तौर से ज़मीन पर रक्खी जा सकें और घुटने बिल्कुल तने रहें। पहिले हथेलियों को ज़मीन पर रक्खा जावे और उसके बाद घुटनों को सीधा किया जावे। यह स्मरण रखना चाहिए कि सूर्य-नमस्कार करने का पूरा लाभ तभी प्राप्त हो सकता है जब इस सूरत को ठीक तौर से कर लिया जावेगा।

दूसरी सूरत



पृष्ठ १४ देखिए

तीसरी सूरत



पृष्ठ १५ देखिए

चौथी सूरत



पृष्ठ १५ देखिए

पाँचवीं सूरत



पृष्ठ १५ देखिए

समानान्तर हों अथवा अन्दर की ओर २२ अंश का कोण बनावें। कुछ लोगों की राय यह भी है कि यह कोण ४५ अंश का होना चाहिए और कुछ लोग हाथों को इस प्रकार रखना पसंद करते हैं कि दोनों हाथों की उंगलियाँ घूम कर एक दूसरे के आमने-सामने हो जावें। खैर, यह कोण कैसा ही हो, परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि अँगूठों के नीचे की गद्दियाँ पैरों के अँगूठों के साथ एक पंक्ति में हों। जिस समय तुम झुको और माथे को घुटनों से छुआने की कोशिश करो, उस समय तुमको कुछ थोड़ा-सा साँस बाहर निकाल देना चाहिए।

तीसरी सूरत—एक टांग को पीछे ले जाओ *। परन्तु ऐसा करने में बांहें कुहनी पर से मुड़ने न पावें। पैर को इतना पीछे ले जाया जावे कि बांहें कंधे से कलाई तक ठीक लम्ब-रूप में रहें, अर्थात् बिल्कुल सीधी रहें। सिर को ऊँचा करके यथा-शक्ति पीछे देखने की कोशिश करो।

चौथी सूरत—दूसरी टांग को भी पीछे ले जाओ। दोनों पैरों के टखनों और अँगूठों को मिला कर रक्खो, बांहों को सीधा रक्खो शरीर का सारा भार पैरों की अंगुलियों और हथेलियों पर सम्हालते हुए नितम्ब, कमर और सिर के पिछले हिस्से को सीध में करो और सांस भरे रहो।

पाँचवीं सूरत—घुटनों को ज़मीन पर टेक दो और ठोड़ी को सीने से छुआओ अथवा छुआने की कोशिश करो। नाक द्वारा पूर्ण रूप से सांस बाहर निकाल दो और जितना हो सके, उतना

---

* पहिली आवृत्ति में उसी पैर को, जो आरम्भ में पीछे गया था, पीछे ले जाते रहना चाहिए और दूसरी आवृत्ति में दूसरे को। इसी प्रकार और आवृत्तियों में भी करना चाहिए।

पेट को अन्दर को खींचो। कूल्हों को ऊपर को उठाए रक्खो और माथे और सीने को कपड़े से छुआओ।

छठवीं सूरत--हाथों को सीधा करते हुए सिर को उठाओ और धीरे धीरे गहरा सांस लो और सीने को आगे की ओर इधर-उधर फैलाओ। इसके बाद गर्दन को पीछे की ओर झुका-कर (इतनी झुकाई जावे, जितनी वह झुकाई जासके) छत अथवा आकाश की ओर देखो। घुटने ज़मीन ही पर टिके रहें।

सतवीं सूरत--चौथी सूरत में आजाओ। इसके बाद ज़मीन से एड़ियों को छुआओ। सिर अन्दर की ओर झुका रहे और पेट अन्दर को खिंचा रहे।

आठवीं सूरत--इसमें तीसरी और दूसरी सूरतों को करते हुए पहिली सूरत में आजाते हैं। पहिली सूरत में आने के लिए सबसे पहिले एक पैर को एक झटके में उठाकर दोनों हथेलियों की गद्दियों के साथ एक रेखा में आगे रक्खो और तीसरी सूरत की भांति गर्दन को पीछे की ओर झुका कर देखो। जब ऐसा करो, तब मुड़े हुए पैर की जांघ पेट को दबावे और दूसरी टांग का घुटना ज़मीन पर टिक जावे। इसके बाद दूसरी सूरत में आजाओ और फिर पहिली सूरत में।

नवीं सूरत--सांस रोक कर दूसरी सूरत में आजाओ और केवल नाक के रास्ते से श्वास को बिलकुल बाहर निकाल दो।

दसवीं सूरत--केवल नाक के द्वारा गहरी सांस खींच कर पहिली सूरत में आजाओ। इस बात का खास तौर पर ध्यान रक्खो कि घुटने सीधे रहें। इस प्रकार एक नमस्कार पूरी होती है।

अगले मंत्र का उच्चारण करो। मुँह को बंद रक्खो। नाक के

छठवीं सूरत



पृष्ठ १६ देखिए

सातवीं सूरत



पृष्ठ १६ देखिए

आठवीं सूरत



पृष्ठ १६ देखिए

नवीं सूरत



पृष्ठ १६ देखिए

द्वारा श्वास भीतर खींचो। होठ बंद रक्खो और केवल नाक से श्वास लेते हुए दसों सूरतों को फिर से दुहरा जाओ।

सूर्य-नमस्कारों को आरम्भ में सदा धीरे धीरे करना चाहिए, जिससे तुमको यह ज्ञात हो जावे कि शरीर के किस अंग पर जोर पड़ रहा है। इस प्रकार करने से तुमको यह ज्ञात हो जायगा कि सूर्य-नमस्कार में शरीर के प्रत्येक अंग पर अलग अलग जोर पड़ता है।

पांचवां प्रकरण

विशेष अवस्था में स्त्रियों के लिए आवश्यक बातें

हम विशेष रूप से स्त्रियों को, चाहे वह युवती हों या वृद्धा, सेविका हों या स्वामिनी, गर्भवती हों या योंही, दूध पीते बच्चे की माता हों या नहीं, सूर्य-नमस्कार करने का आग्रह करते हैं। व्यक्तिगत अनुभव पर निर्भर, विशेष अवस्थावाली स्त्रियों के लिये नीचे लिखी बातें उपयोगी सिद्ध होंगी—

(१) मासिक-धर्म आरंभ होते ही उसके समाप्त होने तक (जिसमें प्रायः ४ से ६ दिन तक लग जाते हैं) सूर्य-नमस्कार बंद रखना चाहिये। मासिक-धर्म की समाप्ति के साथ ही सूर्य-नमस्कार फिर आरंभ कर देना चाहिये।

(२) यदि स्त्री गर्भवती हो जाय तो उसे गर्भावस्था के चौथे मास तक सूर्यनमस्कार नियमित रूप से करते रहना चाहिये। पांचवें मास से ७ वें मास तक सूर्य-नमस्कार में कुछ हेर-फेर कर देना चाहिये अर्थात् ज़मीन पर लेटने के बदले खड़े होने की सूरत के बाद उसे घुटने के बल बैठ अन्य हरकतें करना चाहिये। ऐसी दशा में उसका सीना ज़मीन से छूता हुआ रहे या न रहे इसकी कोई आवश्यकता नहीं। आठवें महीने के आरंभ से प्रसव होने तक उसे अपनी सुविधानुसार बैठ कर केवल मंत्रों का उच्चारण बिना किसी हरकत के उच्चस्वर से और शुद्ध शुद्ध कई बार करना चाहिये।

(३) सूर्य नमस्कार करना बंद कर देने पर भी किसी भी गर्भवती स्त्री को आलस्य से बैठे या लेटे रहना उचित नहीं। उसे हल्के और मनबहलाव के गार्हस्थ काम, चहल-क़दमी, बग़ीचे का काम इत्यादि प्रसव होने तक करते रहना चाहिये।

(४) प्रसव होने के २ या ३ मास बाद तक स्त्री को सूर्य-नमस्कार बन्द रखना उचित है। इसके पश्चात् उसे धीरे धीरे सूर्य नमस्कार करना इस प्रकार आरम्भ कर देना चाहिये ताकि ४ सप्ताह तक उसकी संख्या पूर्ववत् हो जाय।

(५) यदि बीमारी या अन्य शारीरिक कष्टों के अतिरिक्त और किसी कारण से किसी बालिका या स्त्री को सूर्य-नमस्कार न करने दी जाय या वह स्वतः न कर सके, तो उसे प्रतिदिन पाँच, सात या नौ बार लगन से मंत्रों ही को उच्च स्वर से पढ़ना चाहिये।

(६) जब स्त्री उक्त (नं० ५ में दिये हुए) बंधनों से मुक्त हो जाय, तो उसे वे ही नियम पालन करना उचित है जो सूर्य-नमस्कार व्यायाम पुरुषों के लिये निर्धारित किये गये हैं।

छठवां प्रकरण

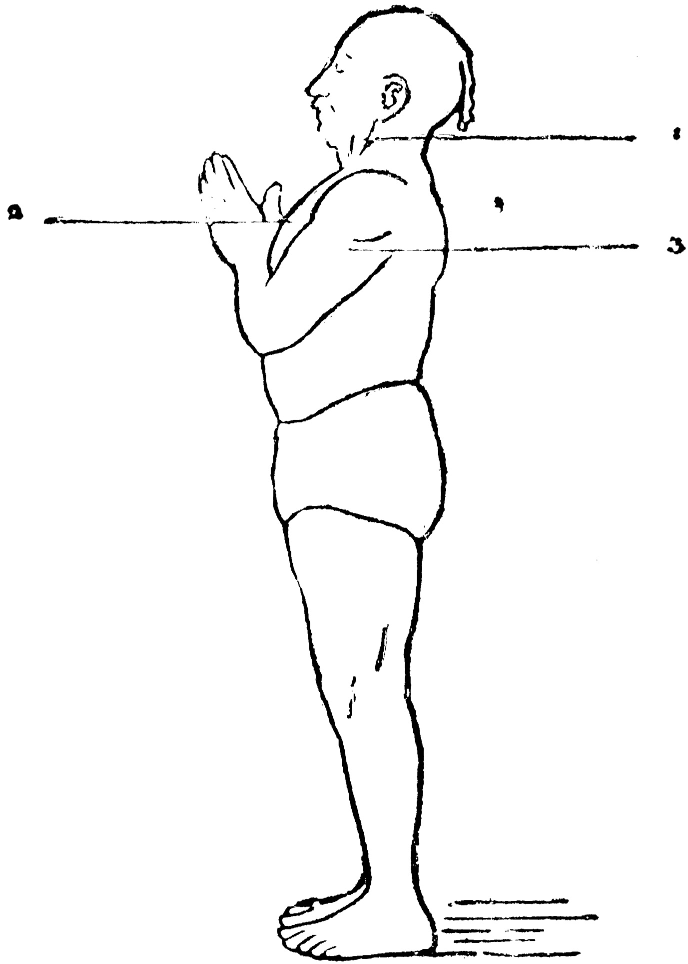
सूर्य-नमस्कार और शरीर का विकास

अब हमको यह बतलाना है कि सूर्य-नमस्कार की दस सूरतों में से किन सूरतों में शरीर के किन अंगों पर विशेष ज़ोर पड़ता है तथा कौन पुट्ठे संचालित होते हैं।

पहिली सूरत—इसमें किसी विशेष पुट्ठे पर ज़ोर नहीं पड़ता है। इसमें केवल गर्दन और सीने को कुछ कड़ा करना पड़ता है, जिससे सिर, गर्दन और धड़ क़रीब क़रीब लम्बरूप हो जावें। जिन मनुष्यों के कंधे गोल हैं अथवा जिनकी पीठ झुकी हुई है, उनको इस सूरत में कुछ सुहाता-सा ज़ोर पड़ेगा। क्योंकि इस सूरत में गहरा सांस लेने के कारण फेफड़े फूलते हैं, जिससे सीने पर कुछ ज़ोर पड़ना भी सम्भव है। इसमें बांहों के ऊपरी तथा नीचे के भागों, कलाइयों और उंगलियों को भी कड़ा करना पड़ता है। यदि इन अंगों को ढीला रक्खा जायगा, तो कोई लाभ न होगा। ख़ूब गहरा सांस लो, सांस भरकर उसको रोको, और सीधे और कड़े होकर खड़े हो। बस ये बातें इस सूरत में करनी आवश्यक हैं। इस सूरत में जिन पुट्ठों पर कुछ ज़ोर पड़ता है वे ये हैं—(१) वे दो पुट्ठे, जो गर्दन के इधर-उधर होते हैं और जो हँसली से कान तक जाते हैं (२) सीने के नीचे और ऊपर के पुट्ठे (३) भुज-दंडों अर्थात् भुज-दंडों के बाहरी पुट्ठे।

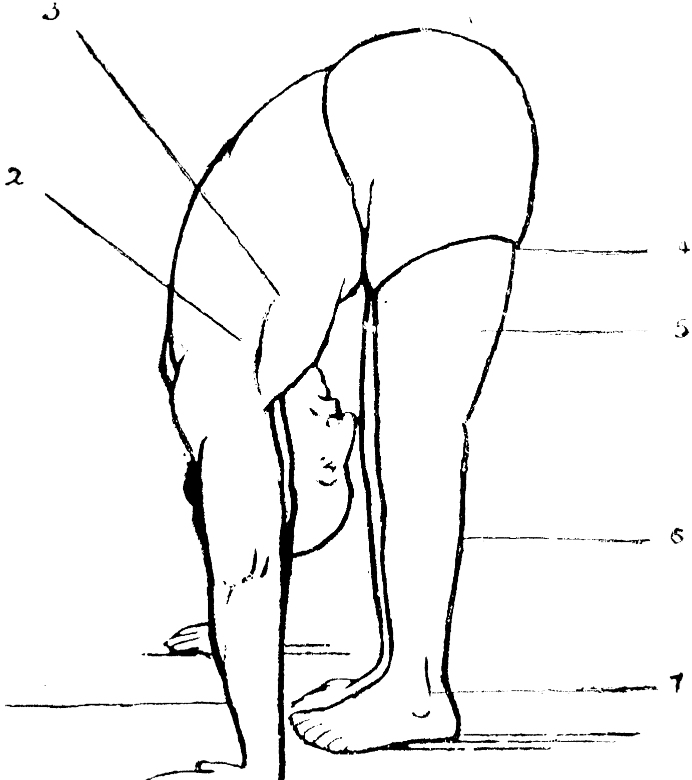
दूसरी सूरत—इस सूरत में कुछ थोड़ा-सा सांस निकालते

पहिली मूरत



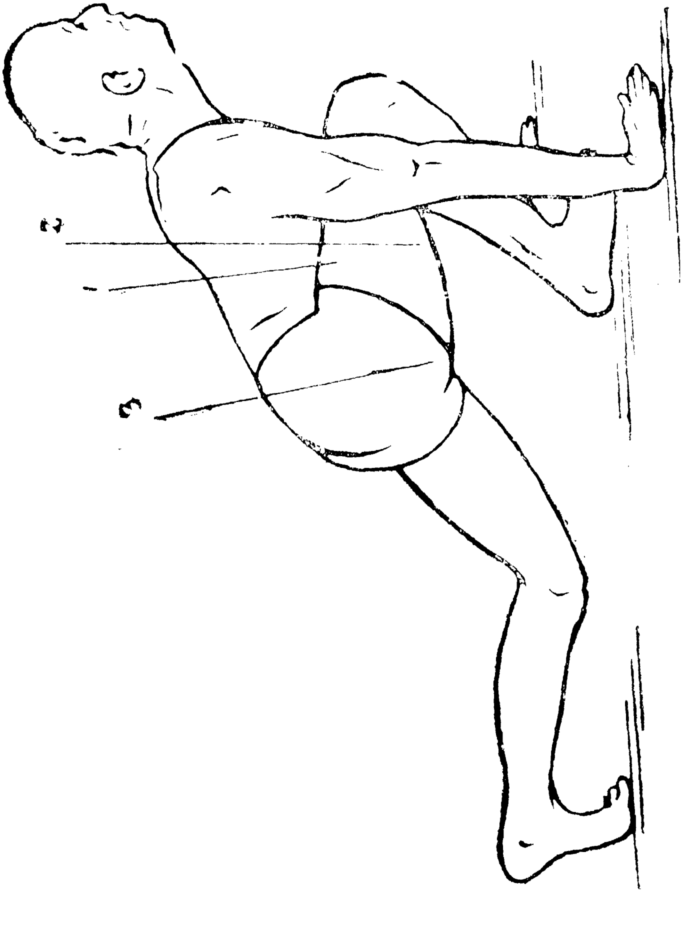
पृष्ठ २० देखिए

दूसरी सूरत



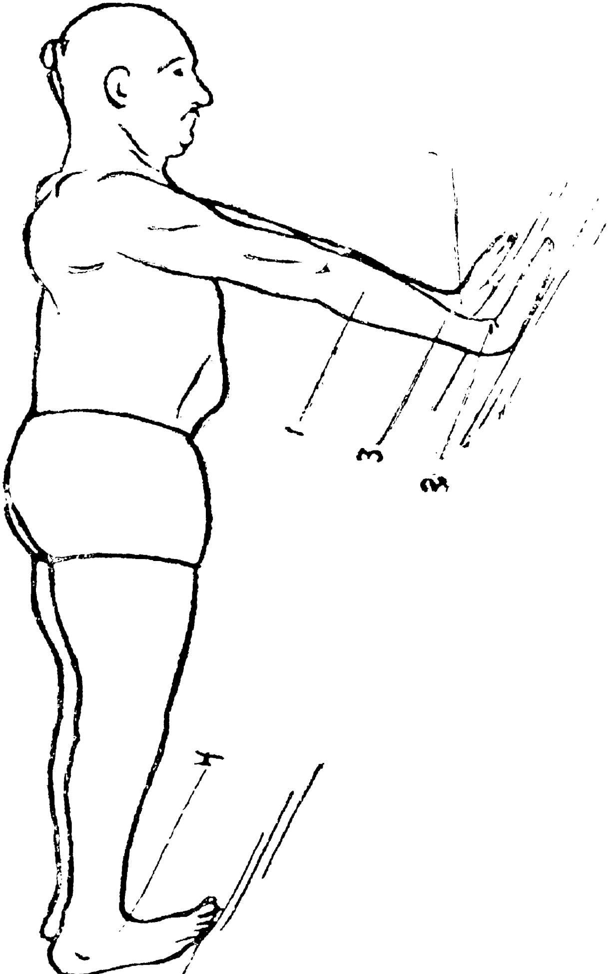
पृष्ठ २१ देखिए

तीसरी सूरत



पृष्ठ २२ देखिए

चौथी सूरत



पृष्ठ २२ देखिए

हुए हाथों की हथेलियों को एक दूसरे से २० अथवा २२ इंच के फ़ासले पर इस प्रकार रखते हैं कि वे पैरों के अँगूठों के साथ एक रेखा में रहें और ऐसा करने के समय पैरों के घुटने न मुड़ने पावें। यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि ये इस प्रकार से उंगलियाँ सटा कर रक्खी हुई हथेलियाँ इसी प्रकार रक्खी रहती हैं और ये केवल उसी समय उठती हैं, जब कि नमस्कार की अन्तिम सूरत में आना होता है। तुमको इस सूरत में यह अनुभव होगा कि पिंडलियों के पुट्ठों, जंघाओं के पिछले भाग, कूल्हों, कमर और पीठ के क़रीब क़रीब सभी पुट्ठों पर ख़ूब खिचाव अथवा ज़ोर पड़ता है, जिसका अर्थ यह है कि ये अंग धीरे धीरे बलवान होते हैं और उनके विकार तथा रोग दूर होते हैं। यहां यह स्मरण रखना चाहिए कि ये उपरोक्त अंग, वे अंग हैं, जिनमें असमय ही में दुर्बलता अपना अड्डा जमा लेती है। इस सूरत में विशेष खिचाव उन पुट्ठों पर पड़ता है, जो पीठ को कंधों से मिलाये हुये हैं। इसमें भुज-दंडों के बाहरी पुट्ठों पर भी असर पड़ता है। घुटनों को सीधा रखते हुए जब हाथों की हथेलियों को कपड़े पर रखने के लिए सामने की ओर झुका जाता है, तब पेड़ू और पेट के पुट्ठों पर बहुत ज़ोर पड़ता है। जब तुम हाथों की हथेलियों को कपड़े पर टेको, उस समय तुमको यह ध्यान करना चाहिए कि हम वास्तव में स्वास्थ्य, सामर्थ्य और दीर्घायु प्राप्त कर रहे हैं। और जब तुम ऐसा ध्यान कर चुको, तब तुमको आगे बढ़ना चाहिये। इस सूरत में इन पुट्ठों पर ज़ोर पड़ता है—

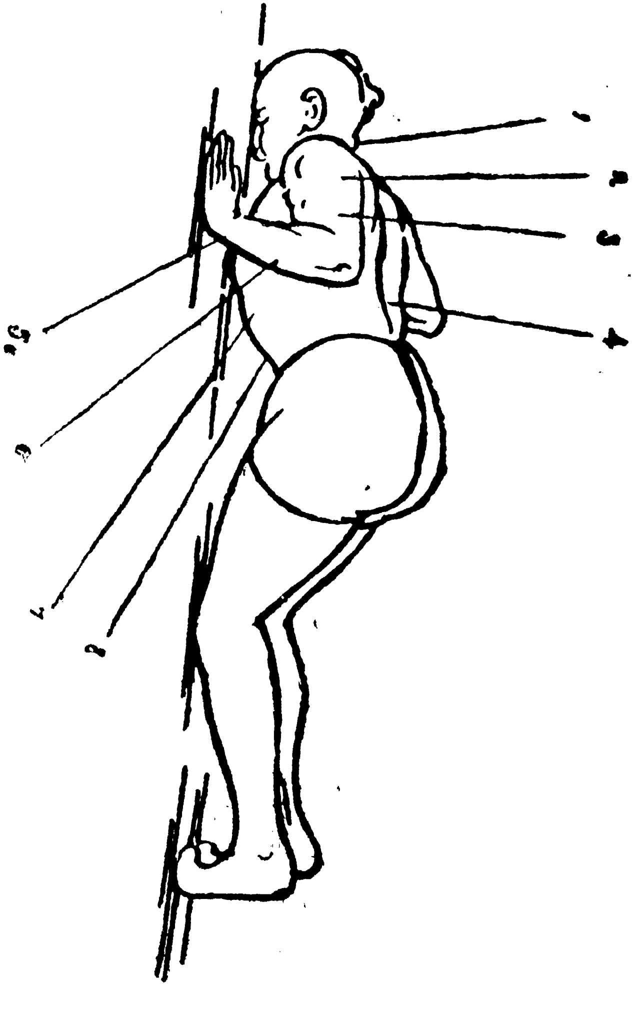
(१) बांहों के नीचे के भागों के बाहरी पुट्ठे, (२) कंधों के पीछे के पुट्ठे, (३) पसलियों के पुट्ठे, (४) चूतड़ों के पुट्ठे, (५) जंघाओं के बाहरी पुट्ठे, (६) टांगों के नीचे के भागों के बाहरी पुट्ठे, (७) टखनों के पीछे के और एड़ियों के ऊपर के पुट्ठे।

तीसरी सूरत—इस सूरत के आरम्भ और अन्त में एक ही सी क्रिया की जाती है। जब सीधे पैर को पीछे ले जाया जावे, तब बांये पैर की जंघा तिल्ली को दबावे और जब बांये पैर को पीछे किया जावे, तब सीधे पैर के जंघा जिगर को दबावे। इस दबाव में जंघाओं के नीचे के भाग पर बहुत जोर पड़ेगा। इस सूरत में पीछे फेंके हुए पैर का जंघा, पैरों के टखनों और हाथ की कलाइयों पर भी जोर पड़ता है। इस सूरत में जो पुट्ठे बलिष्ठ होते हैं, वे ये हैं—(१) जंघाओं के भीतरी पुट्ठे, (२) जंघाओं के नीचे के पुट्ठे और (३) वे पुट्ठे, जो जंघाओं को भीतर को खींचते हैं।

चौथी सूरत—इस सूरत में शरीर का सारा बोझ हथेलियों, भुजाओं और पैर की अंगुलियों पर सम्हला रहता है।

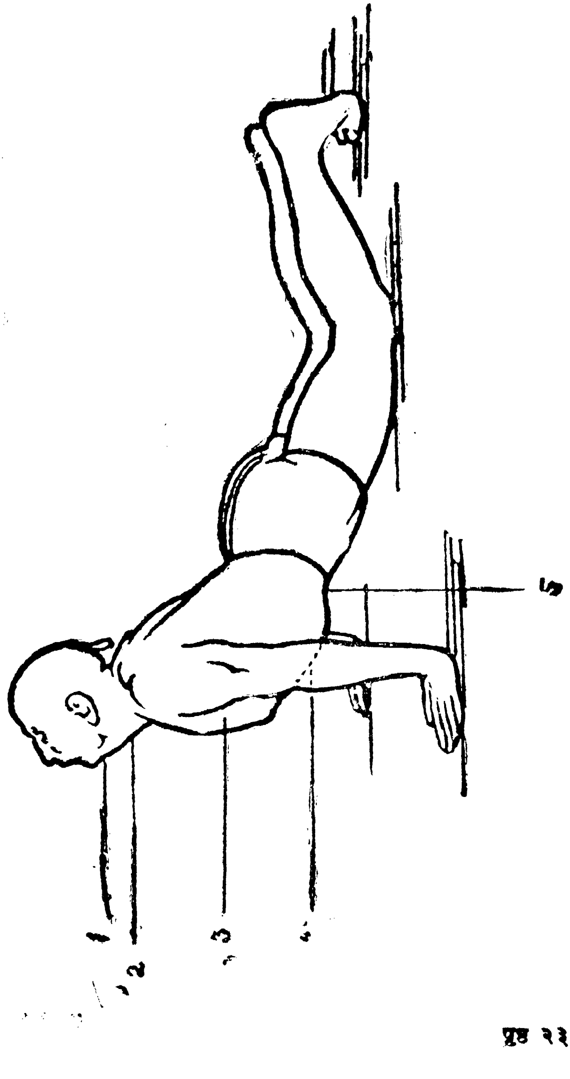
पांचवीं सूरत—जब झुको, तब सिरको इतना नीचे करो कि ठोड़ी सीने को दबाने लगे। सिर को आगे पीछे करने से गर्दन और गले (कंठ) के पुट्ठे बलिष्ट होते हैं। ज़मीन पर पड़ जाने में घुटनों से ऊपर का शरीर का सम्पूर्ण भाग हाथों, कलाइयों और बांहों के आगे के भागों पर टिका रहता है। इसलिए, इन तीनों अंगों में बल आता है। इस समय सांस को पूर्ण रूप से निकाल देते हैं। इस पड़ने की दशा में शरीर के बहुत से अंग, जैसे पैरों के अंगूठे, घुटने, हाथ, सीना और माथा जमीन को छूते हैं। परन्तु पेट जमीन को नहीं छूता, किन्तु उसको यथाशक्ति अन्दर को खींचना पड़ता है, जिसका फल यह होता है कि पेट के सब पुट्ठों पर जोर पड़ता है और वे मज़बूत होते हैं। पांचवीं सूरत में जो पुट्ठे बलिष्ठ बनते हैं, वे ये हैं—(१) बांहों के नीचे के भागों के बाहरी पुट्ठे, (२) बांहों के नीचे के भागों के बाहरी नीचे के पुट्ठे, (३) पसलियों की हड्डियों के बीच के पुट्ठे, (४) पेट के दाएं

पाँचवीं सूरत



पृष्ठ २१ देखिए

छठवीं सूरत



पृष्ठ २३ देखिये

और बाएं पुट्ठे, (५) गर्दन के पीछे का पुट्ठा, (६) कंधों के पुट्ठे, (७) भुज-दंडों के बाहरी पुट्ठे, और (८) पीठ के नीचे के पुट्ठे।

छठवां सूरत—खड़े होने की सूरत में आने के पूर्व पीठ को पीछे की ओर जितना वह झुक सके, उतना झुकाया जावे और सिर को ऊपर की ओर इतना उठाया जावे कि छत अथवा आकाश दिखाई देने लगे। इस सूरत में समस्त शरीर का बल बांहों पर रहता है। इस कारण बांहों के साधारणतः सब भाग और विशेषतः भुज-दंडों के बाहरी पुट्ठे पूर्ण रूप से विकसित होते हैं और बांहें सुन्दर, सुडौल, सुदृढ़ तथा लचीली हो जाती हैं। सीने को भी लाभ होता है। वह चौड़ा और गहरा हो जाता है। गहरा सांस लेने के कारण पेडू के पास की मज्जा (चर्बी) धीरे धीरे कम हो जाती है। सीने का लपेट बढ़ता है और कमर का लपेट कम होता है। यही बस साधारण स्वास्थ्य का एक लक्षण है। यह लक्षण इस बात का भी द्योतक है कि अब पेट के सब आन्तरिक विकार, जैसे तिल्ली और जिगर की शिकायतें और आँत के सब रोग दूर हो गये हैं। इस सूरत में भी जंघा, पीठ, गर्दन और गले के बहुत से पुट्ठे सुदृढ़ बनते हैं। सिर के आगे-पीछे आने-जाने के कारण गले के आगे के पुट्ठे और गर्दन के पीछे के पुट्ठे बहुत बलवान बनते हैं। इस सूरत के करने से कंठ के उन रोगों का जो नियमानुकूल भोजन न करने के कारण पैदा हो जाते हैं, सब भय धीरे धीरे दूर हो जाता है। और यह भी विश्वास होता है कि शायद इस सूरत से कंठमाल भी दूर हो सकती है। इस सूरत में ये पुट्ठे विकसित होते हैं—(१) ठोड़ी के नीचे का पुट्ठा, (२) टेंटुए के नीचे की ग्रंथियों के पास का पुट्ठा, (३) सीने के पुट्ठे, (४) पेट के बीच के पुट्ठे और (५) पेट के बाक़ी पुट्ठे।

सातवीं सूरत—इस सूरत में पैर, पिंडली, कूल्हे, कमर, पीठ, गर्दन तथा भुजदण्ड पर विशेष ज़ोर पड़ता है जिससे उनमें हरकत होती है और ये पुट्ठे बल प्राप्त करते हैं।

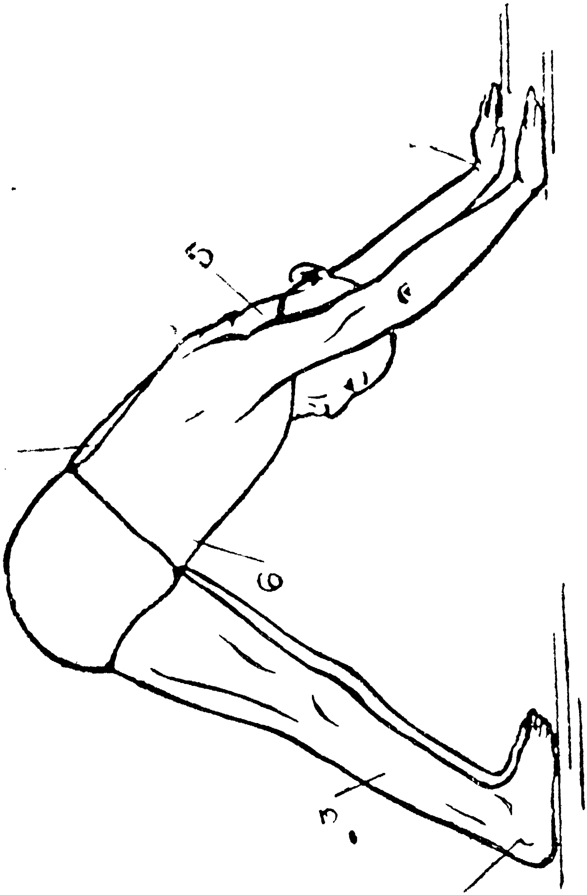
आठवीं, नवीं और दसवीं सूरत—ये सूरतें क्रमशः तीसरी, दूसरी और पहली सूरतों जैसी हैं। पैर को आगे बढ़ाते समय पेट और अन्य अंगों पर किस तरह दबाव पड़ता है, यह ऊपर तीसरी सूरत के सम्बन्ध में समझाया जा चुका है।

जब केवल एक आवृति (२५ नमस्कार) ही की जावे, तब पैरों को—एक के बाद दूसरा—आगे-पीछे उठना चाहिए, जिससे पेट के दोनों ओर, और दोनों जंघाओं पर पूर्ण रूप से ज़ोर पड़े। जब एक से अधिक आवृतियां की जावें, तब एक आवृति में केवल एक ही पैर आगे-पीछे किया जावे और दूसरी में दूसरा। बस, इसी प्रकार तीसरी तथा चौथी आदि आवृत्तियों में भी करना चाहिए।

यदि जिगर में कोई विकार हो, तो ऐसी दशा में उस समय तक, जब तक कि जिगर नीरोग न हो जावे, तब तक केवल सीधे पैर ही को आगे बढ़ाते रहना चाहिए। जिनके जिगर का रोग पैतृक है अथवा पुराना है, उनको चाहिए कि वे सदा केवल सीधे पैर ही को आगे करते रहें। इसी प्रकार वे, जिनको तिल्ली की शिकायत है—चाहे वह पैतृक है अथवा दुर्वात (मलेरिया) आदि के कारण—उनसे हमारा यह कहना है कि आप केवल बाँए पैर ही को आगे बढ़ावें। अस्तु, इस सम्बन्ध में स्वयं विचार करके चलना भी उचित है।

पेट को पिचकाकर गहरी सांस खींचकर दूसरी सूरत की हालत में आने में फेंफड़ों के निचले भाग पर दबाव पड़ने से

सातवीं सूरत



पृष्ठ २४ देखिए

विशेष लाभ होता है। इससे खींची हुई सांस फेंफड़ों के ऊपरी भाग में जाती है और उस हिस्से तक पहुँचती है जहाँ से क्षय रोग की उत्पत्ति हुआ करती है। यह खींची हुई सांस उस भाग को शुद्ध करती है और इस प्रकार क्षय रोग होने का भय दूर हो जाता है।

मेरुदण्ड (रीढ़) और मस्तिष्क मानवी शक्ति का संग्रहालय हैं। सूर्य-नमस्कार करने से रीढ़ में विशेष शक्ति आती है, जिससे शक्ति का अधिकाधिक संचय और उपयोग हो सकता है।

सूर्य-नमस्कार का विशेष गुण यह है कि इससे मेरुदण्ड का फैलाव (दूसरी, सातवीं और नवीं सूरत) तथा संकोचन (तसरी, छठवीं और आठवीं सूरत) होता है, जो किसी दूसरे प्रकार के व्यायाम में नहीं होता। अतः सूर्य-नमस्कार से पीठ के पुट्ठों को—विशेष कर मेरुदण्ड को—शक्ति मिलती है। यही प्रभाव इस व्यायाम से पेड़ू और पेट के पुट्ठों पर भी पड़ता है।

इस प्रकार सूर्य-नमस्कार केन्द्रीय मानव शक्ति (अर्थात् मेरुण्ड और मस्तिष्क) को बल देती हुई उसकी वृद्धि करती है।

अब तक यह बतलाया गया है कि शरीर के भिन्न भिन्न पुट्ठे, अंग तथा भाग किस प्रकार विकसित और बलिष्ठ किये जाते हैं। अब हमको यह देखना है कि सूर्य-नमस्कार में मन क्या महत्व-पूर्ण कार्य्य करता है।

विचार-बल का महत्व

मनुष्य के प्रत्येक कार्य्य पर मनोबल अथवा विचार-बल का ऐसा प्रभाव पड़ता है कि बिना उसकी सहायता के उसका कोई कार्य्य सन्तोष-रूप में नहीं हो सकता। अतः इस दिव्य व्यायाम-पद्धति के पालन में प्रधान विचार यह रहना चाहिए कि इन

नमस्कारों के आदि, मध्य तथा अन्त में हमारी शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार की शक्तियों का विकाश हो रहा है और ये सदा अच्छे काम में प्रवृत्त होंगी और काम आवेंगी। प्रत्येक व्यायाम के करने में इस विश्वास को रखना चाहिए कि इस व्यायाम का प्रत्येक हिलाव-डुलाव शरीर के किसी विशेष पुट्ठे अथवा अंग को अच्छा बना रहा है और उस समय सम्पूर्ण विचार-बल अर्थात् मस्तिष्क-शक्ति को उस पुट्ठे अथवा उस अंग विशेष की ओर एकाग्र कर देना चाहिए। व्यायाम करते समय मन को इधर-उधर घूमने देने और मशीन की भांति अथवा उदासीनता तथा निरुत्साह के साथ शरीर के अंगों को हिलाने-डुलाने से व्यायाम का जो उद्देश्य है, वह सब नष्ट हो जाता है।

सूर्य-नमस्कारों को यदि ढीलेपन तथा आलस्य के साथ देर तक किया जावे, तो उससे शरीर के लिए कुछ लाभ तो अवश्य हो जायगा, परन्तु शरीर के प्रति अंग का विकाश, रोग की चिकित्सा और उसकी पीड़ा का बहिष्कार उस समय तक नहीं हो सकेगा, जब तक कि सूर्य-नमस्कार में पूर्ण विचार-बल के प्रयोग को अंग-प्रति-अंग पर नहीं किया जायगा। एक बढ़ई अथवा लुहार के पुट्ठे अच्छे विकसित अवस्था में होते हैं। परन्तु प्रायः उनमें शक्ति तथा लचीलापन का अभाव होता है। ढीलेपन और आलस्य से देर तक सूर्य-नमस्कार का अभ्यास करने से भी शायद बढ़ई अथवा लुहार के जैसे पुट्ठे पैदा हो सकते हैं। इसलिए, इस अवाञ्छनीय फल से वंचित रहने के लिए पूर्ण विचार-बल को नमस्कार की हर सूरत में, बारी बारी से, प्रत्येक अंग पर, जब उस पर ज़ोर पड़े, तब, एकाग्र करना चाहिए और उस समय यह विचार करना चाहिए कि अमुक पुट्ठा तथा अंग अधिक बलवान, दृढ़, सुन्दर तथा विकसित हो रहा है। इस प्रकार मनोबल लगाकर व्यायाम करने से तुमको

व्यायाम करने का फल शीघ्र प्राप्त होगा। यदि इस धर्म-कृत्य के समय मन को इधर-उधर दौड़ने दिया जावेगा, तो इस सब समय तथा परिश्रम का फल यह होगा कि शरीर में केवल पुट्ठे ही पुट्ठे विकसित हो जायँगे और वास्तविक लाभ की प्राप्ति न होगी।

इस महत्वपूर्ण प्रकरण को समाप्त करने के पूर्व हम मि० बर्नार मैकफ़ैडन नामक प्रसिद्ध अमेरिकन स्वास्थ्य-विज्ञान-वेत्ता की लिखी हुई "बुक आफ़ हैल्थ" (प्र० १९२६ ई०) नाम की पुस्तक से उद्धरण देना चाहते हैं। मैकफ़ैडन महाशय के इस सम्बन्ध में हमारे जैसे ही विचार हैं :—

"शरीर के दूसरे अंगों की नाईं पुट्ठे भी नियमित उपयोग में लाये जाने पर बल प्राप्त करते हैं तथा उनकी कार्यशक्ति बढ़ती है। इस प्रकार की बल और कार्यशक्ति की प्राप्ति के लिए व्यायाम करना आवश्यक है। वैज्ञानिक ढंग से स्वास्थ्य और व्यायाम की शिक्षा देने वाले इस बात को प्रकट करते हैं कि व्यायाम करने से पुट्ठे बलवान होते हैं और उनमें जीवनी-शक्ति आती है। इस कार्य के लिए मस्तिष्क से भी काम लेना चाहिये और इसके लिये मन को व्यायाम करते समय उसी अंग-प्रत्यंग में लगा देना चाहिये जिसका व्यायाम के समय संचालन हो रहा हो। तात्पर्य यह कि मस्तिष्क और शरीर का वह अंग जिसका व्यायाम करते समय संचालन हो रहा है, एक दूसरे से पूर्णतः संबद्ध हो जाना चाहिये। ऐसी ही हालत में इच्छा-शक्ति अपना प्रभाव दिखलाती है और इसीलिए जितनी हम उस अंग की ओर अपनी इच्छा-शक्ति लगाएंगे उतनी ही शीघ्रता से उस अंग-प्रत्यंग को शक्ति प्राप्त होगी। पल्टनों में व्यायाम-शिक्षा देनेवाले भी आजकल इसी बात की ओर विशेष जोर देने लगे हैं। व्यायाम करने से शरीर के अंग-प्रत्यंग को बल-शक्ति प्राप्त होती है।

हिन्दू लोग जिन्होंने सदियों से अपने शरीर पर अधिकार रखने का अभ्यास किया है, इस बात पर विशेष ज़ोर देते हैं कि मनुष्य को अपने शरीर के अंग-प्रत्यंग के कार्यों पर पूर्ण अधिकार होना चाहिये। साधारण रीति से मनुष्य की शक्ति से बाहर समझे जाने वाले अंग, हृदय, पाचन-क्रिया, मल-मूत्र का त्याग इत्यादि पर ये लोग इसी बल के भरोसे अपना अधिकार कर लेने का दावा करते हैं।

सातवाँ प्रकरण

सूर्य-नमस्कार में दृष्टि और वाणी का प्रयोग

मन को एकाग्र करने के लिए दृष्टि अति लाभदायक है। मन को एकाग्र अथवा पूर्ण रूप से ध्यानावस्थित करने के लिए गीता में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को जो उपदेश दिया है, उसको हमें यहाँ पर उद्धृत करना उचित ज्ञात होता है—

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥

[भगवद्गीता, ६ । १३]

अर्थात्—"पीठ, गर्दन और सिर को सीधा करके बैठ जाओ और नासिका के अग्र भाग को देखो (परन्तु) दृष्टि इधर-उधर न जाने पावे।"

इसी प्रकार जब सूर्य-नमस्कार की जावें, तब, जैसा कि हम पहले कह आये हैं, सूर्य अथवा अपने इष्टदेव की प्रतिमा या स्वस्ति चिन्ह अथवा एक वृत्ताकार चित्र को अपने सामने लटका लिया जावे। जब सिर को झुकाया जाय, तब दृष्टि भूमि पर पड़े और जब उसको ऊंचा किया जाय, तब वह छत अथवा आकाश की ओर रहे। परन्तु जब तुम पहली सूरत में खड़े होजाओ, तब तुम्हारे सामने किसी ऐसे एक विशेष पदार्थ के रहने की आवश्यकता है, जिसके द्वारा तुम्हारे मन को पूर्ण रूप से एकाग्र होने में सहायता मिल सके। इसलिए दृष्टि को सूर्य-नमस्कार का एक आवश्यक अङ्ग माना गया है।

वाणी का प्रयोग

सूर्य-नमस्कार के मुख्य मंत्र निम्नांकित हैं—

(अ) ओं—इसको ओंकार का प्रणव कहते हैं।

(ब) छः बीज मंत्र—ह्रांम्, ह्रींम्, ह्रूंम्, ह्रैंम्, ह्रौंम्, ह्रः!

(स) प्रणाम के रूप में सूर्य के ये बारह नाम हैं—(१) मित्राय नमः (२) रवये नमः (३) सूर्याय नमः (४) भानवे नमः (५) खगाय नमः (६) पूष्णेनमः (७) हिरण्यगर्भाय नमः (८) मरीचये नमः (९) आदित्याय नमः (१०) सवित्र नमः (११) अर्काय नमः (१२) भास्कराय नमः।

इन बारह नामों के, जो सब सूर्य-वाची हैं, निम्न लिखित अर्थ हैं—

(१) मित्र—सब का मित्र।

(२) रवि—सब से प्रशंसित अर्थात् जिसकी सबने प्रशंसा की है।

(३) सूर्य—प्रवर्तक, संचालक अथवा उत्तेजक।

(४) भानु—प्रकाश अथवा सुन्दरता देने वाला।

(५) खग—इन्द्रियों को उत्तेजित करने वाला।

(६) पूषन्—पालन-पोषण करने वाला।

(७) हिरण्यगर्भ—वीर्य में बल और जीवन को विकसित करने की शक्ति रखने वाला।

(८) मरीच—रोगों का नाशक।

(९) आदित्य—खींचने वाला, आकर्षित करने वाला।

(१०) सवितृ—उत्पादक अथवा पैदा करने वाला।

(११) अर्क—पूजनीय अर्थात् पूजा करने के योग्य।
(१२) भास्कर—प्रकाशवान।

(ङ) ऋग्वेद के तीन मंत्र—उद्यन्नद्य मित्रमहः इत्यादि तथा युजुर्वेद का एक मंत्र—हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसत् इत्यादि।

वह क्रम, जिसमें प्रणव, ६ बीज मंत्र और तीन या एक वैदिक मंत्र (जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है) सूर्य के १२ नामों से सम्बद्ध हैं, पाठकों को समझा दिया जाना आवश्यक प्रतीत होता है।

इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए ऋग्वेद के तीन मंत्र बारह भागों में—उद्यन्नद्य मित्रमहः, आरोहन्नुत्तरां दिवम्, हृद्रोगं मम सूर्य आदि—विभक्त हैं तथा यजुर्वेद का मंत्र भी—हंसः शुचिषत्, वसुरन्तरिक्षसत्, होता वेदिषत आदि—बारह भागों में विभक्त हैं। (पुस्तक के अंत में देखिए)

प्रणव (ॐ) का उच्चारण, एक या एक से अधिक बार २५ नमस्कारों में से प्रत्येक के करने के समय, किया जाना चाहिए। (नक़शा देखिए)

सूर्य के एक नाम के उच्चारण के पहले एक बीज मंत्र है। एक वैदिक मंत्र या मंत्रों का एक अंश प्रत्येक बीज मंत्र के आरंभ में होता है।

सूर्य के दो नामों के साथ दो बीज मंत्र होते हैं और हर एक वैदिक मंत्र के दो अंशों के आगे भी दो बीज मंत्र हैं।

सूर्य के चार नामों के पहले चार बीज मंत्र और वैदिक मंत्रों के ४ अंशों के आगे भी चार बीज मंत्र होते हैं।

बाइसवीं, तेईसवीं और चौबीसवीं नमस्कार में सूर्य के १२ नामों का एक साथ उच्चारण करते समय दो-दोबार ६ बीज मंत्र

पढ़ना चाहिये और समूचा एक वैदिक मंत्र या तीनों वैदिक मंत्र ६ बीजमंत्रों के दोबारा उच्चारण करने के पहले कहना चाहिये (नक़्शा तथा पुस्तक के अंत में देखिए)।

इसी आधार पर पुस्तक के अंत में दिये हुए बारह नमस्कारों का वैज्ञानिक और सुभीते का क्रम है।

वाणी का रूपांतरित क्रम

सब से पहले इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि पुस्तक और नक़्शे में दी हुई दसों सूरतें एक के बाद दूसरी बिना क्रम भंग किए की जानी चाहिये। इन सब को मिला कर एक नमस्कार पूरा होता है और बीज मंत्रों के साथ इनके करने में १५-२० पल से अधिक नहीं लगते। इस प्रकार की २५ नमस्कारों का एक आवर्त्तन होता है। इसमें ६-७ मिनट लगेंगे।

पुस्तक के अंत में दिये हुए एक पूरा नमस्कार करने में प्रणव, बीज मंत्र तथा वैदिक मंत्रों के सहित उच्चारण करने में अधिक समय लगेगा।

नए व्यक्ति का, अभ्यास में लगे हुए व्यक्ति की अपेक्षा सूर्य-नमस्कार करने में कुछ अधिक समय लगेगा।

बिना किसी जाति भेद के प्रत्येक व्यक्ति के काम में आने योग्य दिए हुए नक़्शे को देखने से ज्ञात होगा कि उसमें जो वैदिक मंत्र दिये गए हैं, उनके उच्चारण करने में अ-हिन्दू को आपत्ति हो सकती है। ये मंत्र पूर्ण रूप से पुस्तक के अंत में दिए गए हैं। चूंकि सूर्य-नमस्कार व्यायाम का प्रचार सारे हिन्दुस्तान में बड़ी शीघ्रता से हो रहा है, उसको शिक्षालयों में अनिवार्य रूप से प्रचलित कर दिया जाना लाभदायक सिद्ध होगा। हमने जान-बूझ कर नक़्शे में वैदिक मंत्रों का उल्लेख केवल इसी

लिये नहीं किया है ताकि इस व्यायाम का उपयोग हिन्दू , ईसाई, मुसलमान आदि हर कोई कर सके। जो लोग वेदों में विश्वास नहीं करते या जो नमस्कारों के साथ वैदिक मंत्रों का उच्चारण नहीं करना चाहते उन्हें नीचे लिखे अनुसार उच्चारण करना चाहिये।

(१) बारह नमस्कारों की पहली आवृत्ति कुछ तेज़ी से की जाय—

पहली नमस्कार—नक़्शे में दी हुई पहली सूरत में आकर पहला मंत्र—ॐ ह्रां मित्राय नमः—ज़ोर से और शुद्ध शुद्ध कहना चाहिये। मुँह बन्द रख नाक से दीर्घ स्वास लेते हुए बाकी की नौ सूरतों को भी नक़्शे के या चौथे प्रकरण के उल्लेख के अनुसार कर डालो। दसों सूरतों को पूरो करने पर एक नमस्कार का अंत होगा और दूसरी का आरंभ।

दूसरा नमस्कार—दूसरा मंत्र—ॐ ह्रीं रवये नमः – उच्चारण करो। मुँह बन्द रखो और नाक से सांस लेते हुए बाकी नौ सूरतों को पूरी कर डालो। दसवें नमस्कार की पूर्त्ति के साथ दूसरे नमस्कार का अन्त और तीसरे का आरम्भ होगा।

तीसरा नमस्कार—तीसरा मंत्र—ॐ ह्रूं सूर्यायनमः—उच्चारण करो। बाक़ी नौ सूरतें उपरोक्त ढंग से पूरी कर डालो।

चौथा नमस्कार—चौथा मंत्र—ॐ ह्रैं भानवे नमः—उच्चारण करो। बाक़ी नौ सूरतें उसी ढंग से पूरी कर डालो।

पाँचवां नमस्कार—पांचवां मंत्र—ॐ ह्रौं खगाय नमः—उच्चारण करो। बाकी नौ सूरतें उसी ढंग से कर डालो।

छठवां नमस्कार—छठवाँ मंत्र—ॐ ह्रः पूष्णेनमः—उच्चारण करते हुए उसी ढंग से अन्य सूरतें पूरी कर डालो।

सातवां नमस्कार- सातवां मंत्र—ॐ ह्रां हिरण्यगर्भायनमः—उच्चारण कर अन्य सूरतें भी उसी ढंग से करो।

आठवां नमस्कार—आठवां मंत्र—ॐ ह्रीं मरीचये नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

नवां नमस्कार—नवां मंत्र—ॐ ह्रूं आदित्याय नमः-उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

दसवां नमस्कार—दसवां मंत्र—ॐ ह्रैं अर्काय नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

ग्यारहवां नमस्कार—ग्यारहवां मंत्र—ॐ ह्रौं अर्काय नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

बारहवां नमस्कार—बारहवां मंत्र—ॐ ह्रः भास्कराय नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

(२) छः नमस्कारों की दूसरी आवृत्ति (१३ से १८ तक) कुछ अधिक समय लेगी।

तेरहवां नमस्कार—तेरहवां मंत्र—ॐ ह्रां ह्रीं मित्ररविभ्यां नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

चौदहवां नमस्कार—चौदहवां मंत्र—ॐ ह्रूं ह्रैं सूर्यभानुभ्यां नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

पंद्रहवां नमस्कार—पन्द्रहवां मंत्र—ॐ ह्रौं ह्रः खगपूषभ्यां नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

सोलहवां नमस्कार—सोलहवां मंत्र—ॐ ह्रां ह्रीं हिरण्यगर्भ-मरीचिभ्यां नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

सत्तरहवां नमस्कार—सत्तरहवां मंत्र—ॐ ह्रूं ह्रैं आदित्य-सवितृभ्यां नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

अठारहवां नमस्कार—अठारहवां मंत्र—ॐ ह्रौं ह्रः अर्क भास्कराभ्यां नमः– उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

(३) तीन नमस्कारों का तीसरी आवृत्ति (१९ से २१ तक) कुछ अधिक समय लेगी।

उन्नीसवां नमस्कार—उन्नीसवां मंत्र—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रैं मित्ररविसूर्यभानुभ्यो नमः—उच्चारण कर बाकी पूर्ववत् करो।

बीसवां नमस्कार—बीसवां मंत्र—ॐ ह्रौं ह्रः ह्रां ह्रीं खगपूष हिरण्यगर्भमरीचिभ्यो नमः—उच्चारण कर बाकी पूर्ववत करो।

इक्कीसवां नमस्कार—इक्कीसवां मंत्र—ॐ ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः आदित्यसवित्रर्कभास्करेभ्यो नमः—उच्चारण करो। बाकी पूर्ववत् करो।

(४) तीन नमस्कारों की चौथी आवृत्ति (२२ से २४ तक) में सबसे अधिक समय लगता है।

बाइसवां नमस्कार—बाइसवां मंत्र—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रैं ह्रौं ह्रः, ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रैं ह्रौं ह्रः मित्ररविसूर्यभानुखगपूषहिरण्गर्भमरीच्यादित्यसवित्रर्कभास्करेभ्यो नमः—उच्चारण करो। मुँह बन्द कर नाक से बाहरी सांस लेते हुए नक़शे में दी हुई सब सूरतों को कर डालो।

तेइसवां और चौबीसवां नमस्कार– इन दोनों नमस्कारों को बाईसवें नमस्कार के अनुसार कर डालो।

(५) अंतिम अर्थात् पचीसवां नमस्कार

पचीसवां मंत्र—ॐ श्री सवितृसूर्यनारायणाय नमः—उच्चारण करो। मुँह को बन्द रखो और नाक से गहरी सांस लेते हुए नक़शे के अनुसार सब सूरतें कर डालो।

इस प्रकार इन २५ सूर्य-नमस्कारों का एक पूर्ण आवर्तन अथवा आवृत्ति कहलाती है। जब इन नमस्कारों की दूसरी आवृत्ति आरम्भ होती है, तब शरीर में क़रीब क़रीब ऐसी ही नवीनता अथवा उससे भी अधिक नवीनता अनुभव होती है, जैसी कि पहिली आवृति के आरम्भ में थी। इस नवीनता का कारण यह है कि पहिली आवृति के द्वारा शरीर का सम्पूर्ण आलस्य दूर हो जाता है। इस कारण १२ अथवा १६ आवृत्तियों के करने के उपरांत शरीर में थकान भले ही हो जावे, परन्तु सांस नहीं टूटती। यह बीज-मंत्र उच्चारण करने का एक अद्भुत लाभ हैं।

इन मन्त्रों को खड़ी हुई हालत में उच्चारण करना चाहिये, अर्थात् पहिली सूरत ही में उच्चारण करना चाहिए। नमस्कार की अन्य सूरतों में—जैसे झुकना, पड़ना, उठना इत्यादि में—केवल नासिका द्वारा सांस लेने और निकालने ही में सचेष्ट रहना चाहिए।

जो मनुष्य वेदों को नहीं मानते हैं अथवा सूर्य-प्रणामों (मित्राय नमः आदि) के उच्चारण के साथ वैदिक मंत्रों को सम्मिलित करना नहीं चाहते हैं, उनको बीज-मंत्रों को निम्नांकित रूप से उच्चारण करना चाहिए—

(अ)—(१) ओं ह्रां मित्राय नमः, (२) ओं ह्रीं रवये नमः (३) ओं ह्रूं सूर्याय नमः, (४) ओं ह्रैं भानवे नमः, (५) ओं ह्रौं खगाय नमः, (६) ओं ह्रः पूष्णे नमः; (७) ओं ह्रां हिरण्यगर्भाय नमः, (८) ओं ह्रीं मरीचये नमः, (९) ओं ह्रूं आदित्याय नमः (१०) ओं ह्रैं सवित्रे नमः, (११) ओं ह्रौं अर्काय नमः (१२) ओं ह्रः भास्कराय नमः।

(ब) (१)—ओं ह्रां ह्रीं मित्ररविभ्यां नमः, (२) ओं ह्रूं ह्रैं सूर्यभानुभ्यां नमः, (३) ओं ह्रौं ह्रः खगपूषाभ्यां नमः, (४) ओं

हां हां हिरण्यगर्भमरीचिभ्यां नमः, (५) ओं हं हं आदित्य-सवितृभ्यां नमः, (६) ओं हौं हः अर्कभास्कराभ्यां नमः।

(स)—(१) ओं हां ही हं हैं मित्ररविसूर्यभानुभ्यो नमः (२) ओं हौं हः हां हा खग-पूष-हिरण्यगर्भ-मरीचिभ्यो नमः (३) ओं हं हैं हों हः आदित्यसवित्रार्कभास्करेभ्यो नमः।

(द) ओं हां हीं हं हैं हौं हः, ओं हां हीं हं हैं हौं हः मित्र-रवि-सूर्य-भानु-खग-पूष-हिरण्यगर्भ--मरीच्यादित्य--सवित्रार्क-भास्करेभ्यो नमः। इसका तीन बार उच्चारण करना चाहिए।

(क) ओं श्री सवित्रे सूर्य्यनारायणाय नमः। यह पहिली आवृति का अन्तिम अर्थात् २५ वाँ प्रणाम है।

जो ऋग्वेद और यजुर्वेद के माननेवाले हैं, उनको इन बीज-मंत्रों के साथ अपने मंत्रों को भी कहना चाहिए। यजुर्वेद के मानने वालों के लिए निम्नांकित मंत्र है—

हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसद्।
नृषद्वरसदृतसद् व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत्॥

[वा० यजुर्वेद १०। २४]

हंस=सांस लेना और निकालना।
शुचिषद्=सब से पवित्र स्थान का निवासी।
वसुः=दूसरे के निवास-स्थान को सुखमय बनाने वाला।
अन्तरिक्षसद्=अन्तरिक्ष अर्थात् हृदय में रहने वाला।
होता=लेने और देने वाला।
वेदिषद्=वेदी अर्थात् हृदय में रहने वाला।
अतिथः=सदा घूमने वाला अर्थात् वह, जिसके आने और जाने का कोई समय नियत न हो।

दुरोणसद्=संरक्षक तत्व में रहने वाला।

नृपद्=मनुष्य में रहने वाला।

वरसद्=उत्तम वस्तु में रहने वाला।

ऋतसद्=दिव्य नियम अथवा सर्व श्रेष्ठ आत्मा में रहने वाला।

व्योमसद्=तारागण में रहने वाला।

अब्जाः=जीवन-जल उत्पन्न करने वाला।

गोजाः=जीवन रूप शक्तिशाली इन्द्रियों का देने वाला।

ऋतजाः=दिव्य नियम का बनाने वाला।

अद्रिजाः=पूजनीय वस्तु का उत्पादक।

ऋतम्=सत्य

बृहत्=बड़ा

ये गुणवाची शब्द साधारणतः आत्मा अथवा जीवात्मा के लिए प्रयोग किये जाते हैं। और चूंकि वेदों में सूर्य* ही को सब जड़-जंगम अर्थात् चल-अचल का आत्मा माना है, इसलिए ये शब्द सूर्य के लिए भी प्रयुक्त हो सकते हैं।

सूर्य-पूजकों का अन्तिम उद्देश्य अपनी आत्मा और जीवात्मा का एक कर देना है।

ऋग्वेद के मानने वालों को बीज-मंत्रों के साथ ये निम्नांकित तीन मंत्र कहने चाहिए—

---

* योऽसावदित्ये पुरुषः सोऽसावहम्। [वा० यजुर्वेद ४० । १७]
अर्थात् "जो आत्मा सूर्य में है वह मैं ही हूँ"।

सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च। [ऋग्वेद १ । ११५ । १]

अर्थात् "सूर्य, जड़ जंगम सब की आत्मा है"।

उद्यनद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम् ।
हृद्रोग मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ॥ १ ॥

शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि ।
अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं निदध्मसि ॥ २ ॥

उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह ।
द्विषन्तं मह्यं रन्धयन्मो अहं द्विषते रधम् ॥ ३ ॥

[ऋग्वेद १ । ५० । ११—१३]

इन मंत्रों का क्रमशः यह अर्थ है—(१) हे सूर्य तुम, जिसके अनेक मित्र हैं और जो आज उदय होकर आज ही अति उच्च-स्वर्ग तक पहुँच गया है, मेरे हृदय के रोग को दूर करो और मेरे पीतवर्ण अर्थात् दुर्बलता का अपहरण करो। (२) मेरा यह पीतवर्ण तोतों और तारों पर पहुँचा दिया जाय अथवा हरीताल वृक्ष को दे दिया जाय। (३) अपने विजेता बल से आदित्य (सूर्य) ऊँचा चढ़ गया है और मेरे हाथ में मेरे शत्रु को छोड़ गया है। मुझे इस शत्रु का शिकार न बन जाना चाहिए।

अपने अपने वेद-मंत्रों को बीज-मंत्रों के साथ उच्चारण करने से यह व्यायाम कुछ अधिक धीरे धीरे होने लगेगा। इससे यह लाभ होगा कि जिस अंग को तुम बलिष्ट बनाना चाहते हो, उस पर तुम अधिक ज़ोर डालने तथा उसकी ओर अपने चित्त को एकाग्र करने में समर्थ हो सकोगे।

उन लोगों से जिनका वेद-मंत्रों में विश्वास नहीं है, हमारा यह निवेदन है कि आप लोग पूर्ण हार्दिक उत्साह के साथ प्रत्येक नमस्कार को करें और इस व्यायाम शैली से पूरा पूरा लाभ उठाएं।

सूर्य-नमस्कार प्रत्येक मनुष्य का एक धार्मिक कर्तव्य है, जिसको उसे अपने प्रति तथा समाज के प्रति पालन करना है, न कि वह एक केवल शारीरिक व्यायाम। इसलिए, जिस प्रकार व्यायाम करने के लिए पहलवानों के लिए भोजनादि के नियम बतलाये जाते हैं, उसी प्रकार सूर्य-नमस्कार के अनुगामियों को किसी विशेष नियम के बतलाने की आवश्यकता नहीं है। बस इस सम्बन्ध में इतना बतला देना है कि सूर्य-नमस्कार करने के बाद, यदि हो सके, तो एक आधासेर गाय का दूध पी लिया जाय। इससे बहुत लाभ होगा। परन्तु हम यह भी स्पष्ट कहे देते हैं कि यह दूध का पीना अनिवार्य नहीं है, अर्थात् ऐसा नहीं है कि इसको अवश्य पिया ही जाय। भोजन करने में, वही अपने पुराने दो समय के भोजन करने के नियम का पालन करना चाहिये और बीच में कुछ भी न खाना चाहिए। यह नियम सभी के पालन-योग्य है। यदि ऐसा किया जायगा, तो सूर्य-नमस्कार का करने वाला अजीर्ण अथवा बहु-भोजन करने के रोग से कभी पीड़ित न होगा।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि सूर्य-नमस्कार के प्रतिदिन के करने से दूसरे खेलों के खेलने के लिए, जिनमें शारीरिक बल की आवश्यकता होती है, न केवल रुचि ही उत्पन्न होती है, किन्तु उनके खेलने में जो आनन्द प्राप्त होता है उसकी वृद्धि भी होती है।

आठवाँ प्रकरण

वाणी द्वारा स्वास्थ्य की प्राप्ति

अब उन बीज-मंत्रों (ओं ह्रां ह्रीं इत्यादि) की, जो देखने में निरर्थक ज्ञात होते हैं, उन आश्चर्यजनक शक्तियों का वर्णन करना है, जो औषधि तथा जीवन-मूरि का काम करती हैं और जो शारीरिक तथा मानसिक दो प्रकार की हैं; और यह भी बतलाना है कि वे शरीर के भिन्न भिन्न अंगों तथा दिल, दिमाग, और पेट आदि पर किस प्रकार प्रभाव डालती हैं और शरीर को सब प्रकार के विकारों से किस प्रकार वंचित रखतीं तथा विकार-युक्त अंगों को स्वस्थ बनाती हैं।

(अ) ओं — यह पवित्र अक्षर 'प्राणायाम' के प्रत्येक मंत्र के आरम्भ में आता है और कभी कभी मंत्र के प्रत्येक अक्षर के आरम्भ में और प्रायः यह मंत्रों के आदि और अन्त दोनों ही स्थान पर रहता है यह ओं अक्षर सम्पूर्ण वैदिक ज्ञान का सार समझा जाता है। भगवान् श्रीकृष्ण का निम्नांकित वचन इसके महत्व को स्पष्ट रूप से प्रकट करता है—

> ओं इत्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्।
> यः प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमां गतिम् ॥
>
> [भगवद्गीता ८ । १३]

अर्थात "जो एक अक्षर के ब्रह्म (ओं) का उच्चारण करता हुआ मेरा स्मरण करता है, वह इस शरीर को त्याग कर परम गति को प्राप्त होता है।"

(ब) **हाम्** इस मंत्र में प्रत्येक अक्षर का लम्बा उच्चारण होता है। इसमें के 'आ' और 'म्' के उच्चारण में इतना समय लगता है, जितना इनके ('आ' और 'म्' के) क्रमशः चार और तीन बार के उच्चारण में लगता है। 'ह' अक्षर का उच्चारण हृदय से निकलता है। इसलिए, जितनी बार, 'हाम्' मंत्र का उच्चारण किया जायगा, उतनी ही बार हृदय का संचालन तीव्रता के साथ होगा। शरीर में रुधिर शुद्ध होने की क्रिया हृदय ही में होती है। क्योंकि किसी विकृत अंग के लिए जो रुधिर जाता है उसका भेजने वाला हृदय ही है। यदि यह रुधिर उस विकृत अथवा रोगी अंग में पहुँचने के पूर्व शुद्ध कर दिया जाय, तो उसका यह प्रभाव होगा कि रोग दूर हो जायगा। और प्रत्युत, यदि अशुद्ध अथवा दूषित रुधिर को शरीर में दौड़ने दिया जाय, तो विकृति अथवा रोगी अंग अच्छा होने के बजाय और अधिक रोगी हो जायगा। इसलिए, प्रत्येक बीज-मंत्र के आरम्भ में 'ह्' अक्षर इसी विचार से रक्खा गया है कि वह केवल हृदय को संचालित करे और बलवान् बनावे, जिससे शरीर में शुद्ध रुधिर ही का संचार होवे।

प्रत्येक मंत्र 'ह्' अक्षर से आरम्भ होता है और 'म्' पर समाप्त। साधारणतः नासिका द्वारा ही सांस लिया जाता है। नासिका द्वारा सांस लेने से भी रुधिर शुद्ध होता है। नासिका द्वारा सांस लेने के साथ जो अक्सिजन [प्राण-वायु] शरीर के भीतर जाती है, वह दूषित रुधिर को शुद्ध और लाल बनाती है। नासिका द्वारा सांस लेने में नासिका और श्वास-नलिका, ये दो अंग काम में आते हैं। इसलिए, इन दोनों अंगों का विकार-रहित एवं नीरोगी रहना अति आवश्यक है। बस इसी अभिप्राय से प्रत्येक बीज-मंत्र के अंत में 'म्' अक्षर रक्खा गया है और उसका देर तक लम्बा उच्चारण बतलाया गया है।

मुख्य अंगों को बलवान करना

प्रत्येक मंत्र में जिस प्रकार 'ह्' और 'म्' आते हैं उसी प्रकार 'र्' भी आता है। यह 'ह्' और 'म्' के बीच में पड़ता है। मंत्र-शास्त्र❀ में 'र्' अक्षर का ऐसा ही महत्व है, जैसा कि 'ओं' का। 'र्' अक्षर के उच्चारण में जिह्वा का अग्र भाग तालू के अग्र भाग को छूता है, जिसका प्रभाव यह होता है कि, मस्तिष्क में संचालन उत्पन्न होता है। इसलिए, इन आध्यात्मिक बीज-मंत्रों का उच्चारण शरीर के इन तीन मुख्य अंग हृदय (दिल), कंठ (गला), और मस्तिष्क (दिमाग़) को, जिनका नीरोग एवं स्वस्थ रहना एक स्वस्थ तथा बलवान शरीर के लिए आवश्यक है, संचालित करता तथा शक्तिशाली बनाता है।

संस्कृत भाषा में 'ह्राम्' मंत्र की प्रशंसा में निम्नांकित एक सुन्दर श्लोक है—

> राकारोच्चारणमात्रेण मुखान्निर्याति पातकम् ।
> पुनः प्रवेशभीत्या च मकारस्तु कपाटवत् ॥

अर्थात् " 'ह्राम्' का केवल 'रा' ही मुख को खोल कर सब विकारों को दूर कर देता है और 'म,' यह डर कर कि कहीं, वे निकले हुए विकार, खुले हुए मुख द्वारा, शरीर के भीतर फिर प्रवेश न कर जायँ, मुख के होंटों को बन्द करके किवाड़ों का काम करता है।"

प्रत्येक बीज-मंत्र के उच्चारण में 'ह' कहने के कारण, जो सभी मंत्रों में आता है, मुख खुलता है और 'म्' के कहने पर

❀ मंत्र शास्त्र यह बतलाता है कि देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए स्तुति, भजन तथा जादू-टोना आदि का प्रयोग किस प्रकार करना चाहिए।

बन्द हो जाता है। जब सूर्य-नमस्कार करने में शरीर को हिलाया-डुलाया जाता है, तब साँस लेने की समस्त क्रिया नासिका द्वारा ही की जाती है। और सूर्य के बारह नामों में से प्रत्येक नाम—यथा 'मित्राय नमः' के उच्चारण करने में भी 'नमः' कहने में मुख के होंट बन्द हो जाते हैं।

'ह्राम्' में का दीर्घ 'आ' ऊपर की तीन पसलियों को बलवान बनाता, खाना ले जाने वाली नली को शुद्ध करता, दिमाग को संचालित करता, आलस्य को दूर करता और फेफड़ों को उत्तेजित करके उनके ऊपरी भाग को शुद्ध करता है। 'ह्राम्' मंत्र से दमा और खांसी के रोग अच्छे होते हैं और यह क्षयी रोग को नहीं होने देता।

(स) 'ह्रीम्' की 'ई' का लम्बा उच्चारण गले, तालू, नाक, और दिल के ऊपरी भाग की क्रिया को उत्तेजित करता है। 'ह्रीम' के उच्चारण से श्वासेन्द्रिय का कफ-बलगम और पेट और आंतों का मल, जो वहाँ पैदा होता रहता अथवा जमा हो जाता है, निकल जाता है और इन अंगों की सफाई हो जाती है। सूर्य-नमस्कार की पहिली अथवा दूसरी आवृत्ति में, प्रायः नहीं, किन्तु कभी कभी यह देखा गया है कि नाक और मुंह से रतूबत निकलती है। परन्तु दो आवृतियों के करने के उपरान्त श्वास-नलिका और खाना ले जाने वाली नली बिल्कुल साफ हो जाती है।

पेट को उत्तेजित करना

(द) 'ह्रूम्' का दीर्घ 'ऊ' जिगर, तिल्ली या बरबट, पेट और अंतड़ियों (आंतों) को उत्तेजित करता और पेडू को कम करता है। जो स्त्रियाँ सदा पेडू के नीचे के भाग के रोग से

पीड़ित रहती हैं, उनको 'ह्रम्' मंत्र के उच्चारण करने से बड़ा लाभ पहुँचेगा।

(क) 'ह्रैम्' मंत्र का उच्चारण गुर्दे * को उत्तेजित करता है। सूर्य-नमस्कार में 'ह्रैम्' मंत्र का बारबार का उच्चारण पिशाब उतारता है अथवा पिशाब उतारने की औषधि का काम करता है।

(ख) 'ह्रौम्' मंत्र के उच्चारण का उपस्थेंद्रिय और जननेंद्रिय पर असर होता है और वह उनको अपने स्वाभाविक रूप से काम करने में सहायता देता है। जब इस वैज्ञानिक व्यायाम, सूर्य-नमस्कार के करने का अच्छा अभ्यास हो जायगा, तब यह अनुभव होगा कि स्नान करने के पूर्व जो आतें सुस्त थीं, वे अब आध घंटे के पश्चात् अर्थात् नमस्कार करने पर खुल गई हैं अथवा वे सुस्ती का त्यागन करके अपने स्वाभाविक कार्य में लग गई हैं।

(ग) छठवाँ मंत्र 'ह्रः' है। यह सीने और गले को उत्तेजित करता है।

इस प्रकार ये बीज-मंत्र शरीर के मुख्य अंगों, यथा हृदय, पेड़ू, गला, तालू श्वास-नलिका (सांस लेने की नली, जो फेंफड़ों से मिली हुई है) और मस्तिष्क आदि में संचालन तथा उत्तेजन उत्पन्न करते, रुधिर को शुद्ध करते और इन स्थानों के विकारों तथा रोगों को दूर करते हैं। क़रीब-क़रीब सब रोग या तो सिर, नाक, गले, दिल, फेंफड़ों से उत्पन्न होते हैं या पेट से। जब ये सब अंग बीज-मंत्रों के द्वारा शुद्ध तथा विकार-रहित हो जाते हैं, तब सूर्य-नमस्कार करने में अंगों तथा इन्द्रियों के तीव्र

---

*गुर्दा अंतड़ियों या आँतों का वह भाग है जिससे पिशाब निकलता है।

रूप से आंदोलित होने के कारण शरीर के रुधिर-संचार में उत्तेजना उत्पन्न हो जाती है। जब सब अंग और इन्द्रियाँ स्वस्थ रुधिर के तीव्र संचार के कारण अपना अपना काम स्वाभाविक रूप से करने लग जाती हैं, तब वे केवल वाह्यरूप से रूप-स्वरूप, आकार-प्रकार तथा बल ही में उन्नति को प्राप्त नहीं होतीं, किन्तु अपने आन्तरिक गुणों, यथा सहिष्णुता तथा रोगनाशक शक्ति में भी उन्नति करती हैं।

अस्तु, सूर्य-नमस्कार-व्यायाम दुगना लाभ पहुँचाता है, जो इस अलौकिक व्यायाम का एक अद्भुत गुण है। इस सम्बन्ध में (अर्थात् दुगने लाभ में) और कोई अकेली व्यायाम-पद्धति सूर्य-नमस्कार की समता नहीं कर सकती।

सारांश में

प्रणव 'ॐ' शरीर के मार्मिक अंगों को—विशेष कर मस्तिष्क, हृदय और पेट को शक्ति प्रदान करने वाला है।

'ह्रां'—मस्तिष्क, हृदय, नाक, नटई, गला, फेफड़ा तथा ऊपरी अंतड़ियों को शक्ति देता है।

'ह्रीं'—इससे गला, हृदय, पाचन क्रिया करने वाले अवयवों आदि को शक्ति मिलती है।

'ह्रूं'—जिगर, तिल्ली, पेट, पेडू आदि को शक्ति देने वाला है।

'ह्रैं'—इससे गुर्दे के कार्य संचालन में सहायता मिलती है।

'ह्रौं'—इससे मलमूत्र विसर्जन करने वाले अंगों को अपना नियमित काम करने में सहायता मिलती है।

'ह्रः'—इससे गला साफ़ और विकार रहित होता है और छाती बढ़ती है।

नवाँ प्रकरण

एक यूरुपीय विद्वान का अनुभव

बीज-मंत्रों की अद्भुत शक्तियों के विषय में जो हमने ऊपर वर्णन किया है, उसके सम्बन्ध में जब तुम एक यूरुपीय विद्वान श्री० बी० एम० लेजर लैज़रिओ का निम्न लेख पढ़ोगे, तब तुमको उनमें विश्वास होगा। आपका यह लेख 'फ़िज़िकल कलचर' नाम की एक अंग्रेज़ी मासिक-पत्रिका के अप्रैल, सन् १९२४ ई० के अंक में प्रकाशित हुआ था। वह लेख यह है—

"मैंने अपना स्वास्थ्य श्वास-क्रिया के अभ्यास से प्राप्त किया है। यदि आप भी ऐसा करें, तो आप भी स्वस्थ हो सकते हैं"।

मेरा जन्म वाइना नगर (यूरुप के आस्ट्रिया देश की राजधानी) में हुआ था। मैं अपनी बाल्यावस्था में अति कोमल शरीर का था और मुझ में अति अध्ययन करने की प्रवृत्ति थी। अति अध्ययनशील होना भी एक दुर्व्यसन ही है। परन्तु यह मेरे लिए एक गुण ही समझा जाता था। मुझे पुस्तकों का भोजन इतना कराया गया कि मुझे मानसिक तथा शारीरिक, दोनों प्रकार का भयंकर अजीर्ण हो गया और उसने मुझे मृत-प्राय अवस्था को पहुँचा दिया।

मैं १८ वर्ष की अवस्था तक कभी नीरोग अवस्था में नहीं रहा। १८ वर्ष की अवस्था में मेरा रोग इतना बढ़ गया कि मुझे

अति कष्टकर गठिया होगई और डाक्टरों ने मेरी दशा को असाध्य बतला दिया।

परन्तु एक दिन मेरे हाथ एक बात लग गई। मैंने यह अनुभव किया कि श्वास भी एक चीज़ है। मुझे यह विदित हो गया कि न तो यह कोई आध्यात्म-विद्या का विषय है और न किसी प्राचीन शास्त्र का शब्द, किन्तु यह एक जीवित तत्त्व है, जिसके लिए मैं एक अज्ञानी की भांति उत्सुक हो रहा हूं।

श्वास जीवन है

श्वास ही जीवन है। श्वास को वशीभूत करो और इस क्रिया को एक विशेष कला में परिणत कर दो। तब तुम को यह ज्ञात होगा कि हम को तो वह श्वास-नलिका प्राप्त हो गई, जो हमारे सम्पूर्ण अस्तित्व का भेद खोलती है। यदि तुमको यह ज्ञात हो जाय कि यह नलिका कहाँ मिलेगी, तो फिर उसका चलाना तो आसान है। मेरे जीवन का काम ही यह है कि मैं दूसरों से इस श्वास-नलिका का पता लगवाऊँ और उसके प्रयोग को एक कला का रूप दूँ। इसलिए, मैं काल के गाल से निकल आने की अपनी कहानी को यहाँ लिखता हूँ। इस लेख में मैं जो कुछ लिख रहा हूँ, वह कोई सिद्धान्त नहीं है, किन्तु वह एक अनुभूत बात की कथा मात्र है। यदि तुम भी ऐसा करोगे, तो तुम भी इस सम्बन्ध में अपनी एक कहानी सुनाओगे। यह मैं जानता हूँ कि प्रायः श्वास-नलिका का प्रयोग करना एक कठिन कार्य है, परन्तु मेरा अनुभव यह है कि यह इतना आसान है, जितना सांस का लेना। इसीलिए, मैं अपनी कहानी को कह रहा हूँ—

बच्चा क्या कहता था ?

जब मैं १८ वर्ष का था और गठिया रोग से पीड़ित था, तब

एक दिन मेरी एक पड़ोसिन अपने एक बच्चे को हमारे घर लाई और उसको हमारे यहाँ छोड़ कर चली गई। यह बच्चा हमारे घर कई घंटे तक रहा। बच्चा खूब स्वस्थ था। मेरा ध्यान उसके स्वास्थ्य तथा सुन्दरता को देख कर उसकी ओर आकर्षित हुआ और मैं कुछ समय तक अपना दुख भूल गया। यह बच्चा चित्त, छत की ओर मुख किये हुए पड़ा हुआ था और 'ला ला' कह रहा था।

मैंने अपनी नौकरानी को बुलाया और उससे कहा कि इस बच्चे के कपड़े उतार कर मेरे पास ले आओ। नौकरानी ने बच्चे के कपड़े उतारे और उसको मेरे बिस्तर पर रख दिया। मैंने बिस्तरे से कुछ उठकर, पहिले उस सुन्दर बच्चे को खूब दिल भर कर देख कर अपनी आँखों को तृप्त किया। बच्चे को देख कर यह ज्ञात होता था कि यह अभी वैसा ही है जैसा कि ईश्वर ने उसे बनाया था। अभी उस पर किसी का प्रभाव नहीं पड़ा था। मैंने उसकी दिव्य मूर्ति का अपने जर्जरीभूत, कृश एवं शववत् शरीर से, जो इतना कुरूप था कि मैं स्वयं उसका स्वामी होता हुआ भी उससे घृणा करता था, मिलान किया।

बच्चे ने मेरी ओर देखा और फिर उसके बाद उसी प्रकार 'ला ला ला' गाने लगा। मैंने बड़े ध्यान से उसके इस गाने को सुना। मुझे एक बात ज्ञात हुई कि जब जब वह बच्चा 'ला ला' कहता था, तब तब उसकी ऊपर की पसलियाँ चलती हुई दिखलाई देती थीं और उन पसलियों के अतिरिक्त और कोई भाग नहीं चलता था। मैंने स्वयं भी 'ला' अक्षर को कहा और वही प्रभाव उसका मुझ पर भी हुआ। यह मुझे बड़ा रुचिकर मालूम हुआ। मैंने इसके बाद दूसरा अक्षर 'पू' कहना शुरू किया, जिससे मुझे यह अनुभव हुआ कि इस अक्षर के उच्चारण से

और भी नीचे के अंग में उत्तेजना होती है। तब मैंने 'पू' अक्षर को उस बच्चे से भी कहला कर देखा। जब वह उसको कहने लगा, तब मुझे उसके शरीर को देखकर ज्ञात हुआ कि 'पू पू' कहने से उसके पेड़ू में उत्तेजना पैदा होती है।

मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि 'ला' के उच्चारण से सीने के ऊपर के भाग में और 'पू' के उच्चारण से पेड़ू में उत्तेजना होती है। मैंने जब इस पर विचार किया, तब मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि अक्षर के उच्चारण ही से शरीर के और भाग पर भी प्रभाव पड़ता है। यह निश्चय करके मैं इस बात को समझ गया कि इन अक्षरों का बार बार का उच्चारण बड़ा महत्व रखता है।

मुझे इन 'अक्षरों' के उच्चारण से दो बातें विदित हुईं—(१) बच्चा जब 'ला' अक्षर को बार बार कह रहा था उस समय वह प्रसन्न था और (२) उसके उच्चारण का प्रभाव उसके शरीर पर पड़ रहा था। मैंने यह भी मालूम किया कि बच्चा इस 'ला' अक्षर को बिना सांस लिए हुए बहुत समय तक कहता रह सकता था और जब उसके फेंफड़े सांस से खाली हो जाते थे, तब वह सांस भर लेता था और फिर 'ला ला' कहने लग जाता था। इसका एक फल तो यह होता था कि वह बहुत देर तक अपने फेंफड़ों में वायु को रोके रहता था और दूसरा यह कि उसके पेट और डायफ्राम* के पुट्ठे देर तक खिचे हुए रहते थे।

बच्चे का अनुकरण

मैंने इस घटना के उपरान्त कई स्वर और अक्षरों का उच्चारण

---

* शरीर का वह भाग, जो सीने और पेट के बीच में होता है। यह मांस का बना हुआ है और इसमें पुट्ठे होते हैं।

आरम्भ किया। मैं अपने बिस्तरे पर बच्चे की भांति पड़ा हुआ (बीमार तो मैं था ही) और प्रकृति पर विश्वास रक्खे एक एक अक्षर को कई कई मिनट तक कहता रहता था। आरम्भ में, मैं इस उच्चारण के परिश्रम को सहन न कर सका। उससे मेरा सिर घूमने लगता था। परन्तु धीरे धीरे मुझे अभ्यास हो गया। इन अक्षरों के उच्चारण के साथ साथ मैं जिस एक और बात का ध्यान रखता था, वह मेरी मनोवृत्ति अथवा चित्त-वृत्ति थी, जिसके विषय में मेरा यह विचार था कि इसका अक्षर से अवश्य सम्बन्ध है। जैसे 'ई' अक्षर के कहने से स्वभावतः मनोभाव प्रफुल्लित तथा प्रसन्न होता है और 'औ' के उच्चारण से गम्भीर, परन्तु मलिन नहीं।

जब मैं कुछ समय के उपरान्त गठिया से अच्छा हो गया, तब मुझे यह निश्चय नहीं था कि मेरी इस उच्चारण-क्रिया का भी इससे (गठिया के अच्छे होने से) कुछ सम्बन्ध है। परन्तु इस सम्बन्ध में मुझे तनिक भी शंका न थी कि इस क्रिया का मेरे मनोभाव पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। परन्तु कुछ दिनों के पश्चात् मुझे यह निश्चय रूप से अनुभव हो गया कि मेरे भीतर कुछ चीज़ स्वयं तैयार हो रही है। मुझे यह अनुभव होने लगा कि मेरा सब शरीर अपने स्वाभाविक रूप में चल रहा है और कुछ स्वर, जिनका मैं उच्चारण करता हूँ, स्पष्ट रूप से मेरे अङ्गों पर अपना प्रभाव डालते हैं। उदाहरणार्थ— 'ई' स्वर के उच्चारण करने से मेरे गले और श्वास-नलिकाओं से बलग़म (कफ़ादि मल) निकलता था। यह बलग़म इन जगहों से तब तक निकलता रहा, जब तक ये बिलकुल अपने स्वाभाविक स्वस्थावस्था में नहीं पहुँच गये। यहां यह प्रश्न होता है कि ये इस अवस्था को कैसे प्राप्त हुए? इस प्रश्न के उत्तर में मुझे यही कहना है कि शायद इस स्वर

उच्चारण-क्रिया को उत्साह के साथ करने ही से ऐसा हुआ। मेरा यही विश्वास था कि शायद एक स्वर एक अंग पर और दूसरा स्वर एक दूसरे अंग पर प्रभाव डाल सके और शायद ये भिन्न प्रकार के स्वर, जिनका मैं उच्चारण कर रहा हूँ मेरे सम्पूर्ण रोगी शरीर को स्वस्थ बनादें। इस स्वर-उच्चारण-क्रिया के करने से मुझे रुधिर-संचार तथा सहायक-तंतुओं (धमनियों) के परिवर्तन को स्वेच्छानुसार वश में करने का एक मार्ग भी मिला। यह मार्ग ऐसा था, जिसके द्वारा शरीर के उन दुर्बल भागों में जहां रुधिर की आवश्यकता होती थी, वहाँ रुधिर पहुँच सकता था।

तीस वर्ष का प्रमाण

उस समय, इस सब के विषय में मुझे निश्चय नहीं था। मैं उस समय इस सम्बन्ध में केवल आशा तथा विश्वास ही कर सकता था। परन्तु आज ३० वर्ष के उपरान्त मेरा इस सम्बन्ध में दृढ़ निश्चय हो गया है। क्योंकि मैंने इसको सैकड़ों बार प्रयोग में लाकर परीक्षा कर ली है। मैं इससे अपने रोग को भगा चुका हूँ। और दूसरों के रोगों को दूर कर चुका हूँ। आज मैं अपने शरीर के भीतर रुधिर को किसी अंग की ओर उसके सुधार अथवा उसको स्वस्थ रखने के अभिप्राय से अपनी इच्छानुसार भेज सकता हूँ।

तीस वर्ष के अनुभव और अन्वेषण के उपरान्त, मैंने जो इस सम्बन्ध में एक कला को विकसित किया है, वह यथार्थ है, सरल है और ऐसी सरल है जैसे सांस लेना—यह वास्तव में ऐसी ही सरल है, जैसे 'ला ला' कहना।

शरीर में यथेष्ट मात्रा में सुन्दर स्वस्थ रुधिर का संचार हो,

यह शरीर की एक प्रधान आवश्यकता है और यही प्रत्येक चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य भी है। प्रत्येक चिकित्सा की विधि में इसी बात के लिए प्रयत्न किया जाता है कि शरीर के अमुक शुष्क तथा रोगी अंग में साधारण रूप से रुधिर-संचार होने लगे। और यह स्मरण रखना चाहिए कि मृत्यु का मुख्य कारण रुधिर-संचार का बंद हो जाना ही है, जिसको हम अभाग्यवश अपने अनेक कुकर्मों से ला उपस्थित करते हैं।

सर्व प्रथम, मैं इस बात को स्पष्ट रूप से कह देना चाहता हूं कि वह कला, जिसके द्वारा एक मनुष्य अपने शरीर के रुधिर-संचार को वशीभूत करने में समर्थ हो सकता है अर्थात् उसको अपनी इच्छानुसार इधर-उधर कर सकता है, स्वास्थ्य के लिए राम-बाण का काम करेगी। ऐसी कला स्वास्थ्य के लिए एक मात्र साधन ही नहीं है, किन्तु यह और सब साधनों में सर्व प्रथम, आवश्यक तथा महत्व-पूर्ण साधन है। बस, इस प्रकार जो मनुष्य अपने रुधिर-संचार को अपने आधीन कर लेगा, वह उस एंजिन ड्राइवर के समान हो जायगा, जिसका हाथ सदा एंजिन की श्वास-नलिका पर रहता है।

मैंने स्वर-उच्चारण-क्रिया के द्वारा बस उस श्वास-नलिका को प्राप्त कर लिया है, जिससे सब शरीर वश में रहता है और जिसका सम्पूर्ण रुधिर-संचार पर अधिकार है।

कल्पित अथवा वास्तविक

अब इस श्वास-नलिका के विषय में प्रश्न यह है कि क्या यह वास्तव में रुधिर-संचार को वशीभूत करती है अथवा ऐसी मेरी कोरी कल्पना ही है, जिससे मैं, 'विश्वासो फलदायकः' के अनुसार थोड़ा-सा लाभ उठा लेता हूं। मैं अपने ३० वर्ष

के अनुभव के बल पर इस प्रश्न का यह उत्तर देता हूं कि श्वास-नलिका पर मेरा वास्तविक अधिकार है और इस प्रमाण के विषय में यही कहा जा सकता है कि हाथ कंगन को आरसी क्या ? अर्थात् जिसकी इच्छा हो, वह स्वयं करके देख ले। यदि तुम खड़े होकर अपनी नासिका द्वारा आठ दस बार खूब गहरा सांस लो और अपने फैफड़ों को यथा-शक्ति खाली कर दो, तो तुम अपने अंदर कुछ उथल-पुथल का अनुभव करोगे। यदि तुम को व्यायाम का अभ्यास नहीं है, तो ऐसा करने से तुम्हारा सिर घूमने लगेगा—मानों तुमको प्राण-वायु (आक्सिजन) ने नशा कर दिया हो। यदि तुममें उस समय कोई यह कहे कि यह तो तुम्हारी कल्पना का फल है, तो तुम उस पर अवश्य हँस दोगे। तुम उस समय यह समझ जाओगे कि वह उथल-पुथल तुम्हारे गहरे सांस लेने के कारण हो उठी है। बस, यही बात तुमको अधिकांश में मेरी स्वर-उच्चारण-क्रिया के सम्बन्ध में भी समझ लेनी चाहिए। यह क्रिया और सब प्रकार की श्वास-क्रियाओं से भिन्न है और इसके फल भी, जो बड़े महत्व के हैं, दूसरे ही हैं और आक्सिजन को अन्दर लेजाने की क्रिया (प्राणायाम) से भी भिन्न हैं। उदाहरणार्थ—यह, जैसा मैं पहिले कह चुका हूं, ज्ञान-तंतुओं (धमनियों) को उत्तेजित करती है। गायक लोग इस प्रकार की उत्तेजनाओं का अनुभव किया करते हैं। इसलिए, यह भी एक कारण है कि संगीत को लाभदायक माना जाता है। ज्ञान-तंतुओं के वश में रुधिर-संचार और रिसने वाली ग्रंथियों तथा शरीर के प्रधान अंगों के काम हैं और मेरी स्वर-उच्चारण की क्रिया इन ज्ञान-तंतुओं को चलाती है।

मुझे शायद इस सम्बन्ध में अभी और भी स्पष्ट रूप से बतलाना चाहिये। जो मनुष्य अपनी मुट्ठियों को बांध लेता तथा

भौओं को चढ़ा लेता है, वह बहुत जल्द अपनी मानसिक तथा शारीरिक शान्ति को त्याग कर क्रोधाग्नि में प्रवेश हो जाता है। उसका मुख लाल पड़ जाता है, उसके हृदय की धड़कन बढ़ जाती है, उसके गुर्दों की ग्रंथियों से रुधिर में उत्तेजना उत्पन्न हो जाती है और उसका रुधिर-संचार बदल जाता है। इस सब का अभिप्राय यह है कि सहायक-तन्तु उत्तेजित हो गये हैं। इसी प्रकार वह मनुष्य, जो हँसते समय अपने होंटों को एक दूसरा रूप देता है और अपनी आँखों को भींचता है, अपने मनोभाव को बदलता है। मनोवृत्ति का यही विकार प्रेम, प्रसन्नता, भय तथा शोक आदि के भावों में पाया जाता है। मनोवृत्ति के ये सब परिवर्तन मज्जा तन्तुओं के उत्तेजन ही के कारण होते हैं।

हमारा दैनिक भाषण जिसके द्वारा हम अपने विचार-भावों को प्रकट करते हैं 'अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ, इन १६ स्वरों पर निर्भर है। बेला बाजा, जो मनुष्य के कंठ के अतिरिक्त संसार के और सब बाजों से अधिक भावोत्पादक है, एक स्वर-उच्चारण-यंत्र के सिवाय और क्या है? बेला के स्वर हमारे शरीर के अंगों की उत्तेजनाओं ही के समान हैं। यदि तुम अपने कंठ द्वारा अपने शरीर में मनोवाञ्छित उत्तेजनाएं (लहरें) उत्पन्न करना चाहते हो, तो भला तुमको ऐसा करने से कौन रोक सकता है?

क्या तुमने भी उस समय, जब कि बीन बज रहा हो, किसी कुत्ते, हिरण अथवा सांप की दशा को देखा है? बीन को सुन कर उनके अन्दर लहरें उठती हैं। वह मनुष्य वास्तव में बड़ा साहसी समझा जायगा, जो इन भावोत्पादक, सार्थक तथा गुप्त मंत्र-स्वरूप स्वरों के प्रभाव तथा प्रयोगों को व्यर्थ बतलाएगा।

बस मेरा ऐसा आधार है, जिस पर मेरी श्वास-क्रिया का

महत्व निर्भर है। यदि तुम इसका अनुशीलन करना चाहते हो, तो निम्नांकित विधि को ग्रहण करो।

स्वर और स्वास्थ्य

सबसे पहिले तुमको किसी स्वर की भावुकता के साथ कल्पना करना चाहिए। तब तुमको उस को उच्चारण करना चाहिए। प्रत्येक स्वर का जब इस प्रकार उच्चारण किया जायगा, तब वह अपना विशेष प्रभाव दिखलाएगा।

'ई' का प्रभाव तालू, गले तथा मस्तिष्क पर पड़ता है।

'ए' का उच्चारण गले और श्वास-नलिका के उद्भव-स्थान तक पहुँचता है।

'आ' के उच्चारण से फैंफड़ों के ऊपरी भाग तथा सीने पर प्रभाव होता है।

'औ' का उच्चारण नीचे के फेंफड़ों, सीने और डायफ्राम (पृष्ठ ३९ का फुटनोट देखिए) पर प्रभाव डालता है।

'ऊ' जिगर पेट और अंतड़ियों को उत्तेजित करता है।

मैंने सब मिलाकर ऐसे ३१ प्रकार के भिन्न भिन्न उच्चारणों का अभ्यास किया है, जिनको प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकतानुसार प्रयोग में ला सकता है। इनकी प्रयोग-विधि बहुत सरल है, जिस की निम्नांकित चार अवस्थाएं हैं—

(१) स्वर के उच्चारण के लिए तुमको इस प्रकार तैयार होना चाहिए जैसे तुम किसी धर्म-कार्य को करने के लिए तैयार होते हो। इससे मेरा यह अभिप्राय है कि तुम अपने विचारों को उस विशेष भाव पर एकत्रित तथा एकाग्र कर दो, जो तुम्हारे स्वर के उपयुक्त अथवा उसका सहयोगी भाव है। ऐसा करना

अति आवश्यक है। बिना इसके बहुत कम लाभ की प्राप्ति होगी। कल्पना करो कि तुम पहिले 'ई' स्वर से आरम्भ करते हो। 'ई' स्वर का सहयोगी भाव आनन्द का भाव अथवा प्रसन्नता का है। इसलिये, इसका उच्चारण करने से पहिले तुम अपने बाहर-भीतर प्रसन्नता के भाव आच्छादित करलो, मुसकराहट से तुम्हारे होट कुछ खुले हुए हों, और तुम्हारी अधखुली आंखों से प्रसन्नता का भाव प्रकट हो रहा हो। इस सब आनंद की वृत्ति में न तो कहीं तनिक भी गम्भीरता का भाव होवे और न इस में कोई भेद तथा किसी प्रकार का अभाव ही हो। बस, इस वृत्ति को पूर्ण यथार्थ रूप से प्राप्त करना चाहिए और यदि तुम 'ई' की वृत्ति के साथ 'औ' की अथवा किसी अन्य स्वर की वृत्ति को मिलाते हो, तो ऐसा करने से तुम्हारे मन तथा शरीर को पूर्ण रूप से लाभ न पहुँचेगा।

(२) जब तुम उक्त प्रकार से तैयार हो जाओ, तब तुमको मुख को बंद करके नासिका द्वारा भीतर की ओर सांस लेना चाहिए। सांस गहरा और पूरा लिया जावे और उसके उपरान्त 'ई' का उच्चारण किया जावे।

(३) जब 'ई' का उच्चारण हो चुके, तब सांस को वहीं का वहीं एक, दो, तीन अथवा चार सैकंड तक अपनी सामर्थ्य के अनुसार रोक लिया जावे। तुमको आगे धीरे धीरे इस रोकने के समय को बढ़ाना चाहिए। जब तुम सांस को रोके रहो, तब तुमको स्पष्ट रूप से स्वर पर ध्यान रखना चाहिए। ऐसा करने का एक कारण है, जिस को तुम उस समय जानोगे, जब कि तुम इस क्रिया का अच्छा अभ्यास कर लोगे। जिस स्वर विशेष का तुमने प्रयोग किया है, उसके उच्चारण करने से उन अंगों पर जिन पर उसका प्रभाव पड़ता है, खिंचाव पड़ता है और उन के रुधिर

की मात्रा में भी उन सहायक तंतुओं के संचालन से, जिन को तुमने स्वर के सहयोगी भाव द्वारा पहिले से उत्तेजित कर लिया है, कुछ परिवर्तन हो जाता है। यदि तुमको मेरा यह कथन मिथ्या प्रतीत होता है, तो मेरे पास इसका कोई इलाज नहीं है। मैं तो तुम्हारे सन्मुख उस बात को उपस्थित कर रहा हूं, जो वास्तव में होती है। इसकी वैज्ञानिक परीक्षा भी हो चुकी है। इस क्रिया को वाइना नगर के एक प्रोफ़ेसर श्रीयुत हाजेक ने एक्स-रे * लगाकर देखा भी है। इसलिए, इस सम्बन्ध में अब शंका-आशंका करना व्यर्थ है।

आन्तरिक संदेश

रुधिर की मात्रा में इस प्रकार के परिवर्तन का होना एक प्रकार की आन्तरिक ऊर्ध्वगामिनी उत्तेजना है। इसके द्वारा शरीर के भीतर के दूषित पदार्थ दूर होते हैं। और वह उन सैलों के लिए, जिनका भरण-पोषण भलीभाँति नहीं हुआ है और जो भूख के कारण मृत-प्राय हो रही हैं, भोजन की सामिग्री ले जाता है। यह परिवर्तन मंद गति से होता है। और यदि कुछ दिनों तक इसको बार बार पैदा किया जावे, तो इससे आश्चर्य-जनक फल प्राप्त होते हैं।

(४) जब तुम स्वर का अनुभव-पूर्वक उच्चारण कर चुको और उसके उपरान्त उस पर ध्यान रखते हुए सांस को भीतर खींच लो, तब तुम को स्वर का उच्चारण करते हुए फिर सांस को बाहर निकालना चाहिए। परन्तु स्वर पर ध्यान अवश्य बना रहे। उदाहरणार्थ—ई ई ई ई ई इस प्रकार एक ही सांस में कहते

* एक प्रकार का देखने का यंत्र है, जिसके द्वारा शरीर के भीतर के भाग को देखा जाता है।

हुए ही चले जाओ, यहाँ तक कि तुम्हारे फेंफड़े इस प्रकार सांस से खाली हो जावें, जिस प्रकार तुम उनको एक साथ सांस बाहर निकाल कर बिना किसी कष्ट के ख़ाली कर देते हो। इस क्रिया को, भोजन करने के पूर्व, नित्यप्रति करने की कोशिश करना चाहिए।

इसी प्रकार एक सांस में 'ह ऊ ऊ ऊ ऊ'—'ह ऊ ऊ ऊ ऊ ऊ' का उच्चारण करना चाहिए। यहाँ 'ह' के परिवर्तन पर ध्यान देना चाहिए। 'ह' के उच्चारण से एक नई प्रकार की उत्तेजना होती है, जो बड़े महत्व की है। 'ऊ ऊ ऊ ऊ ऊ' का उच्चारण इस प्रकार करना चाहिए, जैसे मानों होटों द्वारा कोई वस्तु फूंकी जा रही है। इस 'ऊ' स्वर का सहयोगी भाव गम्भीरता है, जिसका अर्थ निराशा अथवा शोक नहीं है। मेरा यह दृढ़ता-पूर्वक कहना है कि इस क्रिया को ठीक उसी प्रकार से करना चाहिए, जिस प्रकार मैंने ऊपर बतलाया है। इसको आसानी से ठीक रीति से भी किया जा सकता है और ग़लत रीति से भी।

इस छोटे से खेल में सब प्रकार के स्वर-समुदायों तथा उनके प्रयोगों का देना सम्भव नहीं है। मैं उनमें से यहाँ पर बस उन्हीं का उल्लेख करता हूँ, जो सबसे अधिक महत्व-पूर्ण हैं। ये ही, बहुत से लोगों की जो आवश्यकता है, उससे कहीं अधिक की, पूर्ति कर देंगे।

'ई' स्वर का प्रभाव शरीर के ऊपरी भाग पर पड़ता है। यह दिल और दिमाग़ पर असर करता है यह सिर-दर्द और दिल के रोगों के लिए विशेष रूप से लाभदायक है। इसका ऐसे मनुष्यों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है, जो उदास-वृति तथा क्रोधी स्वभाव के होते हैं।

'ए' के उच्चारण से गला, श्वास-नलिका का उद्‌गम स्थान, और श्वास-नालिका के उद्‌गम-स्थान की खिड़की शुद्ध होती है। इस स्वर का प्रयोग विशेष रूप से गानेवालों, अध्यापकों तथा उन लोगों में होता है, जिनको अधिक देर तक बोलना पड़ता है। यह अन्दर की नलियों के अन्दर की लुआबदार झिल्ली को स्वस्थ बनाता है। इसका प्रभाव गले की ग्रंथियों पर भी पड़ता है। ये ग्रन्थियाँ टैंटुए के नीचे होती हैं। इन ग्रन्थियों के बढ़ जाने से घेंघे का रोग हो जाता है। मैंने इस रोग के सैकड़ों रोगियों को इस स्वर के प्रयोग से अच्छा होते देखा है।

'आ' के उच्चारण से गले का वह भाग, जिसमें होकर खाना जाता है, ठीक होता है, ऊपर वाली तीनों पसलियाँ संचालित होती हैं और मस्तिष्क में उत्तेजना उत्पन्न होती है। यह हृदय के संचालन को नहीं रुकने देता और फेंफड़ों के उन ऊपरी भागों पर जहाँ पर साधारणतः क्षयीरोग आरम्भ होता है, प्रभाव डालता है। इस स्वर का अभ्यास उन लोगों को तो अवश्य ही करना चाहिए, जिनका क्षयीरोग होने की सम्भावना है। इस स्वर का उच्चारण उन लोगों को भी करना चाहिए जो झुक कर अँधेरे कमरों में काम करते हैं।

'आ' और 'औ' का संयुक्त उच्चारण कुछ गहरा होता है। यह सीने के मध्य भाग को उत्तेजित करता है। यह निमोनिया अथवा प्लूरैसी * के लिए बहुत लाभदायक है और यह उन चिह्नों को भी दूर कर देता है, जो इन रोगों के कारण पैदा हो जाते हैं।

---

* यह एक रोग है जिसमें फेंफड़ों के ऊपरी भाग की दुहरी झिल्ली में सूजन आ जाती है और उस सूजन के कारण झिल्ली के दोनों परतों के बीच में पानी भर जाता है।

'औ' से हृदय पर प्रभाव पड़ता है। इसके उच्चारण में भावोत्पादक भाव रहता है। इसका प्रयोग ख़ूब तैयारी के साथ करना चाहिए।

मैंने हृदय के लिए एक विशेष क्रिया को निकाला है, जो यह है—'म म म म—प औ म म म म म'।

इसको दिन में केवल एक बार करना चाहिए और जो मनुष्य दुर्बल हृदय के हैं, उनको इसे तब तक नहीं करना चाहिए, जब तक उन्हें इस आगे लिखी क्रिया का अभ्यास न हो जाय 'म म म प औ म म म प ए ए ए ए ई ई ई ई ई ई ई'*

'औ इ' इसका प्रभाव डायफ्राम, जिगर, पेट और अंतड़ियों पर पड़ता है।

'औ औ' 'ई ई' के उच्चारण से गुर्दों पर असर होता है और इससे सब ख़राबी दूर होती है।

'ऊ' का असर पेड़ू पर होता है। मैं इसके द्वारा क़ब्ज़ को कितने ही दिनों का क्यों न हो, दूर कर सकता हूँ। यह स्त्रियों की कोख के लिए बहुत उपयोगी है।

'औ औ ई ई' के उच्चारण का सीधा उपस्थेन्द्रिय पर असर होता है। यह इस अंग को जिसकी कभी परवा नहीं की जाती, ठीक रखता है।

स्वर-उच्चारण-क्रिया के शुरू करनेवालों को पहिले 'ई'

---

* यह सदा स्मरण रहे कि इस प्रकार के अक्षर एक सांस में बोले जाते हैं। एक अक्षर को कई बार इसलिये लिखा है कि उसके उच्चारण करने में इतना समय लगे, जितना उसके इतने बार के उच्चारण में लगना चाहिए, परन्तु उच्चारण वही एक सांस में हो।

और 'औ' से शुरू करना चाहिए और इन दोनों स्वरों में से हर एक का भोजन करने से पहिले पांच पांच बार उच्चारण करना चाहिए। जो बीमार हों, उनके लिए केवल तीन तीन बार ही का उच्चारण काफ़ी होगा। इसके बाद 'ई', 'ऐ' और 'अ' का अभ्यास करना चाहिए। मैं इन तीनों को जीवन की 'त्रिताल' कहता हूँ। क्योंकि ये प्रत्येक मनुष्य के लिए ऐसे ही उपयोगी हैं, जैसे ताल संगीत के लिए।

दसवाँ प्रकरण

अविश्वासियों को उत्तर

पेशवाओं के पतन के साथ साथ बापू गोखलों, भवनराउ प्रतिनिधियों तथा महादाजी सिंधियों की वीर जाति का भी लोप हो गया। इनके उत्तराधिकारी सरकारी कर्मचारी हुए, जिनका जन्म, शिक्षा तथा रीति-रिवाज़ अपने पूर्वजों से पूर्णरूप से भिन्न हुए। सरकारी कर्मचारियों की इस नयी जाति ने अपनी संतान के सन्मुख अपने स्वास्थ्य को खोकर अध्ययन करने, परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने और सरकारी पदों को प्राप्त करने का आदर्श उपस्थित किया। वे अपने पड़ोसियों के स्वस्थ तथा बलिष्ठ बालकों को देख कर हँसते तथा घृणा करते थे और प्रसन्न होकर उन पर यह आक्षेप किया करते थे कि ये अपने उन भाइयों के घरों में, जो इनसे अधिक भाग्यवान् हैं अर्थात् जो परीक्षा पास करके सरकारी नौकर हो गये हैं, जल भरने अथवा इसी प्रकार के अन्य नीच काम करने के योग्य हैं। व्यायाम के सम्बन्ध में इस प्रकार की मनोवृति उपरोक्त जाति की गत दो या तीन पीढ़ियों में प्रधान रूप से रही। यह निश्चय रूप से नहीं कहा जा सकता है कि यह भाव इस जाति में से अब पूर्ण रूप से निकल गया है। परन्तु इस समय आशा के लक्षण स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। हमारे नवयुवक तथा युवतियों की खेल-कूद तथा स्काउट-आंदोलन में रुचि देखी जाती है। परन्तु अभी इस सम्बन्ध में शंका है कि इन आंदोलनों ने हमारे नवयुवक तथा युवतियों में वास्तविक

शारीरिक स्वास्थ्य तथा सामर्थ्य के प्रति सच्चे प्रेम की वृद्धि कर दी है।

एक पराजित देश का आत्म-विश्वास धीरे धीरे चला जाया करता है और वह अन्ततः अपने विजेता के बाह्याडम्बरों तथा दुर्व्यसनों का तो प्रायः अंधानुगामी हो जाता है, परन्तु देश-भक्ति तथा एकता आदि उसके (विजेता के) स्वाभाविक गुणों का अनुगमन नहीं करता। हमारे देश में इस पतन-काल में जिनके आत्म-विश्वास की मात्रा विलुप्त हो चुकी है, वे मनुष्य अपनी प्राचीन संस्कृति पर प्रसन्नता-पूर्वक आक्षेप करते हैं, बहुत से हमारे देश-वासियों पर इस भ्रम-जनक तर्क का प्रभाव पड़ा हुआ है कि यदि हमारी सभ्यता अच्छी और सच्ची होती, तो हम इस वर्तमान शोचनीय अवस्था को प्राप्त न होते। एक बार हिन्दू-विश्वविद्यालय के उपाधि-वितरण के अवसर पर बरौदा राज्य के महाराजा संजीवराव गायकवाड़ जैसे विद्वान तथा सुशिक्षित हमारे देशवासी ने भी हमारी प्राचीन सभ्यता को हीन बतलाया था। तब फिर इसमें आश्चर्य ही क्या है, जब हमारे देश के साधारण आदमी इस प्रकार का मत रक्खें, विदेशियों का क़रीब क़रीब सभी बातों में अंधे बन कर अनुकरण करें और उनके खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने, बात-चीत तथा चाल-ढाल आदि में न केवल उपहास-योग्य अनुकरण ही करें किन्तु यह भी सोचें कि हमारे धार्म्मिक विचार तथा रीत-रिवाज़ पश्चिम देश के समान ही हो जाने चाहिए ? परन्तु हम अपने साधारण भाइयों से, जिनको यह ज्ञान भी नहीं है कि हमारे प्राचीन वैदिक, पौराणिक तथा वैज्ञानिक साहित्य में क्या क्या पुस्तकें हैं और उनके प्रतिपादित विषय क्या हैं, यह आशा नहीं कर सकते हैं कि वे अपने आर्य-साहित्य के रहस्यों तथा सत्यों को जान सकते

तथा उनका अन्वेषण कर सकते हैं। अज्ञान तो इनको अपनी सभ्यता से है ही, परन्तु इस पर भी ये धृष्टता यह करते हैं कि ये अपने वेद और शास्त्रों की निन्दा करते हैं, अपनी प्राचीन सभ्यता का विरोध करते हैं, अपने पुराणों को गप्पाष्टक बतलाते हैं, और निदान, ये अपनी प्राचीन सभ्यता को त्यागते अथवा उसके त्यागने का प्रयत्न करते हैं। बस, पश्चिमी सभ्यता के अंधानुगमन का यह दुष्प्रभाव पड़ा है।

इसके विरुद्ध जो हमारे भाई मंत्र-शास्त्र में पूर्ण विश्वास रखते थे और जिन्होंने इस शास्त्र की 'रुद्रयमल' और पतंजलि के 'योग-शास्त्र' आदि पुस्तकों का अध्ययन किया था वे अपने ज्ञान को आधुनिक वैद्यक शास्त्र (डाक्टरी) की भांति उपस्थित कर के दूसरों को नहीं सिखा सकते थे।

इसलिए, हमको उस समय तक जहाँ का तहाँ रहना पड़ा, जब तक हमारे 'जप' अर्थात् किसी विचार विशेष पर अविरल रूप से ध्यान करने के महत्व को कौइ नाम के विद्वान ने हमारे सन्मुख प्रकट न कर दिया, अथवा लैज़र लज़रिओ ने हमको हमारे 'बीज-मंत्रों' के आध्यात्मिक तथा चिकित्सात्मक महत्व को नहीं बतला दिया, अथवा हैडोक ने हमारे 'विचार-वल' की महिमा का वर्णन नहीं कर दिया अथवा जेम्स ने 'मनो-विज्ञान' को संसार में उपस्थित नहीं कर दिया। यदि कोई मनुष्य इन विद्वानों की पुस्तकों को सरसरी तौर से भी पढ़े और इनके उपदेशों की अपने ऋषियों के उपदेशों से तुलना करे तो, उसको निस्संदेह हमारे पूर्वजों के गहन ज्ञान पर आश्चर्य होगा और वह मूक होकर उनके प्रति अपने मस्तक को सादर झुका देगा।

हमारे ऋषियों ने ऐसे यंत्रों के बिना ही जो इस समय हमें विज्ञान द्वारा प्राप्त हैं, ऐसे ऐसे सत्यों का अनुसन्धान किया था,

जिनकी हमें आज मुक्तकण्ठ होकर प्रशंसा करनी पड़ती है। उनमें से कुछ उदाहरणार्थ निम्नांकित हैं—

(१) ये बातें हमारे बहुत से पाठकों को केवल कपोल-कल्पित ज्ञात होंगी कि हमारे अथर्व वेद में, जो तीन हज़ार से अधिक वर्ष का पुराना बतलाया जाता है, पिशाब कराने की नली का बयान आता है और ऋग्वेद से यह पता चलता है कि उस समय के वैद्य लोग एक स्त्री के किसी धातु की टांग लगा कर, उसको चलने फिरने के योग्य कर सकते थे *।

(२) प्राचीन ऋषि उच्च कोटि के गणित से भी पूर्ण रूप से परिचित ज्ञात होते हैं। वे इस वाक्य का बहुत प्रयोग करते थे— 'यदि पूर्ण में से पूर्ण को घटा दिया जावे, तो पूर्ण ही शेष रहेगा' †।

(३) पुराणों में एक कहानी है कि सोम ने दक्ष की २७ कन्याओं के साथ विवाह किया, जिनसे ये चार ग्रह उत्पन्न हुए— (१) मंगल (२) बुध (३) वृहस्पति और (४) शुक्र। इन

---

* (१) प्रति जघा विश्पलाया अधत्तम्।

अर्थात् विश्पला के लिए टांग तैयार कर दी गई।

[ऋग्वेद, १।११८।८]

(२) चरित्रं हि वारि वाच्छेदि पर्णमाजा खेलस्य परितक्म्यायाम्।

सद्योजंघामायसीं विश्पलायै धनेहिते सर्तवे प्रत्यधत्तम्॥

[ऋग्वेद, १।११६।१५]

अर्थात् जब खेल के युद्ध में विश्पला का पैर जंगली चिड़िया के पंख की भाँति अलग हो गया, तब तुमने उसको लोहे की टाँग दे दी, जिससे वह युद्ध के समय तक घूम-फिर सके।

† पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवविशिष्यते।

विवाहों का यथार्थ अर्थ एक बैंटले नाम के यूरोपीय ज्योतिषी ने यह प्रकट किया है कि चन्द्रमा का इन बहुत से तारा-मण्डलों में से कुछ तारा-मण्डलों से सम्बन्ध है। बैंटले की इस गणित विद्या को इस विद्या से एक दूसरे यूरोपीय विद्वान हिंडमैन ने भी मान लिया है। अब इस पुराण की कथा के विषय में यह निश्चय-पूर्वक कहा जा सकता है कि यह कथा ज्योतिष-शास्त्र की एक घटना का उल्लेख करती है, जो ईसवी सन् के १४२४ तथा १४२३ वर्ष पूर्व, लगभग १६ महीने तक रही थी।

(४) इस बात की पुष्टि के लिए ग्रीक देश के इतिहासकार साक्षी हैं कि सिकन्दर राजा के समय में पंजाब प्रांत में ऐसे हकीम और वैद्य विद्यमान थे, जो सांप के काटे का शर्तिया इलाज करते थे और उनको सिकन्दर ने लाचार होकर, उस समय अपने यहाँ रक्खा, जब उसके हकीमों ने यह स्वीकार कर लिया कि हम इस इलाज को नहीं कर सकते।

(५) पश्चिमी भारत की सङ्गीत-प्रिय-समिति (Philharmonic Society of Western India) के सदस्य श्री क्लेमेंट्स और राउ बहादुर देवल ने यह सिद्ध कर दिया है कि 'संगीत-रत्नाकर' के लेखक ने जिस प्रकार समान-प्रवाह [harmonic Progression] के सिद्धान्त के सम्बन्ध में बतलाया है वही बात हैल्मोज़ नाम के एक पदार्थ-विज्ञान-वेत्ता के उन शब्दों में कही जा सकती है, जो उसने इस सम्बन्ध में प्रयोग किये हैं। और यह बात लोक-प्रसिद्ध है कि 'संगीत-रत्नाकर' के लेखक के पास स्वर का ज्ञान प्राप्त करने का कोई यंत्र नहीं था।

(६) आजकल विज्ञान में जो सर जगदीशचन्द्र बोस ने खोज की है, उससे यह सिद्ध हो गया है कि चन्द्रमा का बनस्पति पर प्रभाव पड़ता है।

'फ़िज़ीकल कलचर' नाम की एक स्वास्थ्य सम्बन्धी अंग्रेज़ी मासिक पत्रिका के अप्रैल, सन् १९२७ ई० के अंक में डाक्टर बरनार मैक़फ़ैडन लिखता है, "अभी थोड़े समय से विज्ञान-वेत्ता इस बात को जानने लगे हैं कि चन्द्रमा का प्रकाश बनस्पति के लिए बड़ा उत्तेजक होता है।" इसलिए, किसानों का यह पुराना विश्वास, कि वे फ़सलें, जो ज़मीन के अन्दर होती हैं कृष्ण पक्ष में बोई जानी चाहिए और वे फ़सलें, जो इसके ऊपर होती हैं, शुक्ल पक्ष में, बर्ता ही जाता रहा, चाहे विज्ञानवेत्ता उनके इस विश्वास को आज तक गँवारों का अंध-विश्वास ही समझते रहे। इस सम्बन्ध में निम्नांकित श्रीकृष्ण के वचन को स्मरण रखना चाहिए—

पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मका।

[भगवद्गीता, १५ । १३]

अर्थात् मैं चन्द्रमा स्वरूप होकर जो बनस्पितियों का जीवन है सब औषधियों का पालन-पोषण करता हूं।

ये उदाहरण आजकल के एक विचारवान् अविश्वासी मनुष्य को निस्सन्देह रूप से यह विश्वास दिलाने के लिए काफ़ी होंगे कि हमारे देश, हिन्दुस्तान के प्राचीन ऋषियों तथा लेखकों के विचार बहुत गम्भीर, गहन तथा दूर-दृष्टि पूर्ण थे और हमको अपने प्राचीन वेद तथा पुराणों की पूर्णरूप से निन्दा करने के पूर्व कुछ विचार अवश्य कर लेना चाहिए।

इस सब लिखने से हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि हमारे पाठकों को सब बातों पर विश्वास ही कर लेना चाहिए। परन्तु यहाँ पर हमें सूर्य नमस्कारों के सम्बन्ध में यह कहना है कि प्रत्येक स्त्री-पुरुष, बीज-मंत्रों के साथ, इन नमस्कारों को करें और फिर देखें कि इनसे कुछ लाभ होता है या नहीं।

कुछ और आपत्तियों के उत्तर

बहुत से स्त्री-पुरुष प्रायः यह पूछा करते हैं कि क्या स्त्रियों, बच्चों, तथा वृद्ध लोगों के लिए भी शारीरिक व्यायाम करना उचित तथा आवश्यक है ? क्या बीज-मंत्रों का भी कोई महत्व है ? क्या सूर्य-नमस्कार में सूर्य पर एकाग्रचित्त होने की भी कोई आवश्यकता है ? इत्यादि इत्यादि। अब इन प्रश्नों का उत्तर दिया जायगा।

स्त्रियां और व्यायाम

उन मनुष्यों के लिए, जिनका यह मत है कि स्त्रियों को व्यायाम की आवश्यकता नहीं है, हमें अपने देश के एक कवि का वह बचन उपस्थित करना है—

नारी निन्दा मत करो, नारी नर की खान।
जिस खान से पैदा हुए, ध्रुव प्रहलाद समान॥

[कबीर]

और यह कहना है कि एक दुर्बल और रोगिणी माता स्वस्थ, बलवान तथा चिरायु होने वाले बच्चे उत्पन्न नहीं कर सकती। एक लड़की के जीवन की सब से बड़ी इच्छा यह होनी चाहिए कि मैं सुन्दर, सुदृढ़ तथा स्वस्थ बनूँ। स्त्री के लिए माता होना एक ईश्वरी अधिकार है। संसार में सदा बलवान और स्वस्थ माताएं ही उत्तम बच्चे उत्पन्न करती आई हैं।

डाक्टर जोनाज़ सिल्यूपाज का कथन है कि एक देश का शारीरिक बल साधारणतः वहाँ की महिलाओं के स्वास्थ्य पर निर्भर है।

अब प्रश्न यह है कि क्या इस समय हमारे देश की लड़कियाँ

और स्त्रियाँ शारीरिक पूर्णता के विचार से आदर्श हैं ? इस बात से कोई 'नहीं' न करेगा कि उनकी ऐसी अवस्था नहीं है।

क्या इस सम्बन्ध में यह बात सत्य नहीं है कि ये उन माता-पिताओं की सन्तान हैं, जो शायद ही कभी अपनी साधारण स्वस्थावस्था में रहे हैं।

क्या यह बात सत्य नहीं है कि आजकल जो लड़कियों के स्कूल हैं, वे केवल बाड़ों के समान हैं, जिनमें उनको दिन में तीन घंटे सुबह और तीन घंटे शाम को बैठना पड़ता है और जहाँ उनके लिए खेल-कूद का कुछ भी प्रबन्ध नहीं है, जिसकी इस वर्तमान समय में और भी अधिक आवश्यकता है। क्योंकि इस समय जीवन की सब प्राचीन चाल-ढाल बदल गई, लड़कियाँ घर के मिहनत के काम-काजों को, जैसे पीसना, पानी भरना, घर के कपड़े धोना आदि को नहीं करती हैं और न आजकल वे प्राचीन खेलों ही को, चैसे फुगदी* और कोम्बदा† आदि को पसन्द करती हैं।

---

* इस खेल को दो लड़कियाँ मिल कर खेलती हैं। इसमें दो लड़कियाँ एक दूसरे के सामने खड़ी हो जाती हैं। दोनों में से हर एक लड़की अपनी अपनी बाँहों को एक दूसरे पर रख लेती है। इसके बाद एक दूसरे के हाथ में हाथ डाल कर दोनों गोलाकार चक्कर में घूमने लगती हैं। इस प्रकार दो दो मिलकर बहुत सी लड़कियाँ इस खेल को खेलती हैं। घूमते घूमते जब वे थक जाती हैं, तब एक दूसरे के हाथों को छोड़ कर अलग हो जाती हैं। कुछ देर सुस्ता कर वे फिर खेलने लगती हैं। बस, इसी प्रकार खेल होता है और खूब थक जाने पर बन्द हो जाता है।

† इस खेल को दो या दो से अधिक लड़कियाँ खेलती हैं। इसमें ये अपने धड़ को दाएं बाएं झुलाती हुई चलती हैं। इसमें दो स्थान होते हैं एक

क्या यह बात सत्य नहीं है कि आजकल की लड़कियां अपने शरीर को भार्या तथा माता के कर्तव्यों को पालन करने के योग्य बनाने के पूर्व, असमय ही में, अपने मानसिक विचारों से युवा-वस्था का अनुभव करने लगती हैं ?

क्या यह बात सत्य नहीं है कि हमारी बहुत सी युवा स्त्रियाँ तथा लड़कियां क्षयी रोग तथा अन्य भयंकर रोगों की शिकार बन जाती हैं।

क्या यह बात सत्य नहीं है कि हमारी लड़कियाँ विवाह से घबड़ाती हैं ? क्योंकि वे यह डरती हैं कि लड़के-बच्चे होने पर हम अपने कर्तव्य का पालन न कर सकेंगी।

क्या यह बात सत्य नहीं है कि साधारणतः हमारी युवा स्त्रियां अपने मन में जनन क्रिया से बड़ी भयभीत रहती हैं ?

क्या यह बात सत्य नहीं है कि शहरों के रहने वालों के बच्चे अधिक संख्या में मरते हैं ?

क्या यह बात सत्य नहीं है कि आजकल बहुत कम युवा माताएं अपने बच्चों को स्वयं दूध पिलाने के लिए समर्थ हैं और बच्चों को अधिकतर कृत्रिम खाने के पदार्थ ही दिये जा रहे हैं ? उसका केवल कारण यह है कि स्त्रियाँ उस समय माता बन जाती हैं, जिस समय वे माता बनने के योग्य नहीं होती हैं।

क्या यह बात सत्य और हमारे लिए लज्जा की नहीं है कि जीवन का बीमा करने वाली कम्पनियाँ यूरुप और अमरीका

चलने का और दूसरा ठहरने का। इन दोनों स्थानों के बीच ये इसी प्रकार दाएं बाएं अपने धड़ को झुकाती हुई जाती-आती रहती हैं और जब ये थक जाती हैं, तब खेल बन्द हो जाता है।

में पुरुषों के साथ साथ स्त्रियों का भी बीमा करें और हमारे देश में ये कम्पनियाँ हमारी विवाहित स्त्रियों का बीमा किसी दशा में भी करने के लिए तैयार न हों ?*

इस अति शोचनीय अवस्था के सुधार का एक मात्र उपाय यह है कि हमको चाहिये, कि हम अपनी लड़कियों तथा स्त्रियों से सूर्य-नमस्कार जैसा किसी वैज्ञानिक व्यायाम पद्धति का अनुसरण कराएं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि लड़कियों तथा युवा स्त्रियों को इन नमस्कारों से लाभ होता है। ५२ वर्ष की अवस्था की स्त्रियों के विषय में यह देखा गया है कि उन्होंने इन नमस्कारों को थोड़े ही दिन करने के उपरांत अपनी युवावस्था को प्राप्त कर लिया है। जिन लोगों को आर्थिक स्थिति अच्छी है, उनको व्यायाम सम्बन्धी उन पत्र-पत्रिकाओं को भी पढ़ना चाहिये, जो कुछ थोड़े दिनों से हिन्दुस्तान, यूरुप और अमरीका से निकलने लगी हैं और उस साहित्य को भी पढ़ना चाहिये जो एक नये शास्त्र, मनुष्य जाति की सभ्यता, के सम्बन्ध में निकला है। जो लोग इन सबको ध्यान-पूर्वक पढ़ेंगे, उनको यह विश्वास हो जायगा कि व्यायाम करने की जो विधि पुरुषों के लिए बतलाई गई है, वही कुछ आवश्यक परिवर्तन करके स्त्रियों के लिए भी उपयोगी है। इसलिए, स्त्रियों के शरीरिक व्यायाम करने के विरुद्ध जो आपत्ति उठाई जाती है, वह निराधार है।

---

* बीमा सन्बन्धी सन् १८८२ ई० के सरकारी एक्ट के अनुसार एक आदमी, जिसकी उम्र १४ और ६५ वर्ष के बीच में है, पोस्टआफ़िस के सेविंग बैङ्क में ५ पौण्ड से लेकर १०० पौण्ड तक की किसी रक़म के लिए अलग बीमा करा सकता है और उन लड़के और लड़कियों का बीमा, जिनकी उम्र ८ और १४ वर्ष के बीच में है, केवल ५ पौण्ड का हो सकता है।

शक्ति परिमित है

हम में से बहुत से ऐसे हैं, जो व्यायाम करने से इस कारण भयभीत हैं कि कहीं उनका दिल कमज़ोर, उनको अजीर्ण और उनके शरीर में सिर्फ़ पुट्ठों ही का उभाड़ न हो जाय। अभी कुछ थोड़े समय से पत्र-पत्रिकाओं में इस विषय में आलोचनात्मक लेख निकलने लगे हैं कि पेशेवर पहलवान और खिलाड़ियों की हृदय के रोग तथा अजीर्ण आदि से अकाल-मृत्यु हो जाती है।

इस प्रकार के भयभीत लोगों के प्रति हमारा इस सम्बन्ध में यह उत्तर है कि ख़ैर, सूर्य-नमस्कार को तो जाने दीजिये; ये रोग किसी भी व्यायाम-पद्धति के कारण नहीं होते हैं। हमारे देश के बहुत से पहलवानों का ख़याल रहता है कि जो आदमी ५०० दंड करता है वह उससे जो केवल ४०० दंड करता है, अधिक बलवान तथा स्वस्थ है, यद्यपि दूसरा आदमी पहिले से वास्तव में अधिक बलवान तथा स्वस्थ ही क्यों न होवे। इस ख़याल में आकर हमारे पहलवान सदा अपनी शक्ति से अधिक व्यायाम करके अपने पुट्ठों के बल को बढ़ाने की कोशिश किया करते हैं। इसका फल यह होता है कि या तो वे हृदय के रोगों से पीड़ित हो जाते हैं या उनके सिर्फ पुट्ठे ही उभड़ आते हैं, और अजीर्ण तो इस दशा में बहुतों को हो जाता है। पहलवानों का एक और ख़याल है कि हम जितना भोजन करेंगे, उतने ही अधिक बलवान होंगे। जब उनकी युवा अवस्था का समय होता है और व्यायाम ख़ूब किया जाता है, उस समय उनका यह ख़याल कि 'अधिक भोजन से अधिक बल आता है' सत्य ज्ञात होता है। परन्तु जब उनकी उम्र ढलने लगती है और वह उनको फिर उतना व्यायाम नहीं करने देती, तब उनको यह समझ नहीं आती कि अब हमको भोजन

करना भी कम कर देना चाहिए। व्यायाम करने की हानियों के जो उदाहरण मिलते हैं, वे अधिक भोजन तथा बुरा भोजन करने के कारण अथवा आहार-बिहार के नियमों के उल्लंघन करने से उत्पन्न होते हैं। जिन रोगों से पहलवान लोग तथा अन्य बहुत से साधारण लोग पीड़ित होते हैं, वे अधिक भोजन करने के कारण ही उत्पन्न होते हैं। व्यायाम का इससे तनिक भी सम्बन्ध नहीं है।

मि० फार्मर वर्न्स "फिज़िकल कलचर" नामक पत्र के अगस्त १९२८ के अंक में मि० बर्नार मैकफैडन की "बुक आफ हैल्थ" नामक पुस्तक का एक उद्धरण दिया है—

"इस से बढ़कर संसार में और कौनसी भयंकर बात हो सकती है कि मनुष्य का यह ख्याल हो कि शरीर को भोजन ही से बल शक्ति प्राप्त होती है और जितना अधिक वह खाता है, उतना ही उसे अधिक बल प्राप्त होता है। किसी भी अंश में यह बात ठीक नहीं है। इसके बिपरीत यह देखा गया है, जो व्यक्ति कम भोजन करता है उसे ही अधिक शक्ति होती है।

"व्यायाम करने वाले व्यक्ति के साथ जो कष्ट लगा है, वही साधारण मनुष्य के साथ। उसका जीवन शुद्ध नहीं, उसे शराब इत्यादि की आदत पड़ी हुई है, वह आवश्यकता से अधिक खा लेता है और निद्रा के सम्बन्ध में ऐसी ही बेतुकी बात करता है इत्यादि। इन सब से जीवनी शक्ति कम होती है।

बरौदा की एक 'व्यावाम' नाम की मासिक पत्रिका के मार्च सन् १९२५ ई० के अंक में कप्तान फणीन्द्र कृष्ण गुप्त की एक छोटी सी जीवनी प्रकाशित हुई थी। उसमें यह लिखा हुआ है कि कप्तान फणीन्द्र कृष्ण गुप्त ने अपने प्रतिद्वंदी पहलवानों को पराजित करने

के लिए अधिक मात्रा में गरिष्ट भोजन का करना शुरू किया, जिसका यह फल हुआ कि उनको अजीर्ण हो गया। अब वे प्रतिदिन २००० दंड और उतनी ही बैठकें करते हैं। परन्तु अब उनका भोजन बहुत सादा और मामूली है—वह एक साधारण आदमी की भांति दाल, चाँवल और थोड़ी सी मछली खाते हैं।

बस, इस प्रकार पहलवान दो तरह से अपने जीवन को नष्ट कर लेते हैं—एक तो अपनी शक्ति से अधिक तथा अति शीघ्रता-पूर्वक व्यायाम करने से और दूसरे अधिक भोजन करने से।

इसलिए, हमारे बुद्धिमान पूर्वजों ने सूर्य-नमस्कार व्यायाम में बीज तथा वैदिक मंत्र सम्मिलित कर दिये हैं। ये मंत्र रोगों को दूर करने तथा उनकी औषधि करने के अतिरिक्त शरीर में थकान नहीं आने देते। यदि २५ नमस्कारों की एक आवृति को बीज और वेद-मंत्रों के साथ नियमानुकूल किया जावे, तो सात अथवा आठ मिनट से कम समय नहीं लगेगा।

इसलिए, व्यायाम से भयभीत लोगों तथा पत्र-सम्पादकों को सूर्य-नमस्कार करने का अवश्य साहस करना चाहिए। यदि वे सूर्य-नमस्कार करेंगे, तो वे युवावस्था में महान शक्ति और वृद्धा-वस्था में प्रसन्नता प्राप्त करेंगे—और उनके, इन दोनों से अधिक महत्व-पूर्ण वस्तु, स्वस्थ बच्चे पैदा होंगे।

ज्ञान का प्रचार करना

कुछ हमारे धर्म-मार्तण्ड लोग, जो वैदिक धर्म के रक्षक बनते हैं, उन लोगों पर अधर्म का दोप लगाते हैं, जो इन बीज तथा वेद मंत्रों को ब्राह्मणों से इतर जाति वालों को भी बतलाते हैं। इन लोगों से हमारा यह कहना है कि जब तुम्हारे ग्रन्थों का अध्ययन जर्मन, फ्रांस, इङ्गलैंड और अमरीका देशों के विद्वानों ने

कर लिया, तब फिर इस ज्ञान से अपने ब्राह्मण अथवा अ-ब्राह्मणों को बंचित रखना कोई बुद्धिमानी की बात नहीं जान पड़ती। हमारे शास्त्रों में बड़े बड़े शक्तिशाली मंत्र दिये हुए हैं। परन्तु ये अपना फल उन्हीं को देते हैं, जिनमें कठिन-संयम-नियम पालन करने का साहस तथा अविरल उद्यम करने की शक्ति विद्यमान है। केवल अक्षर तथा शब्दों का ज्ञान प्राप्त कर लेना व्यर्थ है। क्योंकि यह सदा स्मरण रखना चाहिए 'जितना ही गुड़ डालोगे उतना ही मीठा होगा,' अर्थात् जो जितना परिश्रम करेगा, उसे उतना ही फल मिलेगा। इस सम्बन्ध में भगवान श्रीकृष्ण का निम्नांकित वचन उल्लेखनीय है—

'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्'।

[भगवद्गीता, ४ । ११]

अर्थात् "मैं मनुष्यों की उसी प्रकार सेवा करता हूँ, जिस प्रकार वे मेरे पास आते हैं, अर्थात मैं अपने भक्तों को उनके उपयुक्त फल देता हूँ।" [के० टी० तैलँग, एम० ए०]

प्राचीन समय के ब्राह्मणों पर, चाहे ठीक हो या गलत यह दोष लगाया जाता है कि वे ब्राह्मण-जाति से इतर जातियों को विद्या से वंचित रखते थे। यहां पर हम इस दोष की मीमांसा करना आवश्यक नहीं समझते। परन्तु हमें अपने पाठकों से यह अवश्य कहना है कि हमको ब्राह्मण-जाति से इतर-जातियों के लोगों को भी सूर्य-नमस्कार करते हुए देखकर बड़ी प्रसन्नता होगी। ब्राह्मणों से हमारा यह कहना है कि जब लैज़र लैज़रिओ जैसे विदेशी विद्वानों ने बिलकुल अपनी निजी खोज से स्वर के अथवा बीज-मंत्रों के रहस्य का पता लगा लिया है, तब इस दशा में आप लोगों के लिए अपने लोगों से अपने ऋषियों के ज्ञान का छिपाना बुद्धिमानी का काम नहीं है।

अच्छी नींव डालना

हमें आजकल के समय में लड़के और लड़कियों के लिए शारीरिक व्यायाम की आवश्यकता के विषय में बतलाने की कोई आवश्यकता नहीं है। नष्ट हुए स्वास्थ्य को उस समय प्राप्त करने तथा ऐसी दशा व्यायाम करके और भी अधिक दुर्भागी होने की अपेक्षा, जब समय नहीं रहा है, यह कहीं अच्छा है कि स्वस्थ शारीरिक जीवन की नींव जितनी जल्द हो सके, उतनी जल्द पड़ जावे और व्यायाम करने तथा स्वस्थ रहने की आदत हो जावे।

बुढ़ापे को न आने देना

वृद्ध मनुष्यों की दशा भिन्न ही है। एक राव बहादुर देवल जैसे वृद्ध मनुष्य हैं, जिनकी अवस्था इस समय लगभग ८० वर्ष की है। आपने अपनी इस वृद्धावस्था को सरल, उपयोगी तथा उद्यमी जीवन व्यतीत करके प्राप्त किया है। ऐसे वृद्धों के लिए हमारा यह कहना है कि वे साधारण रूप से सूर्य नमस्कार करें और इस अभिप्राय से करें कि हम दीर्घायु होकर अपने उन उद्देश्यों को प्राप्त करें, कि जिनको पूर्ण करने की हमको लगन लगी हुई है।

एक दूसरे प्रकार के वृद्ध मनुष्य वे हैं, जो अभाग्यवश घनी बस्तियों में रहने, रोगी रहने, अपने प्रियजनों के मरने तथा जीवन के अन्य सुख-दुख सहन करने के कारण वृद्धावस्था को प्राप्त होगये हैं। इन लोगों के लिए सूर्य-नमस्कार विशेष रूप से लाभदायक है। सूर्य-नमस्कार से इनके शरीर ही को लाभ नहीं पहुँचेगा, किन्तु इनकी आत्मा भी उन्नत होगी।

तीसरे वृद्ध मनुष्य वे हैं, जिन्होंने वृद्धावस्था के आने के पहिले

हो अपने यौवन-काल में अनुचित अहार-विहार आदि के कारण अपने शरीर को पूर्ण-रूप से नष्ट-भ्रष्ट कर लिया है और जिनकी दशा को वैद्य-डाक्टरों ने असाध्य कह दिया है। इन पुराने पापियों की भी दशा सुधर सकती है, यदि ये बच्चों की तरह सरल जीवन बितावें और विश्वास के साथ सूर्य-नमस्कारों को करें।

यहाँ पर इस सम्बन्ध में श्रीयुत बर्नार मैकफैडन का निम्नांकित कथन उल्लेखनीय है—"उचित व्यायाम से वृद्धावस्था हटाई जा सकती है और वृद्धावस्था का आरम्भ होने पर व्यायाम के द्वारा कुछ अंगों में युवावस्था फिर प्राप्त हो सकती है। व्यायाम करने की विधि तथा मात्रा उसके करने वाले की शारीरिक अवस्था पर निर्भर है। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिये कि जब तक व्यायाम को प्रति दिन नियम-पूर्वक न किया जायगा, तब तक शरीर में स्वच्छ रुधिर, अच्छा रुधिर-संचार, अच्छे मज्जातन्तु, शरीर से बुरे पदार्थों का बहिष्कार, और अच्छी जीवन-शक्ति का प्रादुर्भाव नहीं हो सकेगा। प्रतिदिन का टहलना, गहरा सांस लेना और मेरुदण्ड का सीधा रखना, ये तीन बातें वृद्धावस्था के समय विशेष रूप से लाभदायक हैं"। [फ़िज़िकल कलचर, पृष्ठ ८६, नवम्बर, सन् १९२६ ई०]

"वर्त्तमान समय में जीवन और स्वास्थ्य के लिये सब से भयङ्कर शत्रु शरीर ही में छुपे हुए रोग, जिनका संबंध पाचन शक्ति इत्यादि भीतरी अवयवों से होता है, होते हैं। इनका पता उस समय तक नहीं लगता तब तक कि वे जीवनी शक्ति को नष्ट नहीं कर डालते। इन रोगों का परिणाम उस समय और भी भयङ्कर हो जाता है, जब शरीर के अंग प्रत्यङ्ग इस दशा को प्राप्त हो जायं कि उनका सुधार करना असंभव हो जाय। ["फ़िज़िकल कलचर"—अप्रैल १९२८]

यह बतलाया जा चुका है कि मनुष्य उसी समय से मृत्यु की ओर खिसकने लगता है जब से वह पैदा होता है। यदि हम अनुकूल व्यायाम, सीधेसाधे सात्विक भोजन और शुद्ध जीवन से अपने शरीर के उन नाशकारी पदार्थों को निकाल डालें तो यह समय अधिक दूर हो सकता है। यदि हम ऐसा करना सीख लें तो हम निश्चय ही सौ वर्ष से भी अधिक जी सकते हैं।

जीवन काल का बढ़ जाना इतना महत्व नहीं रखता जितना कि उसकी उपयोगिता और सुख, संसार के भले के लिए मनुष्य के अनुपम कार्य तथा मनुष्य जाति के उपयोग और भलाई के कार्य महत्व रखते हैं। यह सब नियमित और नित्यप्रति किए जाने वाले सूर्यनमस्कार व्यायाम ही से हो सकता है।

सूर्य का महत्व

आजकल हमारे बहुत से भाई यह कहते हैं कि मंत्र-तंत्र सब ढकोसला है। थोड़े दिन हुए एक सज्जन ने हम से यह कहा था, "मेरा मंत्रों में बिल्कुल विश्वास नहीं है; मैं सूर्य-नमस्कार करने में मंत्रों का उच्चारण नहीं करूंगा"। कुछ ऐसे भी लोग हैं, जिनका यह कहना है कि हम सूर्य की उपासना करना नहीं चाहते। इन लोगों से हमारा यह कहना है कि आप लोग लैज़र लैज़रिओ के पूर्वोक्त लेख तथा जर्मन देश के एक बड़े दृढ़ तथा स्वतंत्र विचारशील विज्ञान-वेत्ता श्रीयुत हैकल की 'विश्व पहेली' (The Riddle the Universe) नाम की पुस्तक को पढ़ें। इस पुस्तक के १४ वें अध्याय में श्रीयुत हैकल एक स्थान पर यह लिखते हैं कि सूर्य, प्रकाश और उष्णता का अधिष्ठातृ देवता है, जिसका प्रभाव चैतन्य पदार्थों पर ज्ञात तथा अज्ञात रूप से पड़ता है। आजकल के विज्ञान-वेत्ता सूर्योपासना को और सब प्रकार के आस्तिकवादों से उत्तम समझते हैं। यह उस प्रकार

का आस्तिकवाद है, जो वर्तमान समय के एक ईश्वरवाद में भी सरलता-पूर्वक परिणत हो सकता है। क्योंकि आधुनिक ग्रह-उप-ग्रह का पदार्थ-विज्ञान, और पृथ्वी की उत्पत्ति तथा निर्माण के सिद्धान्त हमको यह बतलाते हैं कि पृथ्वी सूर्य का एक भाग है, जो उससे पृथक हो गया है। अन्त में कभी न कभी पृथ्वी, सूर्य से जा मिलेगी........ वास्तव में हमारा सम्पूर्ण शारीरिक तथा मानसिक जीवन, अंत में और सब प्रकार के इंद्रियवान पदार्थों के जीवन की भांति सूर्य के प्रकाश तथा उष्णता पर निर्भर है। इसलिए बुद्धि यह बतलाती है कि सूर्योपासना का एक-ईश्वरवाद, जिसमें प्रकृति प्रधान है, ईसाइयों तथा अन्य एक-ईश्वरवादियों के ईश्वरवाद से, जिसमें वे अपने ईश्वर को मनुष्य रूप मानते हैं, अधिक अच्छे सिद्धान्तों पर अवलम्बित ज्ञात होता है। और इसमें कोई संदेह नहीं है कि हजारों वर्ष पहले सूर्योपासक लोग अन्य प्रकार के बहुत से एक-ईश्वरवादियों से मानसिक तथा आध्यात्मिक बातों में अधिक बढ़े-चढ़े थे। मैं जब सन् १८८१ ई० में बम्बई में था, तब मैंने बड़ी श्रद्धा-पूर्वक पारसी लोगों को समुद्र के किनारे खड़े होकर, अथवा अपने आसन पर झुक कर उदय होते तथा अस्त होते हुए सूर्य की पूजा करते देखा था।

यदि श्रीयुत हैकल ने हमारे लोगों को सूर्य-नमस्कार करते हुए देखा होता, तो उसको इस सम्बन्ध में और भी अधिक श्रद्धा उत्पन्न हो जाती।

निम्नांकित कुछ थोड़े से प्रमाणों से पाठकों को इस सम्बन्ध में विश्वास हो जायगा कि हमारी सूर्य-नमस्कार की क्रिया में सूर्य को विशेष रूप से क्यों पूजनीय माना गया है।

परन्तु इन प्रमाणों को उपस्थित करने के पूर्व हम अपने

पाठकों को इस वचन के महत्व को कि "शारीरिक व्यायाम शरीर के रोगों के लिए औषधि स्वरूप होने की अपेक्षा उनके लिए अधिक बाधक है" समझाने का एक प्रयत्न और भी करते हैं। संसार में डाक्टरी विद्या तथा डाक्टर लोग सैकड़ों वर्षों से औषधियों तथा छुरा-चाकुओं के द्वारा रोगों की चिकित्सा करते चले आ रहे हैं। परन्तु वे अभी पृथ्वी को रोग-रहित करने में समर्थ नहीं हुए हैं। प्रश्न यह है कि क्या कभी ऐसा हो सकता है? हमारा उत्तर यह है कि हां, ऐसा अवश्य हो सकता है, यदि वैद्यक-शास्त्र, स्वास्थ्य-विद्याएं तथा राजा और प्रजा, ये सब अपनी अपनी शक्तियों को रोगों की उत्पत्ति के कारणों का पता लगाने और उनको नष्ट करने तथा इस बात में लगा दें कि ये कारण फिर उत्पन्न न होने पावें।

क्योंकि रोगों को नष्ट करने के लिए जो आधुनिक विज्ञान द्वारा अनेक शक्तिशाली साधन, जैसे—औषधियां, सीरम और तरह तरह के औजार आदि—प्राप्त हुए हैं, वे रोगो के उत्पत्ति-कारण को दूर नहीं कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में हम यहां दृढ़ता-पूर्वक फिर यह कहते हैं कि यदि सूर्य-नमस्कारों को विश्वास-पूर्वक नियमानुसार किया जावे, तो इनमें वह शक्ति है, जो रोगों का समूल अन्त कर देगी।

(१) 'फिज़ीकल कलचर' के जुलाई, सन् १९२६ ई० के अंक में एक गार्डनर रोनी नाम का विद्वान लिखता है,—"अपने शरीर को सूर्य से स्नान कराओ। सूर्य सर्वोपरि औषधि है। विज्ञान यह बतलाता है कि सूर्य ही से स्वास्थ मिलता है।"

"और आजकल संसार में क्षयी रोग, निमोनिया, छाजन, खांसी, ज़ुकाम और फेफड़ों के विकार आदि रोगों का इलाज

चिकित्सा की एक नई विधि 'सूर्य चिकित्सा' से शीघ्रता तथा निश्चयता-पूर्वक हो रहा है।"

(२) डाक्टर हैस का, जो सूर्य-चिकित्सा में प्रमाण माना जाता है, कहना है कि सूर्य के प्रकाश ही से सब भोजन की सामग्री उत्पन्न होती है, यह सब का उत्तेजक है और यही सब रोगों के लिए रामबाण औषधि है। यदि इस बात का समस्त मनुष्य-जाति में प्रचार हो जाय कि स्वास्थ्य के लिए सूर्य बड़े महत्व की वस्तु है, तो मनुष्य-जाति अति अधिक उन्नत, स्वस्थ और सुखी हो जावे।

"सूर्य, वायु और पृथ्वी माता, त्रिमूर्ति हैं, जिनके द्वारा समस्त मनुष्य-जाति को फिर से शक्ति तथा नवीनता प्राप्त हो सकती है। इन तीनों के अपने चिकित्सा सम्बन्धी गुण भिन्न भिन्न हैं, जिन पर मनुष्य-जीवन का शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक सुख निर्भर है," ऐसा विज्ञान-शास्त्र कहता है।

(३) डाक्टर रोलियर, जिसने स्विटज़रलैंड देश में 'सूर्य-पाठशाला' खोली है, सूर्य-चिकित्सा का प्रवर्तक है। यह सब से पहिला विद्वान है, जिसने यह मालूम किया कि सूर्य का प्रकाश जिस प्रकार पौदे के बढ़ने के लिए आवश्यक है, उसी प्रकार मनुष्य के बच्चे के बढ़ने तथा अन्य सब पदार्थों के लिए भी आवश्यक है। परन्तु इस सम्बन्ध में आवश्यक यह है कि जिस प्रकार पौदे के अंग पर सूर्य का सीधा प्रकाश पड़ता है, उसी प्रकार बच्चे के खुले अंग पर भी पड़ना चाहिए।

डाक्टर रोलियर का कथन है, "सूर्य-स्नान का महत्व स्कूल के प्रोग्राम में उसी प्रकार होना चाहिए, जिस प्रकार खेल-कूद। ये दोनों (सूर्य-स्नान और खेल-कूद) प्रायः एक साथ ही हो सकते

हैं। मन-बहलाव तथा शारीरिक व्यायाम को ऐसे समय पर करना चाहिए, जिससे प्रातःकाल के उदय होते हुए सूर्य के प्रकाश से लाभ उठाया जा सके और बच्चों को उस समय नंगा कर देना चाहिए।" ['फ़िज़ीकल कलचर,' अगस्त, सन् १६२६ ई०]

(४) ब्रिटेन देश के विश्वकोष के १२वें संस्करण में श्रीयुत लिओनार्ड विलियम्स, एम० डी०, का अपने विटैमीन सम्बन्धी लेख में यह कहना है, "विटैमीन बिना आग के पके हुए सब फलों और साग-भाजियों में होती है और इस लोकोक्ति से, कि जिन खाद्य पदार्थों को सूर्य चूम लेता है अर्थात् जिन पर सूर्य का प्रकाश पड़ता है, वे, उनकी अपेक्षा, जो सूर्य के चुम्बन से वंचित रहते हैं, अधिक गुणकारी होते हैं, यह सत्य प्रमाणित होता है कि जो साग-भाजियाँ भूमि के ऊपर होती हैं, उनमें उन साग-भाजियों की अपेक्षा, जो उसके भीतर होती हैं विटैमीन की मात्रा अधिक होती है।

सूर्य की स्तुति में श्रीमती हेमन्स की निम्नांकित पंक्तियां भी यहां उल्लेखनीय हैं —

(५) "तू केवल राजाओं के राज-भवनों ही में नहीं जाता है, किन्तु तू सब प्राणियों को सुख और सम्पत्ति है। तू जल-थल दोनों ही जगहों की आशा है। हे सूर्य की किरण, संसार में तेरे समान तो बस तू ही है।"

(६) "उन गायों के दूध में, जो सदा घरों के भीतर पाली तथा रक्खी जाती हैं, विटैमीन नम्बर (द), जो बच्चों की वृद्धि, स्वास्थ्य तथा उनको रिकैट* से बचाने के लिए अति

* रिकैट एक प्रकार की बच्चों की बीमारी है, जिसमें बच्चों की हड्डियां नरम हो जाती हैं और मुड़ जाती हैं।

आवश्यक है, काफी मात्रा में नहीं होती।" इस विटैमीन के पैदा करने के लिए गाय को धूप में रहने की आवश्यकता है। [साईंटिफ़िक अमरीकन, अप्रैल सन् १६२७ ई०]

(७) डाक्टर एस० एम० बैलफ्रेज, एम० डी, अपनी 'सर्वोत्तम खाद्य पदार्थ क्या है' नाम की पुस्तक में, २६ वें पृष्ठ में लिखता है, "यह विद्युत् शक्ति, जो सम्पूर्ण विश्व में व्यापक है, हमें इस पृथ्वी पर सूर्य से प्रकाश तथा उष्णता के रूप में प्राप्त होती है। यह इसी विद्युत्-शक्ति का प्रभाव है कि यहाँ के जड़ पदार्थ भी चैतन्य हो जाते हैं।

"पौदा सूर्य के प्रकाश के प्रभाव तथा उसकी जादूभरी शक्ति के गुण के कारण आक्सिजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, लोहा और फ़ासफ़ोरस आदि निर्जीव पदार्थों को एक जगह मिला देता है, इस मेल से उत्तम उत्तम पदार्थ उत्पन्न होते हैं।

"इस प्रकार हमें यह ज्ञात होता है कि पौदों में विद्युत् शक्ति बहुत बड़ी मात्रा में एकत्रित रहती है। इससे अन्य प्राणी शक्ति ग्रहण करते हैं। इसलिए, उस शक्ति का आदि-कारण सूर्य ही है, जिसको हम अपने जीवन में प्रति क्षण व्यय करते रहते हैं।

(८) श्रीयुत चार्ल्स एफ़ हानेल नाम के एक यूरुपीय विद्वान का यह कहना है, "इस पृथ्वी की सम्पूर्ण शक्ति जो इसके कुछ जड़-चेतन, दोनों भागों में व्यापक है, सीधे अथवा फेर से सूर्य ही से आती है। बहता हुआ जल, उड़ने वाली वायु, चलते हुए बादल, लुढ़कती हुई गर्जन, कोंदती हुई बिजली, वर्षा, हिम, कुहरा, ओला, पौदों का बढ़ना, पशु, पक्षी तथा मनुष्य-शरीरों की गर्मी तथा इनका हिलना और लकड़ी तथा कोयला आदि का जलना, ये सब उसी सूर्य की शक्ति के भिन्न भिन्न स्वरूप हैं।"

(९) सूर्य आत्मा जगतः तस्थुषश्च। [ऋग्वेद १। ११५। १]

अर्थात् "सूर्य, संसार के सब जड़-जंगम पदार्थों की आत्मा है।"

(१०) प्राणः प्रजानामुदयत्येष सूर्यः [प्रश्नोपनिषद् १।८]

अर्थात् सूर्य उदय होकर सचराचर में जीवनी शक्ति डालता है।

(११) हमारा अधिष्ठात्र, सूर्य हर प्रकार की अपवित्रता और कलंक से परे है।

(१२) सूर्य-नमस्कार मूर्त्ति पूजा नहीं है।

(१३) श्री जे० स्टेन्सन हुकर, एम० डी० (लंदन) का कहना है मैं ऐसे रोगों को—जैसे फोड़े-फुंसी, गंजापन, एक्ज़ीमा, हृदय के रोग, आंख और कान के रोग, क्षय, गले की सूजन इत्यादि—जानता हूँ जिनकी आरोग्यता के लिए सूर्य की किरणें विशेष लाभप्रद सिद्ध हुई हैं।

["हैल्थ और एफ़ीसिएन्सी" जून १९२८]

(१४) अच्छा स्वास्थ्य रखने के लिए तुम्हें सूर्य-रश्मियों का पूर्ण उपभोग करना चाहिए। प्रातःकाल और सायङ्काल की शुद्ध सूर्य-रश्मि खून के रक्तकणों को शुद्ध करती हैं, शरीर के अवयवों के संचालन में सहायक होती हैं, शारीरिक सौंदर्य बढ़ाती हैं और रोगों को दूर करने की शक्ति दे पूर्ण यौवन का सच्चा सुख देती हैं।

["फ़िज़िकल कलचर"]

(१५) डा० ई० सी० ग्रे, एम० डी० का कहना है कि हर प्रकार की जीवनी शक्ति का केन्द्र सूर्य है। सूर्य की किरणों तथा उसकी शक्ति को दूर कर दो, सम्पूर्ण नक्षत्रों की शक्ति का नाश हो जायगा। यदि एक क्षण के लिए भी सूर्य द्वारा होने वाले

कामों को सोचा जाय तो फिर इसमें ज़रा भी संदेह नहीं रह जाता कि प्राचीन काल के लोग किसी विशेष अभिप्राय ही से सूर्य-नमस्कार किया करते थे।

सूर्य की रश्मियों से बच्चों के हर एक अंग और प्रत्यङ्ग की शक्ति बढ़ती है। उनके शरीर पर स्वास्थकर सूर्य की रश्मियों के पड़ने से उनमें आक्रमणकारी रोगों से भिड़ने की शक्ति पैदा होती है। ["क्लिनिकल कलचर" अगस्त १९२८]

(१६) डा० एच० सी० मेंकल, एम० डी० 'ओरियंटल वाचमैन एण्ड हैरल्ड आफ़ हैल्थ' के अक्टूबर १९२८ के अंक में लिखते हैं—

"विटामिन 'डी' की उत्पत्ति सूर्य की रश्मियों ही से होती है। जिस समय नग्न शरीर को सूर्य की किरणों द्वारा स्नान कराया जाता है उस समय विटैमनी 'डी' रक्त में प्रवेश कर जाता है। ऐसी किरणों से खाद्य पदार्थों में भी विटैमीन 'डी' की उत्पत्ति होती है। इस विटैमीन 'डी' से बच्चों के रिकेट, हड्डी के रोग, अनीमिया आदि आदि रोग दूर हो जाते हैं। युवा पुरुषों के भी अनेक रोग इसी विटैमीन 'डी' से दूर हो जाते हैं।"

सस्तापन

कुछ मनुष्य, जो सूर्य-नमस्कार को अच्छा नहीं समझते हैं कहते हैं कि यह व्यायाम इसलिए अधिक माना जा रहा है कि यह बहुत सस्ता है। परन्तु प्रश्न यह है कि सस्तापन गुण है अथवा दोष? क्या यह अपने सस्तेपन ही के कारण सब के करने योग्य नहीं है?

सूर्य-नमस्कार में कुछ भी खर्च नहीं पड़ता। परन्तु यह याद रहे कि सस्तापन इसका मुख्य गुण नहीं है। यह तो इसके

उन अनेक गुणों में एक गुण है, जिसके कारण सूर्य-नमस्कार अन्य व्यायामों से बढ़ जाता है।

सूर्य-नमस्कार से केवल पुट्ठों ही का विकास नहीं होता है, किन्तु सम्पूर्ण ज्ञान-तन्तुओं का भी विकास होता है और इसके द्वारा सब महत्वपूर्ण ग्रंथियाँ तथा अन्य आंतरिक प्रधान अंग अपना अपना काम स्वाभाविक रूप से करने लगते हैं।

अब तक नली-हीन ग्रंथि के काम और उसकी रतूबत के निकलने के विषय में तथा इस विषय में कि इसका मनुष्य के शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है बहुत कम ज्ञान था। परन्तु अब विज्ञान ने हमें यह बतला दिया है कि वे शक्तियाँ, जिनके द्वारा हमारा शारीरिक तथा मानसिक जीवन प्रभावित होता है और जो शरीर के विकास को बढ़ाती अथवा मुख की सुन्दरता तथा शरीर की बनावट को बनाती अथवा बिगाड़ती हैं, शरीर की ग्रंथियों से उत्पन्न होता है।

सूर्य-नमस्कार करने से ये ग्रंथियाँ तथा अन्य आन्तरिक अंग विकसित तथा सुदृढ़ होते हैं।

इसलिए, यह स्मरण रखना चाहिए कि इसका प्रधान गुण केवल सस्तापन ही नहीं है; जिसके ऊपर सूर्य-नमस्कार का इतना भारी महत्व निर्भर है।

एकसापन

एक और आपत्ति, जो सूर्य-नमस्कार के विरुद्ध उठाई जाती है, वह यह है कि यह व्यायाम तो एकसा* और अरुचिकर है।

---

* जिस काम के करने में परिवर्तन का अभाव हो अर्थात जिसमें आदि से अन्त तक एक ही सी क्रिया करनी पड़े, उस काम को एकसा कहते हैं। उदाहरणार्थ—डाक घर में चिट्ठियों पर मुहर लगाना अथवा छापेख़ाने में मशीन पर से छपा हुआ क़ाग़ज़ हटाना, इत्यादि।

यह मानी हुई बात है कि जिस काम के करने में कठिनाई और थकान होती है, उस काम में एकसापन का दोष होता है। सूर्य-नमस्कार को हमारे नियम के अनुसार करने में केवल १५ से ३० मिनट तक लगते हैं और इसमें अनेक प्रकार से शरीर को हिलना-डुलना पड़ता है, जिससे इसके अंग प्रत्यंग पर ज़ोर पड़ता है। इसलिए, इस पर एकसापन का दोष किसी भाँति नहीं आ सकता।

इसके अतिरिक्त, जब हम इस व्यायाम की सूरतों को करते हैं, तब हम को इनके प्रत्येक हिलाव-डुलाव में अपना मन लगाना पड़ता है, जिसके कारण जब तक हम नमस्कार करते हैं, तब तक हमें बड़े आनन्द का अनुभव होता रहता है।

प्रत्येक व्यायाम में मनोबल तथा बिचार-बल का महत्व बहुत है और विशेष रूप से सूर्य-नमस्कार में।

'फ़िज़ीकल कलचर' के अक्टूबर, सन् १९२७ ई० के अंक में श्रीयुत बरनार मैक़फ़ैड़न ने लिखा है, "विलियम मलडून नाम के एक पहलवान का, जो बहुत बुड्ढा होकर मरा है, यह अनेक बार का अनुभव है कि बल का विकास एक प्रकार के मनोभाव पर निर्भर है। यह मनोभाव एक प्रकार का बल है, जिसके विना शारीरिक वल की प्राप्ति नहीं हो सकती।

"इस बचन का विरोध नहीं किया जा सकाता।

"कोई भी बुद्धिमान मनुष्य मनोबल के महत्व को कम नहीं बताएगा। यह वह चिनगारी है, जो गुणी पुरुषों की ज्वाला को धधकाती है, अर्थात् उनके उत्साह को बढ़ाती है। यह हमारे उत्साह तथा उच्च होने की अभिलाषा का उद्भव स्थान तथा मूल-कारण है। यह हमको जीवन के उच्च पदों की प्राप्ति के लिए ओजस्विनी दृढ़ता प्रदान करती है।

" मन तथा शरीर को इनकी सीमा तक विकसित करना चाहिए, जिससे इनकी आन्तरिक शक्तियां प्रकट होवें।

" मन और शरीर को हद दर्जे तक विकसित करना, यह प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है और जब ये विकास को प्राप्त हो जायँ, तब इनको इस अवस्था में स्थिर रखना चाहिए।

" इस प्रकार नीति का पालन करने से युवावस्था का उत्साह जीवन-पर्यन्त रह सकता है। और जब युवावस्था का प्रचंड उत्साह मध्यावस्था के अनन्तर जीवन की अभिलाषाओं के कारण स्थिर कर लिया जाता है, तब हम उस सम्पत्ति को प्राप्त कर लेते हैं, जिसका अनुमान नहीं किया जा सकता।

" परन्तु इस प्रकार की शक्तियों के प्राप्त तथा संचित करने के लिए हमको उस मनोबल को आवश्यकता है, जिसके साथ वह दृढ़ता होवे, जो हमको जीवन के नियमों पर चलने को लाचार करने के लिए आवश्यक होती है।"

मनोबल के विषय पर श्रीयुत एफ़० सी० हैडक, एम० सी०, सी० एम० डी० के विचार और भी अधिक प्रकाश डालेंगे। इस सम्बन्ध में आप अपनी पुस्तक 'मनोबल' (Power of Will) में अपने निम्नांकित विचार प्रगट करते हैं—

" मनोबल की अवस्था शारीरिक स्वास्थ्य की दशा पर निर्भर है।"

" शारीरिक स्वास्थ्य की प्राप्ति विज्ञान का एक उद्देश्य है, जो प्रौढ़ तथा दृढ़ मनोबल से सिद्ध हो सकता है।"

" स्वास्थ्य के प्रत्येक नियम के ध्यान-पूर्वक पालन किये जाने से मनोबल विकसित होता है।"

पाठक लोग इस बात पर अवश्य ध्यान देंगे कि सूर्य-नमस्कार में हर समय मनोबल से काम करने तथा साथ साथ स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु प्राप्ति के लिए चिन्तन करने से अवश्य मनोवांछित फल प्राप्त होता है। इसलिए, मन को सूर्य-नमस्कार के आठ अंगों* [चौथा प्रकरण देखो] में रक्खा गया है। मन वास्तव में वह शक्ति है, जिससे बल, स्वास्थ्य तथा प्रसन्नता उत्पन्न होती है। वर्षों तक नीरोग रह कर जुक़ाम-खांसी से भी पीड़ित न हो कर स्वस्थ जीवन व्यतीत करना एक बड़े आनन्द की बात है। और जब यह अवस्था सूर्य-नमस्कारों को नित्यप्रति नियमानुकूल करने से प्राप्त हो जाती है, तब फिर क्या हम इन नमस्कारों पर एकसापन तथा अरुचि होने के दोष को आरोपित कर सकते हैं ?

धार्मिक रंग

कुछ नास्तिक और अ-हिन्दू लोग इस विचार से सूर्य नमस्कार को ग्रहण नहीं करते कि यह हिन्दुओं का एक धार्मिक कृत्य है।

यह बात सत्य है कि सूर्य-नमस्कार अवश्य हिन्दुओं का एक धार्मिक कार्य है। परन्तु वास्तव में देखा जाय तो यह कोई धार्मिक कृत्य नहीं है। हिन्दुओं में स्नान करना भी एक धार्मिक कृत्य

---

* उरसा शिरसा दृष्ट्या वचसा मनसा तथा।

पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टांग ईरितः ॥

अर्थात् प्रत्येक नमस्कार में शरीर के ये आठ अंग प्रयोग में आते हैं—(१) माथा, (२) सीना, (३) टांग और पैर, (४) बांह और हाथ, (५) घुटने, (६) दृष्टि, (७) कान और (८) मन और विचार।

माना जाता है। क्योंकि स्नान से स्वच्छता, स्वास्थ्य तथा शक्ति प्राप्त होती है। तो फिर क्या कभी नास्तिक और अ-हिन्दुओं ने स्नान के प्रति भी आपत्ति उठाई है? हमको इसलिए, विवेक-पूर्वक उन कृत्यों में, जो वास्तव में धार्मिक हैं और उनमें, जो लाभकारी होने के कारण दैनिक धार्मिक कार्यों में सम्मिलित कर लिये गये हैं और जो देखने में धार्मिक ज्ञात होते हैं, स्पष्ट रूप से पहचान कर लेनी चाहिए। स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का किसी धार्मिक सिद्धान्त से भला क्या प्रयोजन?

यदि जो इतने पर भी सूर्य-नमस्कार करने में बीज तथा वेद-मंत्रों के उच्चारण के प्रति श्रद्धा न रक्खें, तो वे इन मंत्रों को निकाल कर शेष व्यायाम को अवश्य पूर्ण रूप से करें। हमें आशा है कि इन मंत्रों को निकालने पर भी हमारा सूर्य नमस्कार अ-हिन्दू लोगों के स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु की प्राप्ति के मार्ग को सुगम बना देगा।

इस सम्बन्ध में किसी का मत-भेद नहीं है कि आजकल के कठिन जीवन-संग्राम में जीवन-यात्रा के आरम्भ करने के लिए प्रबल पाचन-शक्ति का होना सर्वोच्च सामिग्री है और यह शक्ति केवल तभी सुरक्षित रक्खी जा सकती है, जब सूर्य-नमस्कार जैसे किसी व्यायाम को धार्मिक कृत्य समझ कर अथवा दृढ़ता-पूर्वक किया जावेगा।

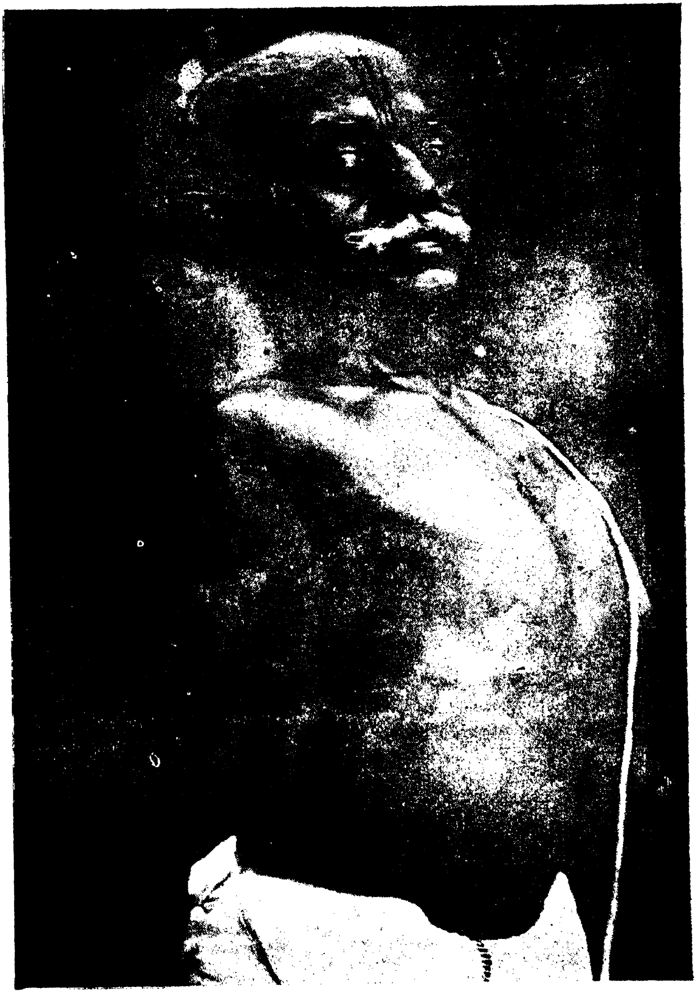
इस प्रकार सूर्य-नमस्कार करने से स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु की प्राप्ति होती है।

ग्यारहवाँ प्रकरण

हमारा अनुभव

जब हम युवा थे, तब हमने पंजाब के एक सुप्रसिद्ध पेशेवर पहलवान, इमामुद्दीन से कुश्ती करना सीखा था। हम कुश्ती के साथ साथ दंड-बैठक भी किया करते थे और मुगदर भी हिलाया करते थे। परन्तु हम अपने पहलवानों की भांति खूब गरिष्ट भोजन करने लगे और शरीर से खूब मोटे हो गये। सन् १९३७ ई० में हमने सुविख्यात व्यायाम-विशारद, सेंडो के बारे में पढ़ा और उसके व्यायाम सम्बन्धी सब सामान तथा पुस्तकों को खरीदा और हम नित्यप्रति लगातार पूरे दस वर्ष तक उनके अनुसार व्यायाम करते रहे, जिसका यह फल हुआ कि हमारा सीना जैसे पहिले था, वैसा ही रहा और हमारी कमर और पेडू बहुत घट गये। अब हम अपने सम्मानित मित्र मिराज के चीफ़ श्रीमंत सर गंगाधर राव, उपनाम श्री बाला साहब के उदाहरण तथा कहने से सन् १९०८ ई० से सूर्य-नमस्कारों को बीज तथा और वेद-मंत्रों के साथ प्रतिदिन नियमानुकूल करते आ रहे हैं, जिसका फल यह हुआ है कि हमारा शरीर और दिमाग़ बहुत हलका हो गया है और हमको युवावस्था का-सा अनुभव होने लगा है। परन्तु सब से बड़ा लाभ इन नमस्कारों से हमें यह हुआ है कि हम गत १७ वर्ष से ज्वरादि रोगों का तो नाम ही क्या, जुकाम और खांसी से भी पीड़ित नहीं हुए हैं। हममें अच्छी समार्ध्य है, जिसका अति आश्चर्य-जनक प्रमाण यह

९२ पृष्ठ के सामने



औंध-राज्य के चीफ़, श्रीयुत बाला साहब पंत, प्रतिनिधि,
६० वर्ष की अवस्था में

है कि यद्यपि हमें प्लेग का चार बार टीका लग चुका है, परन्तु हमें न तो कभी ज्वर आया और न हमें कभी ऐसी पीड़ा अनुभव हुई, जिसके कारण हमने अपने दैनिक सूर्य-नमस्कार के व्यायाम को छोड़ दिया हो। हमें इन गत १७ वर्ष के अनुभव तथा अध्ययन ने यह कहने के लिए अधिकारी बना दिया है कि सूर्य-दमस्कार अन्य सब व्यायाम-शैलियों में इस बात में बढ़कर है कि यह शारीरिक पुरुषार्थ, मानसिक बल तथा सहिष्णुता को, जो कठिन से कठिन परिस्थिति में भी विचलित नहीं हो सकती है, बढ़ाता है।

यहाँ पर जर्मन देश के वहिष्कृत कैसर का यह कथन, जिसको हम 'फ़िज़िकल कलचर' नाम की मानसिक-पत्रिका के फ़र्वरी, सन १९२१ ई० के अंक से उद्धृत करते हैं, उल्लेखनीय है—

"इसका कारण कि मैं सन् १९१४ ई० के यूरुपीय महायुद्ध के इतने भयङ्कर आन्दोलन तथा उत्तरदायित्व के भार के सन्मुख भी अपनी शारीरिक तथा मानसिक सहिष्णुता को स्थिर रख सका, मेरा बहुत दूर का टहलना, वृक्षों को गिराना और लकड़ी चीरना तथा घोड़े की सवारी, आदि अनेक प्रकार के शारीरिक व्यायाम थे।"

जो लोग हमारी भाँति इन नमस्कारों में धार्मिक तत्व देखेंगे, उनको और भी अधिक लाभ होगा। अब सूर्य भगवान की कृपा से, जिसके लिए मित्र (सब का मित्र) तथा सविता (सब का उत्पादक) जैसे उपयुक्त शब्दों का प्रयोग किया गया है, 'ओं ह्रां ह्रीं,' आदि बीज-मंत्रों का रहस्य स्पष्ट रूप से हल हो गया है। अब हम पूर्ण दृढ़ता-पूर्वक यह कह सकते हैं कि सूर्य-नमस्कार सब प्रकार की व्यायाम-पद्धतियों से उत्तम है।

हमारा उपरोक्त कथन कि हम को गत १७ वर्ष से कोई किसी प्रकार का रोग नहीं हुआ है पाठकों को अवश्य यह जानने के लिए कि हम क्या खाते-पीते हैं तथा कितना काम करते हैं—संक्षेप में, हम दिन-रात के २४ घंटों को किस प्रकार व्यतीत करते हैं—उत्सुक बना देगा। इसलिए, हम यहाँ अपनी पूर्ण दिन-चर्य्या का लिखना उचित समझते हैं।

हमारी दिनचर्य्या

[नोट—यह दिनचर्य्या प्रातःकाल के ३-३० बजे से आरम्भ होती है]

३-३० बजे से ४ बजे तक—सोकर उठना, प्रातःकाल के शौचादि (स्नान भी) नित्य क्रिया से निवृत्त होना।

४ बजे से ५ बजे तक—सूर्य-नमस्कार करना।

५ बजे से ५-३० बजे तक—प्रातःकाल का पूजा-पाठ।

५-३० बजे से ६-१५ बजे तक—टहलना, और ६०० फुट ऊँची पहाड़ी पर तेज़ी के साथ चढ़ना और उतरना।

६-१५ बजे से ७ बजे तक—कलेवा करना और रानी साहिबा तथा बच्चों को अंग्रेज़ी पढ़ाना।

७ बजे से ९-३० बजे तक—डाक की चिट्ठी-पत्री देखना और समाचार आदि पढ़ना।

९-३० बजे से १०-३० बजे तक—चित्रकारी करना।

१०-३० बजे से ११-३० बजे तक—दोपहर का भोजन।

११-३० से १२-३० तक—पढ़ना।

१२-३० से १-३० तक—आराम करना।

१-३० से ३ तक—साहित्यिक कार्य, लिखना-पढ़ना, आदि।

३ से ४-३० तक—दफ़र का काम, मंत्रियों के काम को देखना, आये हुए प्रार्थना-पत्रों पर यथोचित कार्यवाही करना, अपील सुनना तथा हाईकोर्ट के अन्य कामों का करना [रविवार, मंगलवार तथा अन्य छुट्टियों के दिनों दफ़र का काम बन्द रहता है।]

४-३० से ५ तक—संग-तराशी, फोटोग्राफ़ी, तथा अन्य कला-कौशल के कामों की देख-भाल करना।

५ से ६ तक—कीर्तन।

६ से ६-३० तक—सन्ध्या-काल का पूजा-पाठ।

६-३० से ७-३० तक—रात्रि-समय का भोजन।

७-३० से ८-३० तक—मराठी और संस्कृत पढ़ना तथा रानी साहिबा और बच्चों को इन भाषाओं को पढ़ाना।

८-३० से ३-३० तक—सोना, बस तकिये पर पांच मिनट सिर रखने पर ही खूब गहरी नींद आ जाती है।

यदि किसी को स्वास्थ्य, शक्ति, चैतन्यता, नीरोगता तथा दीर्घायु को प्राप्त करना है, तो दैनिक व्यायाम के साथ सादा सात्विक भोजन करना चाहिए।

हमारा कलेवा यह है कि गाय के थनों से निकले हुए गरम दूध के, जिसे अग्नि पर गरम नहीं किया जाता, दो कटोरे पीते हैं, और कुछ थोड़ा-सा शहद मिलाकर मक्खन भी खाते हैं।

दोपहर का भोजन

हमारे दोपहर के भोजन की मात्रा यह है—चार छटाँक चावल का भात, एक अथवा आधी गेहूँ की रोटी (एक रोटी दो छटांक की), थोड़ी सी दाल, कढ़ी और दो-तीन प्रकार की बिना

पकी हुई और पकी हुई (बिना मसाले की) साग-भाजियां, कुछ थोड़ा सा दूध अथवा दूध की बनी हुई कोई चीज़ जैसे दही, मक्खन, घी आदि, और फल यदि हुए तो।

रात्रि का भोजन

हमारे रात्रि के भोजन में भी वे ही सब पदार्थ होते हैं, जो हमारे उपरोक्त दोपहर के भोजन में। अंतर केवल इतना होता है कि हम रात्रि के समय दोपहर की अपेक्षा बहुत कम भोजन करते हैं।

फल

जब हमें फल और मेवा मिल जाते हैं, तब हम भोजन के साथ इनको भी खाते हैं। जिन फल और मेवाओं को हम खाते हैं, वे ये हैं—आम, अमरूद, अनार, अंगूर, अंजीर, सेब नारंगी, बादाम और गोला इत्यादि।

जब हम फल और मेवा को भोजन के साथ खाते हैं, तब चावल का भात, रोटी और दाल उतनी ही मात्रा में कम हो जाते हैं।

भुने हुए पदार्थ

घी और तेल के भुने अथवा पके हुए पदार्थ हमारे भोजन में कभी नहीं आने पाते। इनको हमने हानिकारक समझ कर छोड़ दिया है।

पीने का जल

हम ताज़ा ठंडा चश्मे का जल पीते हैं और उसमें कुछ थोड़ी सी गुलाब अथवा चमेली आदि की सुगंधि मिला लेते हैं। हम भोजन करने में जल नहीं पीते। परन्तु भोजन करने के एक घंटे

के उपरांत जल पीते हैं। और यदि हमें इसके पश्चात् भी जल की इच्छा होवे, तो हम उसको एक बार और पी लेते हैं।

मादक पदार्थ

हम सब प्रकार के मादक पदार्थों को जैसे—चाय, क़हवा, कोका तथा तम्बाकू आदि को धार्मिक दृष्टि से वर्जित समझते हैं। हम पान-सुपारी तक नहीं खाते हैं।

सुप्रसिद्ध विद्वान श्री० बरनार मैकफैडन ने भोजन की मात्रा के सम्बन्ध में यह विचार प्रकट किया है—"इस बात की यथार्थता पर ध्यान देना चाहिए कि कम भोजन करने से स्वास्थ्य तथा शक्ति प्राप्त होते और संचित रहते हैं। यदि जितना भोजन साधारणतः किया जाता है, उसका आधा किया जावे, तो वही एक व्यक्ति के लिए काफ़ी होगा।"

मराठी भाषा में निम्नांकित एक कहावत है, जो उपरोक्त श्री० बरनार के भाव को पूर्ण रूप से प्रकट करती है—

'फार खाल तर थोड़ें खाल। थोड़े खाल तर फार खाल।' अर्थात्—भोजन कम करो। परन्तु अधिक भोजन करने के लिए जीवित रहो।

प्रतिदिन सूर्य-नमस्कार जैसी कोई व्यायाम-पद्धति के पालन करने, भूख होने पर सादा, सात्विक एवं लाभकारी भोजन करने तथा उसको ख़ूब चबाकर खाने के अतिरिक्त, जब तब पूर्ण अथवा अर्द्ध उपवास भी करना आवश्यक है।

उपवास

हम प्रत्येक सोमवार, मंगल, प्रत्येक मास की कृष्णपक्ष की चतुर्थी और वर्ष के प्रत्येक प्रधान दिन को अर्द्ध उपवास

करते हैं। आश्विन (क्वार) मास की नवरात्रि के दिनों में हम फल खाकर और गाय का, वही थनों से निकला हुआ, ताज़ा गरम बिना मीठे के दूध को पीकर रहते हैं। चतुर्मास* के एक अथवा दो मासों में हम हविष्य (बिना नमक का भोजन) भोजन करते हैं।

श्रीयुत बरनार मैकफैडन का कहना है,—"यदि तुम अनियत समय तक अच्छी तरह से जीवित रहना चाहते हो, तो तुमको यह संकल्प करना होगा कि तब तक हम उपवास अवश्य करेंगे।"

यदि तुमने अभी तक सूर्य-नमस्कार की इस प्रकार से भोजन तथा उपवास करके, जैसा इस प्रकरण में तथा आगे १२ वें प्रकरण में दिया हुआ है, जांच तथा अभ्यास नहीं किया है, तो हमारा तुम से अनुरोध-पूर्वक यह कहना है कि तुम इस प्रकार से इसकी एक बार जांच अवश्य कर लो।

शरीर शास्त्र के सिद्धान्त

हम निम्नांकित बातों में श्री० बरनार मैकफैडन से सहमत हैं—

(१) हमारा शरीर हमारी सब से उत्तम जायदाद है।

(२) स्वास्थ्य की सम्पत्ति हमारी सबसे बड़ी पूंजी है।

(३) रोग, स्वास्थ्य सम्बधी नियमों के भंग करने के लिए एक दंड है।

(४) प्रत्येक पुरुष पुरुषार्थ का एक अति ज्वलन्त उदाहरण हो सकता है और प्रत्येक स्त्री स्त्रीत्व का एक सुन्दर

* वर्षा काल के चार महीने—ये आषाढ़ शुक्ला एकादशी से आरम्भ होते हैं और कार्तिक शुक्ला एकादशी को समाप्त।

सुदृढ़ तथा सुडौल नमूना बन सकती है, यदि जीवन के नियमों का दृढ़ता-पूर्वक पालन किया जावे।

सूर्य-नमस्कार व्यायाम-प्रणाली का विकाश

हमसे बहुधा इस प्रकार का प्रश्न पूछा जाता है कि क्या आप आरंभ ही से सूर्य-नमस्कार व्यायाम को वर्त्तमान प्रणाली के अनुसार ही करते आए हैं?

सूर्य-नमस्कार की वर्त्तमान प्रणाली का विकाश प्राचीन प्रणाली से किस प्रकार हुआ, इसका संक्षिप्त उत्तर यों है—

सन् १९०८ ई० में हमने प्राचीन प्रणाली के अनुसार सूर्य-नमस्कार करना आरम्भ किया था। इस प्राचीन प्रणाली के अनुसार झुकते समय न तो घुटनों को सीधा रखना आवश्यक था और न पैरों को हथेलियों के सोध में रखना ही आवश्यक था। सीध से पैरों को कई इंच पीछे रखने से ही काम चल जाता था और हर एक नमस्कार करते समय सीधे खड़े होने के बदले झुक कर ही नमस्कार कर लिया जाता था।

वर्त्तमान प्रणाली के अनुसार एक पूरा नमस्कार करने के लिए ३ बार पूरी सांस लेनी पड़ती है और प्रणव, बीज-मंत्र और वैदिक मंत्र—तीनों झुकने की सूरत में धीरे धीरे या जोर से (जैसा कि समझाया जा चुका है) उच्चारण करने पड़ते हैं। इसी ढंग से बाल्यकाल में हमें सूर्य-नमस्कार करने की शिक्षा दी गई थी। इस समय भी बहुतेरे लोग प्राचीन प्रणाली के अनुसार ही सूर्य-नमस्कार करते हैं। बहुतेरे लोग खड़े तो सीधे हो जाते हैं, पर झुकते समय घुटनों को सीधा नहीं रखते।

लगभग एक साल तक इस प्रकार सूर्य-नमस्कार करने पर एक दिन हमने एक पैर को आगे बढ़ा कर उसे हथेली की सीध में

रखने की चेष्टा की। इससे हमें पेट और कमर पर कुछ अधिक ज़ोर पड़ता ज्ञात हुआ। इस प्रकार प्राचीन प्रणाली में यह पहला सुधार हुआ।

दूसरे अवसर पर हमने हथेलियों को ज़मीन पर रखने के लिए झुकते समय घुटने को सीधा रखने की चेष्टा की। इससे पिंडलियों, जंघाओं, कमर, पेट और समस्त पीठ पर अधिक ज़ोर पड़ता मालूम हुआ। इस प्रकार यह दूसरा सुधार हुआ।

कुश्ती लड़ने और अन्य व्यायाम करने की प्राचीन शिक्षा-पद्धति के अनुसार हम लोग, कसरत करते या न करते समय, छुटपन में दूध, मलाई, घी, मक्खन, बादाम इत्यादि स्वतंत्रता से खाया-पिया करते थे। इसका फल यह होता था कि तमाम शरीर में और विशेष कर पेट पर चर्बी बढ़ जाया करती थी। सूर्य-नमस्कार करते समय पेट की चर्बी के कारण कई सूरतें भली-भांति नहीं की जा सकतीं, इसलिए पेट की मुटाई कम करने की आवश्यकता प्रतीत हुई।

इस प्रकार सूर्य-नमस्कार में जो परिवर्तन किए गए, इनके कारण पेट और पेडू के पुट्ठों पर विशेष खिंचाव पड़ने लगा। फल यह हुआ कि ६ महीने के भीतर ही हमारा पेट पिचक कर ठीक हो गया और सभ्य समाज का प्रधान रोग, अजीर्ण, दूर होगया। यद्यपि कभी कभी प्रातःकाल पेट की अंतड़ियाँ अपना काम—मल-मूत्र का विसर्जन—ठीक ठीक नहीं करती थीं, पर वही काम सूर्य-नमस्कार करने के घन्टे भर बाद स्वतः ठीक ठीक हो जाता था।

अंतिम ३ नमस्कारों में प्रणव, बीजमंत्र और पूरे पूरे वैदिक मंत्र उच्चारण करने के लिए कुछ अधिक समय तक खड़े रहने की आवश्यकता है। ऐसा करते समय हमने तन कर खड़े होने और

सीना फुलाकर रखने की चेष्टा की। ऐसा करने से कमर और पेट पर सुहाता हुआ ज़ोर पड़ने लगा। इसके बाद हमने हर एक नमस्कार में ऐसा ही करना आरम्भ कर दिया।

दाहिना पैर आगे रखने और फिर बायां पैर आगे रखने में पेट के दाहिनी और बाईं तरफ़ विशेष ज़ोर पड़ने लगा। जिसका फल यह हुआ कि जिगर और तिल्ली के कामों में शक्ति मिलने लगी। हमने, इसलिए, सूर्य-नमस्कार की प्रणाली में इस प्रकार का भी सुधार कर दिया।

जब इन सुधारों से शरीर के भिन्न भिन्न अंगों पर—विशेष कर पेट और पेड़ू पर—विशेष ज़ोर पड़ने लगा, तो हमने एक सांस में ४ या ५ नमस्कार करना छोड़ दिया। झुकने की सूरत में छाती और मस्तक से ज़मीन छूते समय पेट पिचकाने की आवश्यकता पड़ी और इससे सांस बाहर निकाल देना आवश्यक होने लगा। इस प्रकार हर एक नमस्कार करते समय पेट पिचकाकर सांस पूर्ण रूप से बाहर फेंकना ज़रूरी हो गया।

खड़े होने की सूरत में सीना फैलाने और बाहर की ओर निकालते समय पूर्ण रूप से सांस खींचना बड़ा लाभदायक सिद्ध हुआ। इस प्रकार हमने एक नमस्कार करने में एक पूरी सांस लेना (पूरक), उसे रोक रखना (कुंभक), और फिर सांस बाहर निकाल देना (रेचक) आरम्भ कर दिया। इससे सीना चौड़ा होने लगा और पेट की चर्बी घटने लगी।

जब कभी भिन्न भिन्न सूरतें करते समय पेट पिचकाना आवश्यक प्रतीत हुआ उस सूरत में सांस फेंकना बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ। इसी प्रकार जिस सूरत में सीना निकालने की आवश्यकता होती थी, वहां पूर्ण रूप से सांस खींचना लाभदायक सिद्ध हुआ।

इस प्रकार हर एक नमस्कार में तीन बार सांस लेना आवश्यक हो गया।

"फ़िज़िकल कलचर" नामक पत्र के अप्रैल १९२४ के अंक में श्री० बी० एम० लेसर लेसारियो के लेख को ध्यान से पढ़ने पर हमें प्रणव और बीज मंत्रों को धीरे धीरे, ज़ोर से और शुद्ध शुद्ध उच्चारण करना अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुआ।

इन सब बातों को उपयोग में लाते हुए हमें प्राचीन प्रणाली में आवश्यक सुधार करने पड़े।

हमने यह सब यही सोच समझ कर लिखा है कि इससे हम मनुष्य जाति का अधिक नहीं तो थोड़ा उपकार अवश्य कर सकेंगे।

हमारी रानी साहबा का अनुभव

जो लड़कियां अथवा स्त्रियां हमारे नियमों के अनुसार सूर्य-नमस्कारों को कर रही हैं, वे शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति में बहुत बड़ा लाभ प्राप्त कर रही हैं।

सूर्य-नमस्कार करने से जो कुछ थोड़े से लाभ हमारी रानी साहिबा को प्राप्त हुए हैं, वे ये हैं—

(१) **पीठ और कमर की शक्ति**—सूर्य-नमस्कार आरम्भ करने के ३ वर्ष पूर्व, जब आप पढ़तीं अथवा घन्टे, आध घन्टे तक कोई कामकाज करतीं तथा बैठी रहतीं, तब आपकी रीढ़ की हड्डी के ऊपर के भाग में दर्द हुआ करता था। यद्यपि अब आप पहिले से अधिक परिश्रम से तथा अधिक समय तक पढ़तीं और काम करती रहती हैं, परन्तु आपकी रीढ़ में कहीं भी पीड़ा नहीं होती।

औंध राज्य के चीफ़ साहब की धर्मपत्नी २८ वर्ष की अवस्था



पृष्ठ १०२ देखिए

श्रीमती सौभ० सीताबाई किर्लोस्कर ५० वर्ष की अवस्था



पृष्ठ १०२ देखिए

(२) **पाचन-षक्ति**—आपको जब तब पेट के रोग, जैसे अजीर्ण इत्यादि भी हो जाया करते थे। परन्तु अब वे सब दूर हो गये हैं।

(३) **साधारण मासिक धर्म**—जब से आपने सूर्य-नमस्कार करना आरम्भ किया है, तब से आप की मासिक-धर्म सम्बन्धी सब आपत्तियां जाती रही हैं। पहिले, जब आपको मासिक-धर्म होता था. तब आठ दिन तक रुधिर-स्राव होता रहता था और बड़ी कठिन पीड़ा होती थी। परन्तु अब रुधिर-स्राव की मात्रा तथा दिन बिल्कुल साधारण हो गये हैं और किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता है।

(४) आपकी कमर में जब तब जो दर्द हो जाया करता था, वह अब जाता रहा है।

(५) बच्चा पैदा हो जाने के उपरांत स्त्रियों को जो दुर्बलता आ जाती है, वह आपको अब बहुत दिनों तक नहीं सताती—जल्द दूर हो जाती है।

(६) आप सूर्य-नमस्कार करने से, जिस आयु की आप हैं, उससे कम की जान पड़ती हैं।

श्रीमती सौभा० सीताबाई किर्लोस्कर का अनुभव

आपने सूर्य-नमस्कार को बीज तथा वेद-मंत्रों के साथ १६ जुलाई, सन् १९१५ ई० से करना आरम्भ किया है। आपको इनके ६ महीने के अभ्यास के उपरांत निम्नांकित कुछ लाभ प्राप्त हुए हैं—

(१) आपकी पीठ और कमर की सब पीड़ा जाती रही है।

(२) आपको गत ३५ वर्षों से मासिक-धर्म सम्बन्धी जो कष्ट थे, वे सब धीरे धीरे दूर हो गये हैं और आप में जो गर्भपात

होने की दुर्बलता थी, वह सब दूर हो गई है। इससे प्रकट है कि यदि सूर्य-नमस्कार को नित्यप्रति नियमबद्ध होकर किया जावे, तो इसका गर्भाशय पर बहुत लाभदायक प्रभाव पड़ता है।

(३) आपकी गठिया जाती रही है।

(४) आपके शरीर की सब व्यर्थ चर्बी उतर गई है और शरीर बलवान, दृढ़ तथा लचीला हो गया है।

(५) आपकी बांहों, टांगों तथा ऊपर के आधे शरीर के पुट्ठे बलवान और दृढ़ हो गये तथा उभड़ गये हैं।

(६) आपका सीना दो इंच बढ़ गया है।

(७) आपके शरीर का रुधिर पहिले से अच्छा हो गया है। आपके चेहरे पर रंगत आगई है और नाख़ून पहिले से अधिक लाल हो गये हैं।

(८) आपके सिर के बालों का झड़ना बन्द हो गया है।

(९) आपके पसीने में जो दुर्गन्धि आया करती थी, वह अब जाती रही है।

(१०) आपकी पाचन शक्ति बढ़ गई है।

(११) आपको इस बीच में कभी ज़ुकाम अथवा खांसी तक नहीं हुई।

श्रीयुत आर० के० किर्लोस्कर का अनुभव

आप ५ वर्ष से सूर्य-नमस्कारों को बीज तथा वेद-मंत्रों के साथ प्रतिदिन प्रातःकाल नियमबद्ध होकर कर रहे हैं। आप प्रतिदिन १०० नमस्कार करते हैं और १०० नमस्कार करने में आपको आधा घन्टा लगता है। आप इनके अतिरिक्त प्रतिदिन ६०० फ़ुट

श्रीयुत आर० के० किर्लोस्कर ७० वर्ष की अवस्था



पृष्ठ १०४ देखिए

श्रीयुत पंधारीनाथ ए० रनामदार ३५ वर्ष की अवस्था



पृष्ठ १०५ देखिए

ऊंची एक पहाड़ी पर तेज़ी के साथ चढ़ और उतर कर टहलते भी हैं। आपको इस टहलने में क़रीब ४० मिनट लगते हैं।

आप सूर्य-नमस्कार आरम्भ करने के पूर्व दिन में दो बार भोजन करते थे। परन्तु इसके आरम्भ करने के कुछ महीनों के बाद आपने अपना संध्या-समय का भोजन छोड़ दिया है।

आपको जो लाभ सूर्य-नमस्कार करने से प्राप्त हुए हैं, वे ये हैं—

(१) आप सब प्रकार के शारीरिक रोगों से बंचित हो गये हैं। आपको इस बीच में कभी ज़ुकाम तक नहीं हुआ। परन्तु आप ज़ुकाम से, इससे पहिले, साल में कम से कम एक बार अवश्य पीड़ित हो जाते थे।

(२) आपको इन गत पांच वर्षों में केचुओं की शिकायत नहीं हुई। इसके लिए आपको हर साल एक अथवा दो बार संटोनीन औषधि का सेवन करना पड़ता था।

(३) आपके प्रायः गर्दन के नीचे के भाग तथा कमर में, जो दर्द हुआ करता था, वह अब पूर्ण रूप से जाता रहा है। इससे ज्ञात होता है कि इस व्यायाम से रीढ़, पीठ और कमर ये तीनों मज़बूत होते हैं।

(४) अब आपकी पाचन-शक्ति बिल्कुल ठीक हो गई है।

(५) आपकी शारीरिक तथा मानसिक शक्ति, अब ७० वर्ष की अवस्था में, एक ४५ वर्ष के युवा पुरुष के समान हो गई है।

श्रीयुत पंधारीनाथ ए० इनामदार का अनुभव

आप सूर्य-नमस्कारों को अपनी १४ वर्ष की आयु ही से कर रहे हैं। आप एक अच्छे खिलाड़ी और तैराक भी हैं। परन्तु

आपके शरीर का विकास सूर्य-नमस्कार द्वारा ही हुआ है। आप तौल में १५० पौंड, अर्थात् क़रीब २ मन हैं। आपका यह वज़न ८ वर्ष से एकसा चला आ रहा है। आपकी ऊंचाई ५ फ़ुट १० इंच है। आपकी यह ऊंचाई इसलिए उल्लेखनीय है कि आप के माता-पिता, जिनकी आप सन्तान हैं, दोनों ही बहुत छोटे क़द के थे।

इन्दपुर (पूना) के मराठी स्कूल के हैडमास्टर श्रीमान शंकर हरी जादवेकर का अनुभव

सन् १९२५ के मई महीने में प्रतिदिन २ बजे के लगभग मेरे पेट में दर्द होना शुरू हुआ। धीरे धीरे यह दर्द इतना बढ़ गया कि इन्दपुर के डाक्टरों और वैद्यों के इलाज करने पर भी मुझे यही प्रतीत हुआ करता था कि मानो मेरे पेट में एक साथ कई बिच्छू डंक मार रहे हों। मैं फिर पूना गया और वहां दस दिन तक एक सुप्रसिद्ध वैद्य का इलाज करता रहा। इससे आराम तो कुछ अवश्य मिला, पर दर्द न गया।

अपना रोग न दूर होते देख मैं निराश हो गया किन्तु भाग्य से इसी समय मुझे औंध राज्य के चीफ़ साहब की लिखी हुई सूर्य-नमस्कार की मराठी पुस्तक हाथ लगी। किताब को ध्यान से पढ़ने पर मुझे अपने रोग के निवारण करने को सूर्य-नमस्कार करने की इच्छा हुई। मैं सप्ताह में लगभग ५० नमस्कार ही कर सकता था कारण कि मैं जमनास्टिक भी किया करता था। इस से मुझे थोड़े ही समय में लाभ प्रतीत हुआ और मैंने नमस्कारों की संख्या बढ़ा दी। दो सौ नमस्कार करते करते मेरा दर्द दूर हो गया और मेरा स्वास्थ्य सुधर गया। मुझे यह जानकर बड़ा आनन्द हुआ कि सूर्य-नमस्कार से वह काम हो गया, जो दूसरे

व्यायाम या औषधियां न कर सकी थीं। इस समय मैं बड़ी दृढ़ता से सूर्य-नमस्कार कर रहा हूं।

सूर्य-नमस्कार का इस प्रकार अद्भुत फल प्राप्त कर मेरी इच्छा हुई कि मेरे सब सहकारी अध्यापक और विद्यार्थी भी इस अद्भुत व्यायाम से लाभ उठायें। इसी अभिप्राय से मैंने अध्यापकों, विद्यार्थियों तथा नागरिकों की एक सार्वजनिक सभा कर उसमें सूर्य-नमस्कार के अद्भुत गुण और स्वस्थ्य होने के लिए उसकी आवश्यकता और महत्ता पर व्याख्यान दिया। व्याख्यान का अच्छा प्रभाव पड़ा और सब अध्यापकों और विद्यार्थियों ने एक स्वर से प्रतिदिन सूर्य-नमस्कार करना स्वीकार किया। नागरिकों पर भी इसका अच्छा प्रभाव पड़ा और उन्होंने इस व्यायाम के करने के लिए आवश्यक भवन के निर्माण करने के निमित्त दान भी दिया।

इसी समय मुझे दूसरा विचार उत्पन्न हुआ—मैं यह समता कर देखना चाहता था कि डण्ड और बैठक यदि ढंग से और नियमित रूप से नित्य किए जायँ तो उनका असर इसी प्रकार होगा या नहीं। अतः मैंने एक ही आयु, बल और स्वास्थ के २५-२५ विद्यार्थियों के दस्ते बना दिए। इसी काम के लिए बनाए हुए एक रजिस्टर में व्यायाम करने वाले विद्यार्थियों के शरीर की नाप-तौल दर्ज की गई। ये दस्ते जुदा जुदा व्यायाम करने लगे।

साल भर तक इस प्रकार करने पर मैंने जो परिणाम देखा उससे तो यही कहना पड़ता है कि डण्ड-बैठक की अपेक्षा सूर्य-नमस्कार कहीं अधिक लाभदायक और स्वास्थकर है।

इन्दपुर
ता० ३० जून, १९२८

ह० एस० डी० जादवेकर

न्यू इंगलिश स्कूल चुवली (धारवाड़) के सुपरिंटेंडेंट मि० जी० के० गोखले, एम० ए०, के अनुभव

सूर्य-नमस्कार की परीक्षा करना निश्चय कर मैंने हुबली से औंध जाकर अपने को इसके अनुभवी शिक्षक के हाथों में सौंप दिया। मैंने अपना पहला पाठ १८ अक्तूबर १९२८ ई० में लिया। इसके सीखने में मुझे ४ या ५ दिन लग गये। मैं सिर्फ़ आधी दर्जन नमस्कार ही प्रति दिन करता रहा क्योंकि मेरा शरीर कड़ा था और मेरे बहुत से पुट्ठों पर इतने कम नमस्कार करने पर भी अधिक ज़ोर पड़ता था। धीरे धीरे आसानी होने लगी और कुछ ही दिनों में मैं नियमानुसार १२ नमस्कारें करने लगा। आधे दर्जन नमस्कार तो मैं फिर हर चौथे दिन बढ़ाने लगा। १७ वें दिन जब मैं ५० नमस्कार बिना सांस टूटे या थके हुए कर सका, तो मुझे स्वयं बड़ा आश्चर्य हुआ। मेरी राय से यह सब प्रणव, बीज मंत्र और वैदिक मंत्रों के उच्चारण ही के कारण हैं, क्योंकि इन मंत्रों का ढंग इतना वैज्ञानिक है कि सूर्य-नमस्कार की वृद्धि के साथ साथ विश्राम भी अधिक मिलता जाता है। यदि पहले १२ नमस्कारों में मंत्रों आदि के उच्चारण का समय १ समझा जाय, तो अगले ६ नमस्कारों में वही समय और इससे भी अगले ३ नमस्कारों में ४ और भी अगले ३ में वही समय १२ हो जायगा। इसी लिए एक आवृत्ति (२४ या २५ नमस्कार) पूरी करने पर मनुष्य अपने को तरोताज़ा पाता है।

सूर्य-नमस्कार व्यायाम आरंभ करने के इच्छुक व्यक्तियों को मैं विश्वास दिला सकता हूँ कि यह व्यायाम अत्यन्त सरल और आपत्तिशून्य है क्योंकि इससे शरीर के किसी अंग पर अनावश्यक ज़ोर नहीं पड़ता। नियमानुसार यह व्यायाम करने से कुछ ज़ोर ऐसा ज़रूर पड़ेगा जिससे एक नये व्यक्ति को कुछ

भावी आशा न हों, पर धीरे धीरे उसे इसमें पूर्ण सफलता मिलेगी। वास्तव में इसकी कुछ सूरतें इतनी कठिन हैं कि उन्हें सफलता पूर्वक करने के लिए महीनों के अभ्यास की आवश्यकता होती है।

थोड़ दिनों के अभ्यास ही से मुझे लाभ अनुभव होने लगा। पेट पर छाई हुई चर्बी कम और छाती चौड़ी होने लगी। पाचन क्रिया, जो अब तक स्वाभाविक ढंग ही से हो रही थी, शक्ति-संयत और ठीक ढंग से हो रही है। सारांश में, मैं बहुत कुछ चुस्त और फुर्तीला होता जा रहा हूँ।

इस व्यायाम का असर विशेष रूप से पेट और मेरुदण्ड के पुट्ठों पर पड़ता हुआ दिखाई देता है। पूर्ण स्वस्थ और शरीर के आरोग्य रखने के लिए मेरुदण्ड का शक्ति-संपन्न और लचीला होना नितान्त आवश्यक है।

सूर्य-नमस्कार से 'मेरुदण्ड को शक्ति दान' नामक पुस्तक में उल्लिखित (पृष्ठ ११६-११७) श्री बर्नार मैकफ़ैडन के निम्न-लिखित कथन का पूर्ण रूप से समर्थन होता है—

" यदि तुम्हें शरीर के किसी अंग का व्यायाम करने का भी समय न मिलता हो तो कम से कम मेरुदण्ड ही का व्यायाम कर लिया करो। इस व्यायाम में लगाए हुए समय का बहुत अच्छा फल मिलेगा। मेरा पूरा विश्वास है कि शरीर के दूसरे अवयवों का भी व्यायाम करने से शरीर की शक्ति और विकास अनुकूल ढंग से होता है, पर जो लोग ऐसा कहते हों कि उन्हें संपूर्ण शरीर के अवयवों का व्यायाम करने का समय नहीं मिलता, उनसे मैं यही कहूँगा कि ये लोग 'मेरुदण्ड का व्यायाम' करें।

इससे यही तात्पर्य निकलता है कि सूर्य-नमस्कार व्यायाम करना (उस समय तक जब तक कि पूर्ण रूप से शरीर से पसीना

न निकलने लगे) हर एक स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध के लिए लाभदायक है। जीवन-पथ के चालीसवें मील पर पहुँचने वाले (४० वर्ष की आयु वाले) व्यक्तियों के लिये तो, जिनका स्वास्थ भिन्न-भिन्न अंगों से ढीला होना आरम्भ होता दिखाई देने लगे, नितान्त आवश्यक है।

आँध
ता० ८ नवम्बर, १९२८

—जी० के० गोखले,
सुपरिंटडेंट, न्यू इंगलिश स्कूल, हुबली

बारहवां प्रकरण

औंध-राज्य के स्कूलों में सूर्य-नमस्कार का प्रचार

हमें यह लिखने में बड़ी प्रसन्नता अनुभव होती है कि हम अपने राज्य के लोगों को साधारणतः शरीरिक शिक्षा और विशेषतः सूर्य-नमस्कार की उपयोगिता को समझाने में समर्थ हो सके हैं, जिसका यह फल हुआ कि उन्होंने इस सम्बन्ध में इतना उत्साह दिखाया कि उन्होंने यह मांग उपस्थित की कि औंध-राज्य के प्रत्येक स्कूल में सूर्य-नमस्कार का करना राज्य में एक नये नियम को बना कर अनिवार्य कर दिया जावे।

बरनार्ड शा की भांति जर्मन के बहिष्कृत क़ैसर का भी यह कहना है,—"मैं ऐसे आदमियों को पसंद नहीं करता, जिनके केवल पुट्ठे ख़ूब उभड़े हुए होते हैं। मैं उस आदमी को अधिक पसंद करता हूं, जिसके सम्पूर्ण शरीर का सब प्रकार से विकास हो गया है। मैं एक पेशेवर पहलवान की अपेक्षा, जिसने अपने महान बल के कारण संसार में सर्व्वोपरि नाम पाया है, उन दस हज़ार स्त्री-पुरुषों तथा बच्चों को अधिक अच्छा समझता हूँ, जो नित्य प्रति किसी अच्छी नियम-बद्ध व्यायाम-प्रणाली का अनुसरण करते हैं।" [फ़िज़िलकल कलचर, फ़र्वरी, सन् १९२७ ई०]

यह हमारी हार्दिक इच्छा है कि हमारे स्कूलों के विद्यार्थी सूर्य-नमस्कार के लाभों को केवल अपने कुटुम्बियों ही को न

बतावें, किन्तु उनको अपने मिलने-जुलने वाले लोगों तक भी पहुँचा दें।

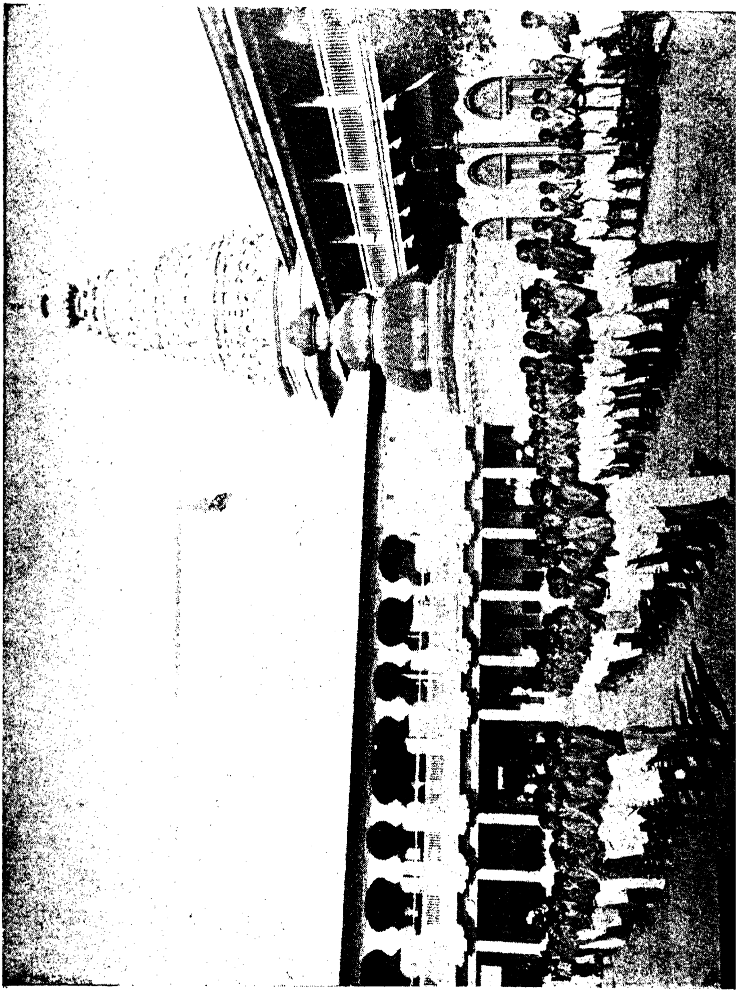
क्या हम अपने अन्य राजा लोगों तथा ब्रिटिश भारत के शिक्षा-विभाग के अधिकारियों से यह आशा नहीं कर सकते कि वे अपने यहाँ सूर्य-नमस्कार का प्रचार करें, जिससे हमारे देश-वासी स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु प्राप्त करें ?

यदि हमारी यह इच्छा पूर्ण हो जावे, तो केवल ५ या १० वर्ष ही में हमारे स्कूल तथा कालिजों के विद्यार्थियों के स्वास्थ्य, शक्ति तथा उत्साह में बहुत कुछ उन्नति हो जायगी। हमको केवल अपने लड़कों ही के अच्छे स्वास्थ्य को देख कर सन्तोष न होगा, किन्तु पूर्ण संतोष हमें तब होगा, जब, जैसी कि समाज की आवश्यकता है, हमारी लड़कियों का स्वास्थ्य भी अच्छा हो जायगा। लड़कियाँ ही आगे माता बनती हैं। इसलिए इनका स्वास्थ्य लड़कों के स्वास्थ्य से भी पहिले सुधरना चाहिए। आज से ३० वर्ष पूर्व के लड़कियों के स्कूलों में शारीरिक शिक्षा का कोई प्रबन्ध न था। परन्तु कुछ थोड़े से समय से स्कूल तथा कालिजों में जो शिक्षा हमारी लड़कियों को दी जाती है, उसके दुष्परिणाम बहुत कुछ कम हो गये हैं। परन्तु इस प्रकार जो लाभ हुआ है, वह स्कूल तथा कालिजों की सब लड़कियों को प्राप्त नहीं होता, किन्तु बस थोड़ी ही सी लड़कियों तक पहुँच पाता है।

जो लड़कियाँ स्कूल तथा कालिजों में नहीं पढ़ती हैं, उनके लिए तो वास्तव में व्यायाम करने की कोई उपयुक्त प्रणाली ही नहीं है। सम्मिलित कुटुम्ब-प्रथा के टूटने के कारण घरों में लड़कियों की संख्या कम और मिल कर व्यायाम करने की प्रथा असम्भव होती जा रही है।

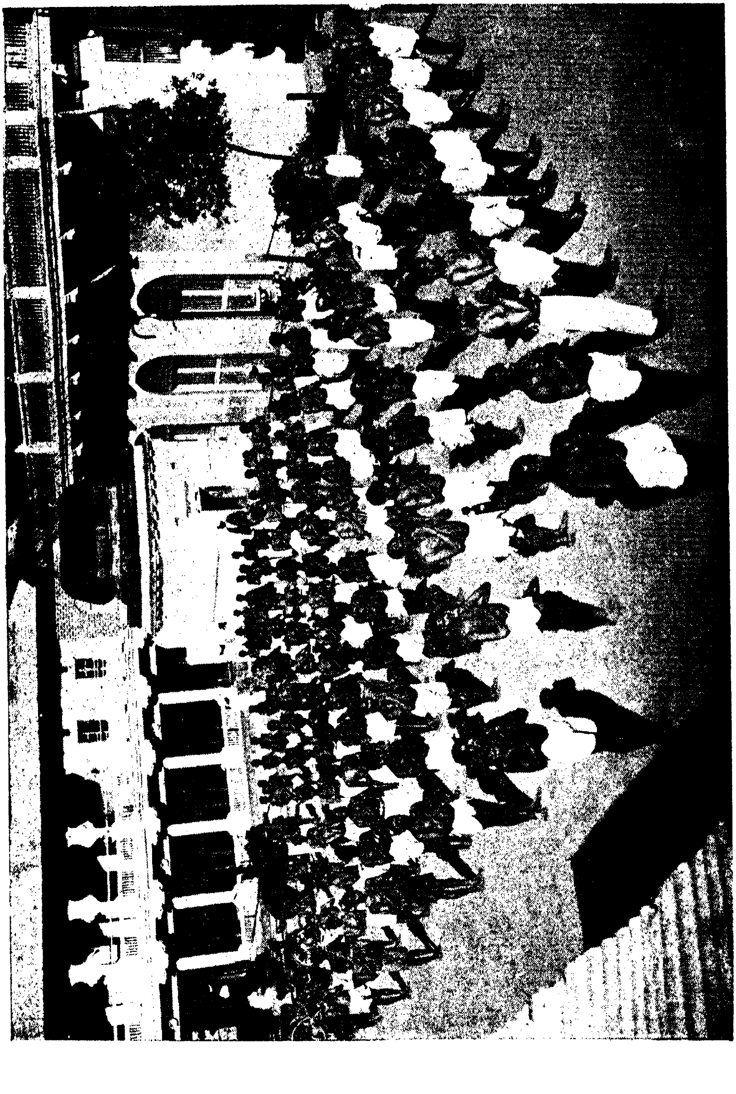
इस कारण किसी ऐसी व्यायाम-पद्धति की आवश्यकता,

औंध-राज्य के हाई स्कूल के विद्यार्थी सूर्य-नमस्कार कर रहे हैं



पृष्ठ ११२ देखिए

औंध-राज्य के हाई स्कूल के विद्यार्थी सूर्य-नमस्कार कर रहे हैं





औंध-राज्य के हाई स्कूल के विद्यार्थी सूर्य-नमस्कार कर रहे हैं



औंध-राज्य के हाई स्कूल के विद्यार्थी सूर्य-नमस्कार कर रहे हैं



औंध-राज्य के स्कूल की लड़कियाँ सूर्य-नमस्कार कर रही हैं ।

जिसको अकेली लड़की भी पूर्ण रूप से कर सके, दिन प्रति दिन बढ़ती चली जा रही है। ऐसी लड़कियों के लिए हमारा सूर्य-नमस्कार सर्वोत्तम व्यायाम-क्रिया है। और यह स्मरण रखना चाहिये कि जैसे पुरुष, वैसे यदि स्त्रियां भी इस सूर्योपासना को अपनी अपनी व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुसार करें, तो इससे केवल करने वाले ही को स्थायी आनन्द प्राप्त न होगा, किन्तु उसकी सम्पूर्ण आगामी सन्तति भी इस आनन्द का उपभोग करेगी।

इस सम्बन्ध में जर्मन देश के वर्तमान समय के बहिष्कृत क़ैसर के ये शब्द उल्लेखनीय हैं,—"भविष्य में स्त्रियों की शारीरिक उन्नति की ओर अधिक ध्यान दिया जावेगा। गत यूरुपीय महायुद्ध से हमें यह विदित हो गया है कि युद्ध में स्त्रियों के शारीरिक बल की कुछ कम सहायता की आवश्यकता नहीं होती। स्त्री-पुरुषों को शान्ति-काल तथा युद्ध-काल, दोनों ही में अपने अपने कर्तव्यों को पालन करने के लिए भली भांति तैयार रहना चाहिए। चाहे भविष्य में स्त्रियों को सेना में काम करना न पड़े; परन्तु इसमें तो कोई संदेह नहीं है कि शारीरिक शिक्षा का प्रचार तो संसार भर में स्त्री-पुरुष, दोनों ही जातियों में अनिवार्य रूप से करना ही होगा"। [फ़िजिकल कलचर, फरवरी सन् १९२७ ई०]

सूर्य-नमस्कार का एक मुख्य गुण यह है कि इसको बहुत से आदमी मिल कर भी ड्रिल की तरह कर सकते हैं और यदि इसका उचित रूप से निरीक्षण किया जावे, तो इसको लड़के और लड़कियाँ—सैकड़ों लड़के-लड़कियाँ—एक साथ कर सकते हैं, जिसको दो लाभ होते हैं, एक तो व्यायाम, दूसरे समय की

किफ़ायत। सूर्य-नमस्कार की ड्रिल कराते समय विद्यार्थियों को आयु तथा ऊँचाई के अनुसार खड़ा करना चाहिए।

औंध-राज्य के सब प्राइमरी और मिडिल स्कूलों तथा हाई-स्कूल में जो आज गत पाँच वर्ष से सूर्य-नमस्कार की ड्रिल हो रही है, उसे देख कर हमें यह विश्वास हो गया है कि जितनी भी ड्रिलें हैं उनमें से यदि किसी को अनिवार्य किया जा सकता है, तो केवल सूर्य-नमस्कार ही को। क्योंकि इसके करने में सबसे कम कठिनाई पड़ती है और सब से अधिक लाभ प्राप्त होता है।

हमें बाहरी व्यायाम, खेल-कूद, कुस्ती, जमनाष्टिक, तैरना घोड़ा चढ़ना इत्यादि से विरोध नहीं है। इस बात पर हम विशेष ज़ोर देना चाहते हैं, कि अपनी रुचि, सुविधा, अवकाश और परिस्थति के अनुसार अन्य दूसरे प्रकार के व्यायाम करने के अतिरिक्त सूर्य नमस्कार सरीखा या कोई अनिवार्य व्यायाम नित्य प्रति किया जाना चाहिये जो स्वास्थ्य, सामर्थ और शक्ति का देने वाला हो और जो साल में हर समय किया जा सके। क्योंकि इसके करने से मनुष्य में वह शक्ति उत्पन्न हो जाती है जिससे वह शक्ति और सामर्थ के अन्य व्यायाम करने के योग्य हो जाता है।

सूर्य-नमस्कार को नियमित रूप से करने से बालक और बालिकाओं के शरीर की शक्ति और सौंदर्य का विकास और भी अधिक होता है। इसके अतिरिक्त इस व्यायाम से शरीर के अन्य अवयवों की कार्य-प्रणाली में उत्तेजना मिलती है, क्योंकि इससे विशेष रूप में शरीर और मस्तिष्क पर शासन करने की योग्यता प्राप्त होती और अन्य खेलों और व्यायामों में बल लगाने की शक्ति उत्पन्न

होती है। इससे किसी अंग विशेष पर अनावश्यक ज़ोर नहीं पड़ता।

सूर्य-नमस्कार को नियमित रूप से करने से उपलब्ध सुन्दर स्वास्थ्य और सामर्थ्य मनुष्य को न केवल खेल-कूद ही में योग्य बनाता है बल्कि उसके दैनिक जीवन के कार्यों को भी उचित रूप में कराने में सहायक होता है।

तेरहवां प्रकरण

भोजन और व्यसन

भोजन के विषय में हम किसी सिद्धान्त को बताना नहीं चाहते हैं। परन्तु इस सम्बन्ध मे हमें कुछ थोड़ी-सी मोटी मोटी वातों का उल्लेख करना है।

यह बताने के पहिले कि हमारा भोजन क्या होना चाहिये, हम अपने पाठकों के सन्मुख यूरुप और अमरीका के इस विषय के कुछ आधुनिक विद्वान तथा अनुभवी पुरुषों के विचार उपस्थित करना चाहते हैं। क्योंकि यह प्रसिद्ध कहावत है, "महाजनेन गतः स पंथा"। अर्थात्—मार्ग वही है, जिस पर बड़े बड़े आदमी चल चुके हैं।

(१)

सर्वोत्तम भोजन क्या है ?

इस समय विज्ञान की इतनी भारी उन्नति होने पर भी रोग का बाज़ार वैसा ही भयंकर रूप से गरम है। अपने विभाग की सन् १९२५ ई० की रिपोर्ट में इंगलैंड के स्वास्थ्य-विभाग के मंत्री ने कहा है कि इंगलैंड में बीमारी के कारण सन् १९२५ ई० में २५० लाख सप्ताह के काम का हर्ज हो गया और सब से अधिक मृत्युएँ भगन्दर से हुईं। इसलिए, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि वर्त्तमान समय के डाक्टर लोगों का

यह जोर देकर कहना ठीक है कि आजकल, बनिस्बत पहिले के, बीमारी का भोजन से बहुत बड़ा सम्बन्ध है।

यूरुप की 'एक नवीन स्वास्थ्य-सभा की भोजन-समिति' के सभापति, डाक्टर बैलफ्रेज ने अपनी 'सर्वोत्तम भोजन क्या है?' नाम की पुस्तक में यह बतलाया है कि गत १६ वर्षों में जो भोजन सम्बन्धी नई नई खोजें हुई हैं, उन्होंने भोजन के प्राचीन सिद्धान्तों को उलट-पलट दिया है। उदाहरणार्थ—पहिले यह समझा जाता था कि जिस भोजन के करने से शरीर में गर्मी की मात्रा अधिक हो जावे, वह भोजन अच्छा है। इसलिए, पहिले भोजन का अच्छा या बुरा होना उसकी गर्मी की मात्रा पर निर्भर रहता था। परन्तु अब यह विचार निश्चय हुआ है कि भोजन का गुण उसकी मात्रा की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। और भोजन के अच्छे अथवा बुरे गुण का होना, उसमें विटैमीन* के होने तथा न होने पर निर्भर है। अभी इस सम्बन्ध में, कि विटैमीन में क्या क्या वस्तुएं हैं, खोज नहीं हुई है। परन्तु यह निश्चय रूप से जान लिया गया है कि बिना विटैमीन के जीवन तथा स्वास्थ्य असम्भव है। यह बात पशु आदि जीवधारियों की परीक्षा तथा मनुष्यों के अनुभव से भलीभांति सिद्ध हो चुकी है।

विटैमीन को चार भागों में बाँटा गया है—(१) विटैमीन (अ), (२) विटैमीन (ब), (३) विटैमीन (स) और (४) विटैमीन (द)। इनमें से प्रत्येक का स्वास्थ्य-रक्षा पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

विटैमीन (अ) दूध, मक्खन, मलाई और अंडे के पीले भाग में पाई जाती है। इसलिए, यदि हम इन पदार्थों को काफ़ी मात्रा में खाने लगें, तो विटैमीन (अ) हमको मिलने लगेगी।

---

* वह वस्तु जो दूध, फल, तरकारी आदि खाद्य पदार्थों में होती है और शारीरिक उन्नति के लिए आवश्यक है।

मारगरीन* में किसी प्रकार की भी विटैमीन नहीं होती। इसलिए, इसका मक्खन के बजाय प्रयोग न होना चाहिए—विशेष रूप से बच्चों के सम्बन्ध में। विटैमीन (अ) जानवरों के जोड़ों और मांस की भुनी हुई बोटियों में नहीं होती। परन्तु यह उनके जिगर और गुर्दों में पाई जाती है। विटैमीन (अ) को कभी कभी वृद्धिकारी विटैमीन भी कहते हैं। क्योंकि यह बच्चों के बढ़ने पर बड़ा प्रभाव डालती है। जिन बच्चों को यह काफ़ी मात्रा में नहीं मिलती है, उनको प्रायः रिकैट बीमारी (जिसमें हड्डियाँ नरम हो जाती हैं) हो जाती है और उनकी बढ़वार मारी जाती है। विटैमीन (अ) का अच्छी मात्रा में सेवन न करने के कारण वे रोग भी अवश्य हो जाते हैं, जो दुर्बलता के कारण उत्पन्न होते हैं। उस घृणा-जनक कौड नाम की मछली के तेल (कॉडलिवर आयल) का महत्व इसलिए ही अधिक है कि उसमें विटैमीन (अ) की मात्रा अधिक होती है।

विटैमीन (ब) अधिकतर गेहूँ, चावल और जौ इत्यादि के दाने के उस बीज-भाग में, जिसके कारण इनका पौदा उगता है, और इनकी भूसी में पाई जाती है। आजकल की कलों में इन अनाजों को पीसने से, इनकी ये दोनों चीज़ें जाती रहती हैं। इस-लिए; कल के आटे में विटैमीन (ब) का अभाव रहता है। हरी साग-भाजियों में भी विटैमीन (ब) होती है।

विटैमीनों में विटैमीन (स) ऐसे है, जैसे मनुष्य-समाज में बड़े आदमी। यह पत्तोंवाली साग-भाजियों और रसदार फलों में, जैसे काहू, गोभी, टमाटर, प्याज, नारंगी, संतरा, अंगूर और नीबू

---

* चर्बी को गरम करने और उसका तेल निकाल लेने के बाद एक ठोस चीज़ बच रहती है, जिसको किसी बनस्पति के तेल अथवा दूध या मक्खन में मिलाकर फेंट देने से मारगेरीन तैयार हो जाती है।

आदि में पाई जाती है। साग-भाजी कच्ची होनी चाहिए—आग की पकी हुई नहीं।

डाक्टर बैलफ्रेज ने इस सम्बन्ध में कि विटैमीन (ब) का हमारे भोजन में होना अति आवश्यक है कुछ उदाहरण उपस्थित किये हैं। इनको हम यहाँ उद्धृत करते हैं—

(१) जब गत यूरुपीय महायुद्ध में डेनमार्क के लोगों को विदेशी मांस न मिल सका, तब वे साबत गेहूँ, चावल और राई [एक प्रकार का जौ] खा कर जीवित रहे। इनके अतिरिक्त उनके पास दूध, मक्खन, आलू और हरी साग-भाजियाँ भी थीं। परन्तु इस प्रकार के भोजन करने का यह आश्चर्य-जनक फल हुआ कि उनकी मृत्यु संख्या पहिले की अपेक्षा फ़ी सदी कम हो गई।

(२) इसी गत यूरुपीय महायुद्ध के समय मसोपोटामिया में एक बेरीबेरो* नाम की बीमारी अंग्रेज़ी सेना के सिपाहियों में बड़े ज़ोर के साथ फैल गई। उनको जो भोजन की सामग्री दी जा रही थी, उसमें सफ़ेद दिसावरी आटा, टीनों में भरा हुआ मांस तथा ऐसे ही अन्य सुरक्षित पदार्थ थे। उनको दूध, अंडे और ताज़ी साग-भाजियाँ अथवा फल न मिलते थे। संयोग से ऐसा हुआ कि सफ़ेद दिसावरी आटे का मिलना बंद होगया और उसके बजाय उनको हाथ की चक्की का पिसा हुआ आटा दिया जाने लगा। इस आटे

* यह एक घातक रोग है, जो दक्षिणी देशों की ओर और लंका द्वीप में प्रायः देखा जाता है। इसके रोगी के बहुत दुर्बल हो जाने के कारण मालावार के रहने वाले इसे बेरीबेरी कहते हैं। सन् १८२२ ई० में यह रोग कलकत्ते में भी प्रगट हुआ था। यह रोग मद्रास और बर्मा में, जहाँ चावल बहुत खाया जाता है, प्रायः हुआ करता है। यह रोग सर्दी लगने और भीगने से होता है। इसलिए, इसका वर्षा ऋतु ही में अधिक ज़ोर होता है।

में गेहूँ का बीज-भाग तथा भूसी थी, जिसमें विटैमीन (ब) होती है। इस आटे के खाने का यह फल हुआ कि बेरीबेरी बीमारी दूर हो गई और जो बीमार थे, वे अच्छे हो गये। हाथ की चक्की के पिसे हुए आटे का पूरा भोजन करने के महत्व का इससे और अधिक ज्वलंत उदाहरण नहीं दिया जा सकता।

(३) बंदर तथा अन्य जानवरों पर जो विटैमीन (ब) के संबंध में परीक्षाएँ की गई हैं, उनके यह ज्ञात होता है कि जब उनको ऐसा खाना दिया गया, जिसमें विटैमीन (ब) का अभाव था, तब वे स्वास्थ्य तथा शक्ति में कम हो गये। परन्तु जब उनको वही खाना विटैमीन (ब) के साथ खिलाया गया, तब वे अच्छे भलेचंगे हो गये।

जैसे और डाक्टर लोगों का विश्वास है, उसी प्रकार डाक्टर बैलफ्रेज का भी विश्वास है कि हम में बहुत से आदमी अधिक मात्रा में भोजन करते हैं—विशेष रूप से मांस का भोजन। इसलिए, वह अपनी 'सर्वोत्तम भोजन क्या है ?' नाम की पुस्तक को इस उपदेश को लिख कर समाप्त करता है—

"अधिक मात्रा में भोजन करने की आदत को छोड़ो, नहीं तो मृत्यु तुम्हारे लिए औरों की अपेक्षा तिगुना मुँह फाड़े खड़ी हुई है।" ['टाइम्स आफ़ इंडिया' बम्बई, ६ नवम्बर, सन् १९२६ ई०]

(२)

विटैमीन

श्री० ल्योनार्ड, एम० डी०, ने ब्रिटेन के विश्व-कोष के १२ वें संस्करण की ३२ वीं जिल्द में ९३१ पृष्ठ पर विटैमीन के सम्बन्ध में यह लिखा है—"विटैमीन शब्द आज कल उन वस्तुओं के लिए प्रयोग किया जाता है, जो दूध, फल, तरकारी आदि खाद्य-पदार्थों

में होते हैं और शारीरिक उन्नति के लिए आवश्यक हैं। इन वस्तुओं के विषय में कि ये हैं क्या अभी निश्चय रूप से ज्ञात नहीं हुआ है। परन्तु इतना इनके सम्बन्ध में अवश्य विदित हो गया है कि ये मनुष्य तथा अन्य जानवरों के बच्चों के स्वाभाविक विकास तथा प्रौढ़ अवस्था के मनुष्यों के लिए तथा जानवरों के स्वास्थ्य और सुख के लिए अति आवश्यक हैं। ये अधिकतर कच्चे भोजन (आग का न पका हुआ) और विशेष रूप से बिना आग के पके फलों और साग भाजियों में रहते हैं। ये आग पर पकने, सूखने, छिलका उतरने तथा अन्य सफ़ाई की क्रियाओं से या तो क्षीण हो जाते हैं, या बिल्कुल ही नष्ट हो जाते हैं।

खाद्य-पदार्थों के स्वाभाविक रूप में अनेक प्रकार की विटैमीनें होती हैं। परन्तु इनमें से अब तक [सन् १९२२ ई० तक] केवल तीन ही अलग की जा सकी हैं। ये तीन विटैमीन ये हैं—(१) विटैमीन (स), (२) विटैमीन (ब), और (३) विटैमीन (अ)।

(१) **विटैमीन (स)**—यह विटैमीन उन तीनों विटैमीनों से, जो अब तक अलग की जा सकी हैं, सब से अधिक मुलायम होती है। यह सब प्रकार के कच्चे (आग के न पके हुए) फल और साग-भाजियों में अच्छी अधिक मात्रा में मौजूद है और इस सम्बन्ध में जो यह कहावत है कि जिन खाद्य-पदार्थों को सूर्य ने चूम लिया है, अर्थात् जिन पर सूर्य का प्रकाश पड़ता है, वे उन पदार्थों की अपेक्षा, जिन पर सूर्य का प्रकाश नहीं पड़ता है, अधिक लाभकारी होते हैं, वह यह सिद्ध करती है कि जो साग-भाजियाँ ज़मीन के ऊपर पैदा होती हैं, उनमें यह विटैमीन बनिस्बत उनके, जो ज़मीन के अन्दर पैदा होती हैं, अधिक होती हैं। यह विटमीन ताज़े दूध में बहुत होती है। परन्तु उसके उबालने से यह सब नष्ट हो जाती है। इस

विटैमीन की चैतन्यता बीज के अंकुरित होने की अवस्था में अधिक बढ़ जाती है। जैसे सेम, मटर, गेहूँ और जौ के दानों में, उनकी साधारण शुष्क तथा शान्त अवस्था में यह विटैमीन नहीं होती है। परन्तु यदि उनको जल में भिगो दिया जावे और अंकुरित कर लिया जावे, तो उनमें यह विटैमीन शीघ्र ही अधिक मात्रा में उत्पन्न हो जाती है। यह जीवन में बड़े काम की चीज़ है। इसको ऐसे यात्रियों को, जिनको दुर्गम स्थानों की यात्रा करनी है, कभी न भूलना चाहिए।

(२) **विटैमीन (ब)**–इस के अभाव ही के कारण बेरीबेरी नाम की बीमारी उत्पन्न होती है। बेरीबेरी नसों की बीमारी है और यह परीक्षा करके देख लिया गया है कि यदि विटैमीन (ब) भोजन में न होवे, तो पैलग्रा* आदि रोग उत्पन्न हो जाएंगे और यदि यह भोजन में रहे, तो ये रोग दूर हो जाएंगे। इसलिए, इस विटैमीन को प्रायः 'नस-रोग नाशक' भी कहते हैं। यह विटैमीन बच्चों की बढ़वार, विकास तथा कुशल के लिए अति आवश्यक है। यह खाद्य-पदार्थों के स्वाभाविक रूप, अनाजों तथा अंडों में अधिकता से पाई जाती है। यह जानवरों के दिमाग़, जिगर, पैंक्रिअस† और गुर्दों में भी मिलती है। परन्तु यह पुट्ठों अथवा मामूली भोजन में नहीं होती। ख़मीर में यह बहुत अधिक मात्रा में पाई जाती है। साग-भाजियों में यह दालवाले अनाजों में मिलती है। इनके भीतर यह सब जगह एक सी पाई जाती है। परन्तु खाने के अनाजों में जैसे गेहूँ,

---

* यह एक प्रकार का रुधिर का रोग है। यह बहुत बुरा और संघातक होता है।

† यह शरीर का वह अंग है, जो पेट के पीछे होता है। यह एक मांस का लोथड़ा होता है। इस पर दाने होते हैं।

जौ आदि केवल छिलके ही में होती है। इसीलिए बे-मांड का चावल और बिना छने आटे की रोटी खाने का अधिक महत्व है। यह जल में हल हो सकती है—विशेष रूप से खारी जल में और शराब में, परन्तु चर्बी में नहीं, यह अधिक गर्मी को सहन नहीं कर सकती। यदि इसको थोड़ी ही गर्मी देकर उबाला जावे, तो यह रहती है, वरना १२० अंश की गरमी पर यह नष्ट हो जाती है।

(३) **विटैमीन (अ)**—तीसरी विटैमीन के विषय में सब से पहिले सन् १९१३ ई० में श्रीयुत कौलुम और श्रीयुत बेविस, इन दोनों विद्वानों ने लिखा था। उन्होंने यह बतलाया था कि इससे सेवन न करने से आँखों में रोग उत्पन्न हो जाते हैं, जैसे पलकों की सूजन, पुतली का घाव; आंखों का बिलकुल चलाजाना और अन्त में मृत्यु का हो जाना। जब ये रोग खूब बढ़ भी गये हैं, तब भी ये इस विटैमीन के सेवन करने से अच्छे हो गये हैं। बच्चों का रिकैट रोग इसी विटैमीन के सेवन न करने से होता है। बच्चों की बढ़वार तथा स्वाभाविक विकास के लिए इस विटैमीन को बड़ी आवश्यकता है। यह (१) जानवरों की चर्बी, जैसे दूध, मक्खन तथा शरीर की ग्रंथियों में और (२) उन पौदों के हरे पत्तों में, जो खाने के काम में आते हैं, पाई जाती है। यह कनैक्टिव टिस्यू जैसे पुट्ठे, हड्डी, दांत और रुधिर इत्यादि और रीज़र्वड् टिस्यू, जैसे चर्बी इत्यादि को छोड़ कर और शेष सम्पूर्ण शरीर में पाई जाती है।

यह विटैमीन जैतून तथा अन्य बनस्पतियों के तेलों में नहीं पाई जाती। परन्तु 'कॉड' नाम की मछली के जिगर के तेल में यह बहुत मात्रा में मिलती है। यह तेल में हल हो जाती है

परन्तु जल में नहीं। इसमें अन्य दोनों विटैमीनों से गर्मी सहन करने की शक्ति अधिक होती है।

सन् १९२१ ई० में इस विटैमीन के विषय में हमारा बस इतना ही निश्चित ज्ञान था। इस ज्ञान का अभी आरम्भ ही है। इस सम्बन्ध में अधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिये अभी बड़ा भारी विस्तृत क्षेत्र पड़ा हुआ है। क्योंकि विटैमीन के मालूम हो जाने से हमारा बीमारियों की उत्पत्ति तथा कारणों के विषय में जो विचार था, वह अब बिलकुल बदल गया है। कुछ थोड़ा समय हुआ, तब तक हमारी रोग के विषय में यह धारणा थी कि इसको कोई अज्ञात तथा सूक्ष्म वस्तु उत्पन्न करती है। परन्तु विटैमीन आजकल हमको यह बता रही है कि रोग अपनी ही ग़लतियों से पैदा होता है, जिसके लिए सभ्य अथवा असभ्य दोनों प्रकार के मनुष्य अपराधी हैं। हमने अपने ध्यान को जीवाणु और उनके विष की ओर आकर्षित करके प्रश्न के उस पहलू को बिलकुल ही छोड़ दिया है, जो हमारी रक्षा से सम्बन्ध रखता है। हमने रोग-ग्रस्त जीवाणुओं से बचने के लिए अपने बच्चों के दूध को उबालने आदि क्रियाओं से निःशक्ति कर दिया है जिससे दूध की सब विटैमीन नष्ट हो जाती है और बच्चों में एक जीवाणु ही का सामना करने की शक्ति कम नहीं हो जाती, किन्तु सब जीवाणुओं के सामना करने की शक्ति कम होजाती है। विटैमीन के महत्व ने हमको यह बता दिया है कि यदि बच्चों का स्वाभाविक विधि से लालन-पालन किया जावे, तो उन पर वे बहुत सी बीमारियाँ असर नहीं कर सकतीं, जो आजकल हमारे जीवाणु-शास्त्र तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी ज्ञान के होते हुए भी बच्चों की मृत्यु-संख्या को इस हद तक बढ़ा रही हैं, जो आश्चर्य-जनक और महा भयानक है। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि इन

बीमारियों से बचने के लिए पहिले तो बच्चे का स्वस्थावस्था में जन्म लेना आवश्यक है, दूसरे इसके अनन्तर उसके बचपन के समय में उसका उचित रूप से लालन-पालन करना। परन्तु उचित लालन-पालन तभी हो सकता है, जब बच्चा को इस प्रकार का भोजन दिया जावे, जिसमें आवश्यक विटैमीनों के अंश इतनी अधिक मात्रा में हों कि जच्चा और बच्चा दोनों के लिए काफ़ी हों। ऐसी बीमारियों के, जो विटैमीन के सेवन न करने से होती हैं, जैसे स्कर्वी* बेरीबरी [९६ पृष्ठ देखो], पैलग्रा [९९ पृष्ठ देखो], और आंखों का दुखना, जिनको 'हीनता के रोग' भी कहते हैं, लक्षणों के उभड़ने के पहिले साधारण स्वास्थ्य में कुछ कमी तो अवश्य ही आजाती होगी। और यदि बस इतनी ही कमी बनी रहे, तो? इसलिए, यह सोचना, जैसा कि प्रायः होता है, कि विटैमीन की थोड़ी मात्रा भी बीमारियों को दूर कर देगी, व्यर्थ तथा वास्तव में भयानक है। आवश्यकता, इसलिए, इस बात की है, कि विटैमीन का सेवन केवल थोड़ी ही मात्रा में नहीं, किन्तु ख़ूब अधिक मात्रा में करना चाहिए।

बीमारी की ऐसी अवस्था में, जिसमें उसके लक्षण स्पष्ट नहीं होते हैं, अन्दर रिसने वाली ग्रंथियों, जैसे टेटुएं के नीचे की ग्रंथि, सीने की ग्रंथि, गुर्दे के ऊपर की ग्रंथि, मस्तिष्क-ग्रंथि तथा जनन-ग्रंथि आदि के ठीक तौर से काम न करने के कारण बहुत से रोग उत्पन्न हो जाते हैं। बीमारी की इसी स्पष्ट दशा में वे रोग उत्पन्न होते हैं, जो शरीर के रचनात्मक तथा ध्वंसात्मक कर्मों से सम्बन्ध

* यह रुधिर का रोग है। यह जल-यात्रावालों को बहुधा होता है। यह रोग उनको होता है, जिनको ऋतु की साग-भाजी खाने को नहीं मिलती है। जब यह समुद्र के यात्रियों को होता है, तब जल-स्कर्वी और जब यह स्थल के यात्रियों को होता है, तब थल-स्कर्वी कहलाता है।

रखते हैं, जैसे छोटे जोड़ों की गठिया, जोड़ों के भीतर की हड्डी की सूजन और बहुमूत्र इत्यादि। ये रोग या तो विटैमीन की कमी ही के कारण पैदा होते हैं या तब पैदा होते हैं, जब रिसनेवाली ग्रंथियों को उनकी आवश्यक सामग्री नहीं मिलती है। यह कल्पना की जा सकती कि विटैमीन का यह अभाव पेट और अंतड़ियों के भाग में प्रकट होता है।

पाचण के विकार, अंतड़ियों का आलस्य, अपेंडिक्स * का बढ़जाना और बड़ी अंतड़ियों की सूजन, ये सब अधिकतर उन रोगियों के होते देखे गये हैं, जिनके भोजन में विटैमीन का अभाव रहता है।

इसमें यदि किसी का विश्वास न हो, तो वह अंतड़ियों के रुधिर की रुकावट अथवा पुराने क़ब्ज़ को देखकर, जिनकी आजकल आम शिकायत है, विश्वास कर सकता है। यह प्रायः आजकल कहा जाता है कि दांतों की बीमारियां गत बीस वर्ष से बढ़ती ही चली जा रही हैं। परन्तु इस बीच में बच्चों को ताज़ा और पुष्टि-कारक भोजन देना बन्द हो गया है और उनको ऐसा निर्जीव भोजन दिया जाता है, जो चबाने के काम का नहीं है और जिसके उबालने तथा तैयार करने की विधि से, उसकी सब विटैमीन नष्ट हो जाती है और दांतों के निकलने तथा उनके बढ़ने के लिए विटैमीन की बड़ी आवश्यकता है। भोजन-शास्त्र के विषय में जो हमारे अब तक विचार थे, उनको विटैमीन ने बहुत कुछ बदल दिया है। पहिले † प्रोटीन, ‡ कर्बोहाइड्रट्स, चर्बी और नमक,

---

* यह वहां होता है, जहां छोटी बड़ी अंतड़ियां मिलती हैं। इसके बारे में अभी तक यह मालूम नहीं हुआ है कि इसका काम क्या है ?

† एक पुष्टिकारक पदार्थ।

‡ यह शरीर में शकर का रूप ग्रहण कर लेता है।

इन भोजन के मुख्य अंगों की जो मात्राएं निश्चित थीं और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक समझी जाती थीं, वे अब विटैमीन के आविष्कार ने ऐसी बदल दी हैं कि अब इस समस्त प्रश्न का फिर नये सिरे से अन्वेषण तथा अध्ययन करना पड़ेगा और केलोरी (उष्णता की एक मात्रा) के अचूक सिद्धांत का, जो इस विचित्र कल्पना पर निर्भर था कि भोजन को उष्णता की जो मात्रा मनुष्य के शरीर में होती है, वही मात्रा भोजन के जांच करने वाली शीशे की नली में भी होती है, पूर्ण रूप से विस्मरण हो जायगा।

विटैमीन से भावी विज्ञान-वेत्ताओं को सबक़ सीखना चाहिए। यह हमको इस बात की याद दिलाती है कि मनुष्य के विकास के लिए प्रकृति ने उन खाद्य-पदार्थों को दिया है जो उसकी बढ़वार, विकास तथा सुख के लिए आवश्यक हैं। परन्तु मनुष्य ने, कभी लोभ में फँसकर और अधिकतर अपने को बड़ा बुद्धिमान समझ कर, इन पदार्थों को अग्नि पर पकाकर, निःशक्त करके और साफ़-सुथरा करके, इनके गुणों को नष्ट कर दिया है। इसका फल यह हुआ है कि जो बीमारियां मनुष्य-समाज में पहिले से फैली हुई थीं, वे केवल और अधिक फैल ही नहीं गई हैं, किन्तु अब और दूसरी नई बीमारियाँ भी पैदा हो गई हैं। [प्रो० ल्योनार्ड का लेख समाप्त]

(३)

उपयुक्त भोजन

इस समय की आवश्यकता यह है कि यह विचार किया जावे कि मनुष्य पूर्ण स्वास्थ्य तथा उच्चकोटि की सामर्थ्य किस प्रकार प्राप्त कर सकता है?

आजकल जो हमारी दशा है, उसको इस प्रकार उन्नत बनाना चाहिए जिससे शरीर और उसके सब अंग अपनी पूर्ण सामर्थ्य के साथ काम कर सकें। इसके लिए भोजन और पुष्टिकारी भोजन सबसे मुख्य वस्तु है, जिसकी ओर सबसे अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। अच्छे और उपयुक्त भोजन की शरीर के लिए बड़ी आवश्यकता है।

सच्चे स्वास्थ्य की प्राप्ति तभी हो सकती है, जब प्रकृति के कठोर नियमों का निष्ठा-पूर्वक पालन किया जाय। यह स्मरण रखना चाहिए कि स्वास्थ्य-रक्षा के जो नियम पौदे तथा अन्य जीवधारियों के लिए हैं, वे ही नियम मनुष्यों के लिए भी हैं।

मनुष्य ने अपनी बुद्धि के कारण अपने प्राकृतिक वातावरण में वह स्वच्छन्दता प्राप्त कर ली है, जो उसके अस्तित्त्व तक को ख़तरे में डाले रहती है। आजकल शरीर में विकार तथा रोगों का उत्पन्न होना एक अनिवार्य बात मान ली गई है और इनके द्वारा हमारे समय तथा शक्ति का जो ह्रास होता है, उसकी ओर हमारा भाग्य-भरोसे रहने का जो स्वभाव बनता जा रहा है, वह अत्यन्त शोचनीय है।

शहरों में बच्चों की भयानक मृत्यु-संख्या, स्त्री-पुरुषों के शरीरों की दुर्बलता तथा अनेक प्रकार के भयंकर रोगों की वृद्धि, इस बात की आवश्यकता को प्रकट करते हैं कि हमारे जीवन के उस दोष को ढूंढ़ निकालने का उत्कट प्रयत्न किया जावे, जो मनुष्य-समाज में सब जगह फैला हुआ है।

खाद्य-पदार्थों में एक अब तक के अज्ञात अंग, 'विटैमीन' के आविष्कार ने, जो आज से २५ वर्ष पूर्व हुआ है, विज्ञान-वेत्ताओं की इस बात की ओर आँखें खोल दी हैं कि अभी खाद्य-पदार्थों

के विषय में उनके रासायनिक अंगों के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ पता लगाना है।

रोग से ग्रसित होने के अतिरिक्त बहुत से आदमी ऐसे हैं, जिनका शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य जैसा होना चाहिए था, वैसा नहीं है। जो लोग सदा थके-मांदे और शिकायत करते रहते हैं, जो अपने काम को उदास तथा दुखी होकर करते हैं, जो उत्साह-हीन हो गए हैं और जो अपने जीवन को भार समझते हैं, ऐसे असंतुष्ट तथा ठाली मनुष्य, जो प्रत्येक जाति में बहु-संख्या में पाये जाते हैं, समाज की उन्नति के रथ को रोकते, उसमें चारों ओर विषमता फैलाते तथा क्रान्ति उत्पन्न करते हैं।

और कहीं नहीं तो इंगलैड और अमरीका में कम खानेवालों की अपेक्षा अधिक खानेवाले लोग अधिक संख्या में हैं ही। और यह एक सर्व-सम्मत बात है कि हम अपने सम्मुख अच्छे-अच्छे भोजनों को परोसा हुआ देखकर जितनी मात्रा में हमारे शरीर को भोजन की आवश्यकता होती है उतनी मात्रा से कहीं अधिक भोजन कर जाते हैं। आवश्यकता से अधिक खाने के दो कारण हैं—एक तो भोजन में खट्टे पदार्थों का होना, दूसरे मीठे अथवा नमकीन पदार्थों का होना। इन दोनों प्रकार के भोजनों को अधिक खा लेने की इच्छा से अधिक मात्रा में भोजन कर लिया जाता है। जो भोजन स्वाद के लिए खाये जाते हैं, उनको अधिक मात्रा में खाना उचित नहीं है।

सभ्यता की ओर से जहाँ आशीर्वाद मिलते हैं, वहां दंड भी मिलते हैं। इन दंडो में सबसे बुरे दंड अस्वस्थता और दुर्बलता हैं, जो अपने स्वाभाविक भोजन के न करने से उत्पन्न होते हैं।

ताज़े कच्चे (आग का न पका हुआ) और अच्छे भोजन के यथेष्ट मात्रा में न मिलने के कारण आजकल शहर और क़स्बों के

बहुत से लोगों के स्वास्थ्य और शक्ति का ह्रास हो रहा है। ये लोग चूंकि सच्चे पुष्टिकारक भोजन को नहीं पहचानते हैं, इसलिए ये यह समझे हुए हैं कि हम बहुत अच्छा भोजन कर रहे हैं।

यदि भोजन के साथ हरे, ताजे और अच्छे फल और मेवे तथा घी-दूध मिल जायँ, तो इनके द्वारा सब प्रकार के आवश्यक खनिज नमक प्राप्त हो जाएंगे। ये नमक मनुष्य के शरीर के लिए उतने ही आवश्यक हैं, जितने ये पौदों के लिए। [डाक्टर बेलफ्रेज की पुस्तक, 'सर्वोत्तम भोजन क्या है?' से उद्धृत]

(४)

रिवाज और इच्छा

भोजन के विषय पर पूर्ण-रीति से विचार करते समय हमको इस बात से सावधान रहना चाहिए कि हमारे विचार पर कहीं अपनी रिवाज और इच्छा का प्रभाव न पड़ने पावे। क्योंकि, शरीर पर आदत का बड़ा प्रभाव पड़ता है। आदत वही करा लेती है, जो वह चाहती है। यदि हम किसी बात की आदत डालना चाहें, तो आसानी से पड़ सकती है। और जब शरीर उससे अभ्यस्त हो जाएगा, तब जैसे उसको अपनी किसी पुरानी आदत के लिए भोजन की आवश्यकता थी, उसी प्रकार उसको इस नयी आदत के लिए भी आवश्यकता प्रतीत होगी।

[श्री अर्विंग एस० कपूर की पुस्तक, 'पूर्ण स्वास्थ्य के लिए मार्ग' से उद्धृत]

(५)

सादा और स्वाभाविक भोजन

डाक्टर एम० निकोल, एम०डी० का कथन है, कि "यदि भोजन के विषय में कोई सिद्धान्त ठीक है, तो यह भी अवश्य ठीक है कि

वास्तव में प्रत्येक मनुष्य खूब दूध और खूब साग-भाजी तथा फल खाने की आवश्यकता अनुभव करता है। भोजन के इन पदार्थों में केवल सब प्रकार की विटैमिन ही नहीं होती, किन्तु इनमें बहुत से खनिज नमक तथा लोहे का अंश, जो शरीर की उचित वृद्धि तथा पोषण के लिए उतने ही आवश्यक हैं, पाये जाते हैं"
['फ़िज़िकल कलचर,' मार्च सन् १९२७ ई०]

(६)

विटैमिन और शक्ति

अमरीका के सुप्रसिद्ध डाक्टर जान मौक्सवैल के विचार—

"बहुत कम ऐसे स्त्री-पुरुष हैं, जो यह कह सकते हैं कि हमने कभी बीमारी का अनुभव नहीं किया है, हम सब प्रकार से स्वस्थ और शारीरिक तथा मानसिक अवस्था से जैसे स्वाभाविक रूप से होने चाहिए, वैसे ही हैं।

"आजकल हम जो भोजन करते हैं, वह हमें सीधा मृत्यु के निकट ले जा रहा है। जब तुम शरीर से बहुत थक जाते हो, तब वृद्धावस्था का आगमन होने लगता है। जब तुम थकने लगो, तब समझो कि अब वृद्धावस्था आगई।

"परन्तु यदि तुम्हारे अन्दर विश्वास है, तो तुम फिर युवा हो सकते हो। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि स्वास्थ्य, दीर्घायु तथा आनन्द की प्राप्ति के लिए स्वाभाविक जीवन व्यतीत करना आवश्यक है।

"बस, अपने भोजन को बदल दो, तुम्हारी दशा भी बदल जायगी।

"हमारी अधिकतर झूठी इच्छाएँ होती हैं। हम अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति को नहीं देखते और न बुद्धि से काम लेते हैं।

" हमने अपने शरीरों को ऐसे भोजन खा-खा कर, जिनमें विटैमीन और खनिज नमकों का अभाव है, निःशक्त बना लिया है।

" हमारे बहुत से कष्ट नियमानुकूल व्यायाम तथा उपयुक्त भोजन के करने के कारण उत्पन्न होते हैं।

" आजकल का हमारा भोजन, जो अस्वाभाविक तथा जिसमें नमक और विटैमीन का अभाव है, हमारी शारीरिक तथा मानसिक शक्ति को हानि पहुँचाता है।

" चाय और कहवे को पीने की आदत से उनकी कैफ़ीन* और केफ़ीटैनिक एसिडों† से धमनियों और पेट पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

" अस्वाभाविक तथा ऐसे भोजन करने से, जिनमें नमक तथा विटैमीन नहीं होते हैं, बीमारियों के रोकने की शक्ति चली जाती है।" [शिकागो (अमरीका) के पत्र, ' हिल्ज़ गोल्डन रूल ' के जनवरी, सन् १९२० ई० के अंक से उद्धृत]

(७)

(अ) मांस खाना आवश्यक नहीं है

डाक्टर एस० एच० बैलफ्रेज, एम० डी० के विचार—

" जानवरों का मांस खाना कोई आवश्यक नहीं है। जिन लोगों के भोजन में मांस नहीं होता है, उनको यह न समझना चाहिए कि बिना मांस खाये उनको कोई हानि पहुँचेगी। यह स्मरण रखना चाहिये कि मनुष्य-जाति में कुछ उत्तम जातियाँ ऐसी हैं, जो कभी कभी मांस खाती अथवा कभी भी मांस नहीं खाती हैं। यह देखा गया है कि जो लोग निरामिष भोजी (मांस नहीं खाते)

---

* यह चाय का एक अंश है, जो धमनियों को उत्तेजित करता है।

† यह कहवे का एक अंश है, जो क़ब्ज़ करता है।

हैं, वे आमिष-भोजियों (मांसाहारी) के समान अथवा उनसे भी अधिक सहनशील होते हैं।

" जो लोग मांस नहीं खाते, परन्तु दूध, अंडे तथा पनीर खाते हैं, वे सब प्रकार से कुशल-पूर्वक रहते हैं। इन लोगों का कथन है कि मांस खाना आवश्यक नहीं है। उसमें जानवरों के शरीर के दूषित पदार्थ मिले रहते हैं, उसको लोग प्रायः अधिक मात्रा में खा लेवे हैं, उसके खाने के उपरान्त आलस्य अधिक आता है, उसके न खानेवाले लोगों ही में सब से बड़े विद्वान और बड़े बड़े आदमी जिनसे मनुष्य जाति को लाभ पहुँचा है, हुए हैं और उसका खाना असभ्यता का एक लक्षण है, जो अब तक शेष है। इस कथन में बहुत कुछ सत्य है। इसके साथ-साथ हम यह भी बता देना चाहते हैं कि मांस खाने का जो समर्थन आर्थिक आधार पर किया जाता हैं, अर्थात् मांस में कम व्यय होता है, वह बिल्कुल व्यर्थ तथा निराधार है। क्योंकि यह देखा जाता है कि एक गाय के खिलाने-पिलाने में जो खर्च पड़ता है, उसके १८ फ़ी सदी मूल्य का पदार्थ उससे (गाय से) दूधादि के रूप में हमें मिल जाता है। परन्तु भेड़ और बैल के ख़र्च से हमें केवल उसके ३-५ फ़ी सदी मूल्य ही का पदार्थ मिलता है।

"जानवरों से जो प्रोटीनवाले खाद्य-पदार्थ मिलते हैं, उनमें एक ऐसा पदार्थ है, जिसमें न केवल सर्वोत्तम प्रकार की प्रोटीन ही है, किन्तु उसमें विटैमीन और नमक भी अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। दूध वास्तव में अकेला ही पूरा भोजन है। इसमें अच्छे क़िस्म की चर्बी और शक्कर भी होती है। केवल १५ छटाँक दूध में इतनी मात्रा में सर्वोत्तम प्रोटीन होती है, जो दिन भर के भोजन के लिए काफ़ी होती है। यदि दूध को धीरे धीरे पिया जावे, तो वह बहुत आसानी से पच जाता है; क्योंकि उसको धीरे-धीरे

पीने से उसका पेट में अधिक मात्रा में दही नहीं बनता। इसको भोजन के और पदार्थों के साथ भी मिलाया और पकाया जा सकता है।" ['सर्वोत्तम भोजन क्या है ?' से उद्धृत]

(ब) मांस खाना सर्वथा अनावश्यक है

डाक्टर यूजेन क्रिस्टेन, एफ़० एस्० डी० के विचार—

"यदि कोई विचारवान मनुष्य भोजन की रसायन का थोड़ा सा भी अध्ययन करे, तो भी उसको यह विदित हो जायगा कि मांस खाना सर्वथा अनावश्यक है। मांस में भोजन की वे आवश्यक वस्तुएं कोई भी नहीं होतीं, जो दूसरे पदार्थों में पाई जाती हैं। परन्तु इसमें ज़हर की मात्रा, जो अन्य खाद्य-पदार्थों में नहीं पाई जाती और जिससे शरीर में विकार उत्पन्न हो जाता है, अधिक होती है। पाक-शास्त्र को यदि हमारी मा-बहन तथा बहू-बेटियों को पढ़ाया जावे, तो उनको यह ज्ञात हो जायगा कि हमारे शरीर का प्रत्येक रसायनिक तत्व, जिससे यह बना है, सर्वोत्तम रूप में वनस्पति ही से प्राप्त हो सकता है।

"अधिक मांस मत खाओ, अधिक मांस खाने से किसी की उन्नति नहीं हुई है"। ['१०० वर्ष तक कैसे जीवित रह सकते हैं ?' नाम की पुस्तक से उद्धृत]

(स) मांस खाने से आयु कम होती है

यह श्रीयुत हिरेल्ड एल० ग्रहाम का कथन है।

(द) फलाहार

डाक्टर जेन ओल्डफ़ील्ड का कथन है—"मुझे मांस खाये हुए २५ वर्ष से अधिक समय व्यतीत हो गया है। मैंने निरामिष तथा आमिष दोनों प्रकार के भोजनों की भली प्रकार परीक्षा

करली है। मुझे यह विश्वास हो गया है कि उच्च कोटि तथा सभ्यता-पूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए आमिष-भोजन को त्याग कर निरामिष भोजन अर्थात् फलाहार करना चाहिए" ['सभ्य लोगों का भोजन' नाम की पुस्तक से उद्धृत]

(ई) मींगियों और फलियों का भोजन

पाचन शक्ति में जो भिन्नता उत्पन्न हो जाती है, उसका कारण हमारा भोजन ही है। नाइट्रोजन का मिश्रित अंश मल-मूत्र इत्यादि से यूरिया और यूरिक एसिड के रूप में पलटकर इंद्रियों से बाहर निकल जाता है। यूरिक एसिड जल में नहीं घुलता। इस एसिड को घुलाने के लिए खट्टे पदार्थ 'सोडियम' की आवश्यकता होती है जिसे 'यूरेट आफ़ सोडियम' कहते हैं।

अतः यदि भोजन में सोडियम की कमी या नाइट्रोजन की अधिकता हा तो उससे शरीर में यूरिक एसिड अधिकता से उत्पन्न हो शरीर को हानिकारक होगा और इससे गठिया इत्यादि रोग उत्पन्न हो जायँगे।

मांस भक्षी जानवरों, कुत्ते-बिल्लियों के प्रकृति में इस प्रकार उत्पन्न हुए यूरिक एसिड को नष्ट करने की शक्ति रहती है। मनुष्य में यह शक्ति नहीं होती, जिससे सिद्ध होता है कि वह स्वभावतः मांस इत्यादि खाने के लिए नहीं बनाया गया। इस प्रकार के मांस इत्यादि के भोजन के बहुतेरे हानिकर विष क्रेटीन, ल्यूकोमीन, यूरिक एसिड इत्यादि उत्पन्न हो जाते हैं। स्पष्ट रूप से मांस खाने का परिणाम यह होता है कि शरीर में बहुतेरा अनावश्यक और हानिकर पदार्थ उत्पन्न हो जाता है क्योंकि शरीर के अवयवों को यों ही यूरिक एसिड इत्यादि के बाहर निकालने में काफ़ी श्रम पड़ता है। अतः मनुष्य को मींगियों और

फलियों इत्यादि से ऐसा भोजन चुनना चाहिये जो इस प्रकार के विषों से शून्य हो। मनुष्य को साग-सब्ज़ी भी अधिक परिमाण में खाना चाहिये जिससे शरीर के भीतर का अनावश्यक पदार्थ सरलता से बाहर निकल जाय। ["हेल्थ" दिसम्बर १९२७]

इस प्रकार के जानवरों सरीखे भोजन के तिरस्कार से यह सिद्ध होता है कि "भाजी-भाकरी"—साग सब्ज़ी और ज्वारी रोटी ही सबसे सस्ता और उत्तम भोजन है। इनके खाने से शरीर में विटामिन इत्यादि काफ़ी परिमाण में पहुँचकर लाभ करते हैं।

(८)

अल्पाहार

श्रीयुत टामस ए० एडीसन का, जिनकी अवस्था क़रीब ८० वर्ष की है और जो संसार में सबसे बड़े आविष्कर्ता हैं, कहना है,—"मेरे पिता और पितामह को यह अनुभव हो गया था कि दीर्घायु तथा पूर्ण स्वस्थता की प्राप्ति नियमानुकूल आहार करने में सन्निहित है। मेरे अपने विषय में यह है कि मैं केवल इसलिए खाता हूँ कि मैं जीवित रहूँ। इसका फल यह हुआ है कि मेरा शरीर हानिकारी व्यर्थ भोजन से दूषित नहीं हुआ है। मेरी अंतड़ियाँ इतनी कोमल हैं, जितनी एक बच्चे की।"

(९)

भोजन के आवश्यक अंग

साग (तरकारी) खाने की आदत डालो। तुम्हारा मक़ूला यह होना चाहिए कि 'स्वास्थ्य के लिए साग खाना आवश्यक है।' प्रत्येक दिन एक प्याज अथवा एक सेब खाना चाहिए' इस पुरानी कहावत के मुक़ाबले में यह कहावत कि 'प्रत्येक दिन

साग खाना चाहिये ' अधिक सच्ची है। हरे पदार्थों और सागों में हमारे स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक तत्व मौजूद हैं, जिनकी उपेक्षा करना रोग को मोल लेना है। यह पूर्ण रूप से सिद्ध हो चुका है कि स्वस्थ्य शरीर के लिए विटैमीन और नमकों की (सफ़ाई रखने के लिए) प्रधान आवश्यकता है।

साग और कच्चे पदार्थों के न खाने से यह नतीजा होता है कि हमारी वह शक्ति नष्ट हो जाती है, जो उन तेजाबों को दूर करती है, जो रुधिर में तथा वृद्धावस्था में रतूबत (ख़राब माद्दा) पैदा करते हैं। रतूबत हमारे शारीरिक तथा मानसिक काम से पैदा होती है। ['हेल्थ और ऐफ़ीकेसी', पत्रिका के सितम्बर सन् १९२७ ई० के अंक से उद्धृत]

आमिष-भोजी (मांसाहारी) देश, यूरुप और अमरीका के अनुभवी डाक्टरों, प्रसिद्ध विज्ञान-वेत्ताओं तथा प्रवीण पाक-शास्त्र-विशारदों की पुस्तकों के उपरोक्त उदाहरणों को ध्यान-पूर्वक पढ़ने से, हमें आशा है, हमारे पाठकों को यह इच्छा अवश्य होगी कि हमें अपने खाद्य-पदार्थों में से अच्छे गुणकारी तथा पुष्टिकारक पदार्थों को अपनी व्यक्तिगत आवश्यकता को देखकर छांट लेने चाहिए।

परन्तु इस प्रकार के छटे हुए खाद्य-पदार्थों का सदुपयोग करने के लिए सूर्य-नमस्कार जैसी किसी व्यायाम-पद्धति का अनुसरण करना अति आवश्यक है। यह स्मरण रखना चाहिये कि उपयुक्त भोजन तथा व्यायाम ही से स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु की प्राप्ति होती है। इस सम्बन्ध में यूरुप और अमरीका के विद्वानों की सम्मतियों की परीक्षा करने से हमने जो कुछ परिणाम निकाला है, उसका और जो कुछ हमने स्वयं अनुभव किया है, उसका सारांश हम यहाँ देते हैं—

(१) दूध

हमारे रोज़ाना के भोजन में थन से निकला हुआ ताज़ा गरम दूध (अग्नि का उबाला हुआ न हो) अच्छी अधिक मात्रा में होना चाहिए। प्रत्येक मनुष्य को भोजन के साथ कम से कम ऐसे दूध का एक गिलास तो अवश्य ही पीना चाहिए—यदि दूध गाय का हो, तो और अच्छा। दूध को किसी चीज़, जैसे दही, मक्खन और घी आदि का खाना भी गुणकारी है।

(२) फल

ताज़े फलों का खूब खाना बहुत लाभकारी होता है। स्वास्थ्य-वर्द्धक तथा पुष्टिकारक फल ये हैं—केला, नारंगी, संतरा, नीबू, मीठा नीबू, आम, नासपाती, अंगूर, अंजीर, किशमिश, सेब, अनन्नास, अमरूद, कटहर, खरबूजा, तरबूज, खजूर, शफ़तालू अनार, सीताफ़ल, रामफल, करौंदा आदि। गन्ना भी जब-तब चूसा जा सकता है।

(३) मींगी

हमारे भोजन में कुछ थोड़ी सी मीगियाँ भी होनी चाहिए। पुष्टिकारी मीगियाँ इन फलों की होती हैं—बादाम, खजूर, नारियल, मूंगफली, अखरोट, इत्यादि। भूनी हुई नमकीन मींगी बड़ी स्वादिष्ट हो जाती है।

(४) साबत दाना

साबत चावल, साबत गेहूँ का दाना, साबत दाल वाले अनाज, जिनका छिलका न उतरा हो और साबत ही ज्वार, बाजरा और मक्का इत्यादि को अग्नि पर पकाकर खाना चाहिए। इनको या तो पानी में भिगोकर पकाना चाहिए या बिना पानी भिगोये हुए ही। यह व्यक्तिगत पाचन-शक्ति पर निर्भर है।

(५) अंकुरित दाना

ऊपर नं० ४ में जिन अनाजों के दाने बतलाये गये हैं, उनको यदि पहिले अंकुरित हो जाने दिया जावे और तब खाया जावे, तो वे अधिक गुणकारी सिद्ध होंगे। इनके अतिरिक्त निम्नांकित अनाजों के दानों को भी अंकुरित करके खाना चाहिए।

मटर, चना, रमास, या लोभिया, अरहर, मूंग, बड़ी सेम, बाकला, मसूर, उड़द, खुर्ती इत्यादि। इन चीज़ों की पिट्ठी बनाकर और उसमें खूब स्वादिष्ट मसाला मिलाकर और कद्दूकस में कसे हुए गोले और प्याज को डालने से एक बड़ा स्वादिष्ट भोजन तैयार हो जाता है। इस प्रकार के भोजन में विटैमीन तथा खनिज नमकों की मात्रा अधिक होती है।

(६) हरी साग-भाजी

हरा (अग्नि पर पका न हो), मुलायम तथा पत्तेदार खाने योग्य कोई साग अथवा उनके फल आदि हो, अथवा फल और पत्ती दोनों जैसे अजमोद, नाड़ी का साग, काहू, भाटा, फूल गोभी, गांठ गोभी, मेथी, भिंडी, सेम, ककड़ी, तोरई, ज़मीकन्द, चने का साग, बथुआ, रामदाना, काशीफल इत्यादि। इनको यदि इस प्रकार खाया जाय, जैसा (५) में बतलाया गया है, तो इनसे वे अंश निकलते हैं, जो स्वास्थ्य और सफ़ाई के लिए आवश्यक हैं।

नोट—पत्ते वाली भाजियों ही को (बिना आग की पकी) खाना चाहिए क्योंकि गरम करने से इनकी विटैमीनें नष्ट हो जाती हैं।

(७) कंद-मूल-फल

कंद-मूल-फल जैसे आलू, मीठा आलू, मूली, गाजर, प्याज, लौकी, चचेंड़ा, बैंगन, ककड़ी, एक प्रकार की सेम, बतिया कटहल, कच्चा केला इत्यादि, ये सब स्वास्थ्यवर्द्धक तथा पुष्टिकारक हैं। इनको अपने स्वाद तथा पाचन-शक्ति के अनुसार उबाल कर, सेंक कर, भाप से पकाकर अथवा कच्चा खाना चाहिए।

(८) स्वादिष्ट पदार्थ

ताज़े हरे, पत्तेदार, खाने योग्य साग अथवा उनके कंद और मूल, और प्याज़ इत्यादि में से किसी एक को पीसकर और उसमें उपरोक्त साबत भीगे हुए अथवा अंकुरित दानों को डाल कर मसाला मिला देते हैं। इस प्रकार अनेक प्रकार के पदार्थ तैयार हो जाते हैं। ये पदार्थ भूख बढ़ाते हैं।

(९) फलों का काम देने वाली चीज़

ताज़े फल, जैसे अंगूर, आम, नारंगी और अंजीर इत्यादि, साल में सब दिन नहीं मिलते हैं। परन्तु चावल, गेहूँ, चना, मटर आदि सदा मिल सकते हैं। इसलिए, इनसे पापड़, मंगौरी, बरी आदि चीज़ें तैयार की जा सकती हैं, जो बहुत कुछ अंश में फलों का काम दे सकती हैं।

(१०) टमाटर

टमाटर, जिसको अंग्रेज़ी बैंगन भी कहते हैं, एक बहुत पुष्टि-कारक साग है। परन्तु हमारे लोगों में इसका अधिक प्रचार नहीं है। इसके गुण को देखकर हमारी राय यह है कि इसे प्रत्येक मनुष्य को अपने भोजन का एक आवश्यक अंग बना लेना चाहिए।

क्योंकि इसमें विटैमोन तथा खनिज नमक आदि की मात्रा अधिक पाई जाती है और इसको कच्चा अथवा अग्नि पर पकाकर अनेक प्रकार से खा सकते हैं। इसका दूसरा गुण यह है कि यह बहुत सस्ता बिकता है और खूब फलता है। इसको नमकीन और मीठा, दोनों प्रकार से खा सकते हैं।

[यदि हम यहाँ पर सागों के खाने के भिन्न भिन्न प्रकार के तरीकों को बतलाने लगेंगे, तो पाक-शास्त्र में घुस जाएंगे और सूर्य-नमस्कार से दूर चले जाएंगे। पाक-शास्त्र के विषय में पढ़ने के लिए पाठकों को कुछ दिन इन्तज़ार करना चाहिए]

(११) अंडा

अंडे अथवा अंडे के भीतर के पीले भाग का दूध के बाद दूसरा नम्बर है। इसको वे लोग खा सकते हैं, जिनको इसके खाने में कोई एतराज़ नहीं है।

(१२) चीनी

अच्छी साफ चीनी को न खाना चाहिए। इसके न खाने से कोई हानि नहीं होती। और जब इसकी बहुत ही आवश्यकता आपड़े, तब इसको बहुत कम और कभी कभी ही खाना चाहिए। यदि इसके बजाय कच्ची खांड अथवा शहद खाया जावे, तो अधिक गुणकारी होता है।

स्वास्थ्य-प्राप्ति के लिए नियम

श्री० एफ़० सी० हैडक ने अपनी 'विचार-बल' नाम की पुस्तक में स्वास्थ्य प्राप्ति के लिए जो एक साधारण नियम बताया है, वह यहाँ उल्लेखनीय है—" प्रत्येक मनुष्य का भोजन उसकी शारीरिक अवस्था तथा उसके काम के अनुकूल होना चाहिए। जो जल

शुद्ध हो, उसको खूब पीना चाहिए। गहरी नींद जितनी देर तक ले सको उतनी देर तक लेनी चाहिए और ऊँघने को रोकना न चाहिये, किन्तु अच्छी हवा में सोकर उसे बढ़ाना चाहिए, जिससे खूब गहरी नींद आजाय। बहुत से आदमी बहुत ही कम जल पीते हैं। इसको बढ़ाना चाहिए। हमारे रहने के बहुत से कमरों की हवा इस प्रकार की है कि यदि उनमें किसी में एक बन-मानुष को रख दिया जाय, तो वह मर जायगा। समय पर नियमानुकूल काम करने की आदत अवश्य डालना चाहिए। पुट्ठों को कमज़ोर होने से रोकने तथा फेफड़ों के रुधिर को शक्तिवान बनाने के लिए अच्छा काफी व्यायाम करना चाहिए।

इस प्रकरण को समाप्त करने के पूर्व हम अपने पाठकों को—विशेष रूप से उन नवयुवकों को, जिनको स्वास्थ्य सम्बन्धी बातों में अधिक उत्साह आता है, कुछ बातों में सावधान करना चाहते हैं। यह सदा के लिए ध्यान में रख लेना चाहिए कि एक व्यक्ति के अधिक शक्तिवान होने की परीक्षा यह कभी नहीं है कि वह अधिक भोजन करता है। कुछ लोगों को इस बात का बड़ा घमंड होता है कि हम बहुत जल्द खाना खा लेते हैं। इन दोनों प्रकार की कमज़ोरियों को दूर कर देनी चाहिए। इनके कारण पाचन-शक्ति कम हो जाती है, जिससे बीमारी पैदा हो जाती है। यह स्मरण रखना चाहिए कि अधिकतर बीमारियां या तो अधिक भोजन करने से होती हैं अथवा जल्द भोजन करने से।

यदि तुमको यह मालूम पड़े कि तुम्हारा जिगर अथवा पेट अपना काम ठीक तौर से नहीं कर रहा है, तो ऐसी दशा में औषधियों का सेवन मत करो, किन्तु उपवास करो, जिससे तुम्हारे पेट अथवा जिगर का बोझ हलका होवे।

इस सम्बन्ध में डाक्टर युजेन क्रिस्टेन, एफ़० एस० डी०, के शब्द यहाँ उल्लेखनीय हैं—"जल्दी भोजन करना, अधिक मात्रा में खाना, भोजन देर से मिलने पर क्रोध करना, ये सब वर्जित हैं। इनके अतिरिक्त सभ्य तथा सुशिक्षित लोगों को यह एक और आदत पड़ गई है कि वे भोजन को बिना अच्छी तरह से चबाये हुए ही निगल जाते हैं। यह याद रहे कि पेट और अँतड़ियों की बीमारी के मुख्य कारणों में से यह भी एक कारण है। ['१०० वर्ष तक कैसे जीवित रह सकते हैं,' नाम की पुस्तक से उद्धृत]

एक विद्वान का कहना है कि बीमारी पैदा होने का आम सबब अधिक मात्रा में भोजन करना है। इसकी सब से बुरी हालत का नाम क़ब्ज़ है, जो ख़राब खाने-पीने से और भी बढ़ जाता है। यह अच्छे खाने-पीने से कम हो जाता और बिल्कुल भी जाता रहता है। 'आज कल के बहुत से भोजन अस्वाभाविक हैं'।

बहुधा यह प्रश्न किया जाता है कि दिन में कितनी बार भोजन किया जाना चाहिये? यद्यपि इस प्रश्न का उत्तर भोजन करने वाले व्यक्ति के स्वास्थ पर—वह किस प्रकार का जीवन बिताता है? किस प्रकार का और कितना भोजन करता है? इत्यादि बातों पर—निर्भर है फिर अपने तथा दूसरों के अनुभव से यह कहा जा सकता है कि औसत हिन्दुस्तानी मर्द या स्त्री को ५५ या ६० वर्ष की अवस्था तक दिन में दो बार तथा इसके पश्चात् एक बार भोजन करना पर्याप्त होगा।

विशेष परहेज़ करना अनावश्यक है

सूर्य नमस्कार करते रहने के समय किसी विशेष प्रकार के भोजन और परहेज़ करने की, जैसा कि अन्य व्यायाम करने वालों को करना पड़ता है, आवश्यक नहीं है। यदि संभव और

उपलब्ध हो सके तो पाव भर या आधा सेर गाय का ताजा और शुद्ध दूध सूर्य-नमस्कार के प्रायः एक घण्टे बाद ले लेना लाभकर सिद्ध होगा। फिर भी इसकी विशेष आवश्यकता नहीं। जवान स्त्री-पुरुष के लिए दिन में दो बार और वृद्धों के लिए एक बार भोजन करने का सुन्दर नियम हर एक को पालन करना उचित है। ऐसा करने से सूर्य-नमस्कार के करने वाले को कभी भी अजीर्ण या अन्य किसी प्रकार के रोग होने का भय न रहेगा।

एक सभ्य-सुथरे व्यक्ति के लिए अपनी रुचि के अनुसार और फलाहारी भोजन ही मेरी समझ में लाभकर भोजन होगा। मनुष्य के लिए बिना भूख के बार बार भोजन करना एक बड़ा भारी श्राप-का-सा काम करेगा। प्रातःकाल का कलेवा एक इच्छित भोजन है जो असली भूख की वृद्धि को रोक देता है। वह चाय या गर्म पानी की नाईं ही शरीर में उत्तेजना देता है। व्यावहारिक रूप से मनुष्य के शरीर की शक्ति पिछले दिन के भोजन और पिछली रात के आराम ही से उत्पन्न होती है।

दोनों भोजनों के बीच कुछ न खाना मेरे विशेष नियमों में सम्मिलित है। इन दोनों भोजनों के बीच केवल जल या नारंगी या अंगूर का रस ही पेट में जाना चाहिये, अन्य दूसरी खाद्य वस्तु नहीं [डा० मैकडोनल्ड एम० डी० डी० ओ०—'फ़िजिकल कलचर' अगस्त १६२८]

उपवास

हम कैसी भी सावधानी से अपने उपयुक्त खाने-पीने के पदार्थों को क्यों न छांटें और उनको कैसी भी उचित मात्रा में

क्यों न खायँ, परन्तु कुछ न कुछ अवाञ्छनीय तथा अनावश्यक खाने-पीने के पदार्थ हमारे पेट में पहुँच ही जाते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि रोग पैदा हो जाता है। इसका कारण कुछ तो हमारी अज्ञानता और कुछ हमारी आदत है। इससे बचने के लिए उपवास का करना अति आवश्यक है।

उपवास करने का सर्वोत्तम नियम यह है कि तुमको जब भूख न लगे, तब तुमको उपवास कर डालना चाहिए। भूख का न लगना प्रकृति की ओर से यह संबोधन है कि अब और भोजन न करना चाहिए। सप्ताह अथवा पखवारे (१५ दिन) में किसी एक दिन उपवास कर लेने का नियम करना बहुत अच्छा है।

बहुत से धर्मों में भी कुछ दिन उपवास करने के लिए नियत कर दिये हैं, जैसे हिन्दुओं में एकादशी आदि अनेक उपवास नियत कर दिये हैं, मुसलमानों में रोज़ा (साल में ३० दिन का उपवास) इत्यादि और ईसाइयों में लैंट (साल में ४० दिन का उपवास।)

उपवास पूरे दिन-भर कुछ न खाकर भी होता है और कुछ खाकर भी। पूरे दिन के उपवास में सिवाय जल के और कुछ नहीं खाया जाता। डाक्टर मैकफ़ैडन का कहना है कि कुछ पदार्थ ऐसे भी हैं, जिनको खाने से उपवास का महत्व कम नहीं होता, जैसे—

(१) पूरे दिन उपवास करने के बजाय बहुत से लोग दिन में कुछ थोड़-सा नारंगी का रस अथवा दो या तीन नारंगियाँ अथवा एक नारंगी इस भोजन के समय और एक उस भोजन के समय खा लेते हैं। यदि खाने की नली (जिनमें होकर गले से पेट में खाना जाता है) की सफ़ाई करनी हो, तो नारंगी के छिलके के अंदर के सफ़ेद भाग को खा लेना चाहिए। मैंने

ऐसे लोग भी देखे हैं, जिन्होंने नारंगी के छिलके और बीजों को भी खाया है और उससे उनको लाभ पहुँचा है। इनके खाने से खाने की नली चैतन्य हो जाती है और उसके पुट्ठों का वह काम भी बढ़ जाता है, जिसके द्वारा खाना आगे को बढ़ता है।

(२) ऐसा भी होता है कि दिन में एक एक गिलास मट्ठा तीन बार पीते हैं। मट्ठा पीने का असर यह होता है कि उससे पेट और खाने की नली साफ़ हो जाती है और उपवास का जो कष्ट होता है, वह कम हो जाता है।

(३) दिन में कई बार जल पीने की अपेक्षा शाक-भाजी का भोजन किया जा सकता है।

(४) उपवास में शहद खा लेने से भी आराम मिल जाता है। जल में शहद मिलाकर पीने से जल मीठा लगने लगता है। इससे भूख जाती रहती है और बल बढ़ता है। उपवास में शहद के साथ जल पीने से सिवाय इसके कि तुम्हारा वज़न कम हो जाय, तुमको उपवास की कठिनाई तनिक भी अनुभव नहीं हो सकती।

'फ़िज़कल कलचर' नाम के पत्र के अक्टूबर, सन् १९२६ ई० के अंक में श्री बरनार मैकफ़ैडन ने लिखा है, "जो लोग अधिक मात्रा में भोजन करते हैं, उनकी अकाल मृत्यु होती है। उपवास करना एक बहुत बलवर्धक औषधि है। भोजन बस उसी समय करना चाहिए जिस समय भूख लगे। यदि तुम अपने पूर्वजों की-सी बड़ी बड़ी आयु चाहते हो, तो तुमको नियम-पूर्वक उपवास करना चाहिये।

विज्ञान द्वारा उपवास का समर्थन

श्रीयुत जोन हैडन का विचार—उपवास से रोग की चिकित्सा

इस प्रकार हो जाती है, जैसे किसी जादू से। उपवास वास्तव में मनुष्य-जाति के पास एक बड़ी विचित्र चिकित्सा है। यह ऐसी चिकित्सा है, जिसके बल पर मृत्यु से भी हाथ मिलाया जा सकता है। अर्थात्—उपवास-चिकित्सा के सन्मुख मृत्यु भी दूर भागती है।

डाक्टर मोरगुलिस ने यह सिद्ध करके दिखला दिया है कि उपवास करना हानिकारक नहीं है। आपने बहुत मनुष्य तथा जानवरों पर परीक्षा करके देखा है कि कुछ दिनों के लगातार उपवास से उस समय तक, जब तक शरीर का बोझ १० से १५ फ़ी सदी तक कम होता है, तनिक भी हानि नहीं होती, किन्तु अति अधिक लाभ पहुँचता है।

डाक्टर मोरगुलिस इस नतीजे पर पहुँचा है कि उपवास करने से शरीर को एक नई शक्ति प्राप्त होती है। और उसका यह भी कहना है कि वह उपवास, जो निराहार होता है, सब से कम हानिकारक है। ['फिजिकल कलचर,' जुलाई, सन् १९२१ ई०]

व्यसन

अब हम उन पदार्थों के विषय में लिखते हैं, जिनकी लोगों को आदत (व्यसन) पड़ जाती है और जो उनके स्वास्थ्य को बिगाड़ देते हैं। ये पदार्थ चाय, कहवा तथा कोको इत्यादि हैं। विज्ञान तथा अनुभव द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि इन पदार्थों की मीठी सुगंधि तथा स्वाद इनके विषैले अंशों के सामने दब जाते हैं। यदि इन पदार्थों का बहुत समय तक प्रयोग किया जावे, तो उससे पाचन-शक्ति तथा समस्त तंतु-क्रम को अवश्य हानि पहुँचती है। और उन अनेक प्रकार की पुरानी बीमारियों की उत्पत्ति होती है, जो हमको आजकल दुखित कर रही हैं और सम्भव है कि उनको हमारी भावी संतान भी भोगे।

इन उत्तेजक पदार्थों के व्यसन से छुटकारा पाने के लिए श्री० एफ़० सी० हैडक की 'विचार-बल' (Power of Will) नाम की अंग्रेज़ी पुस्तक को पढ़ना चाहिए। आप अपनी इस पुस्तक में एक स्थान पर कहते हैं, "वह मनुष्य दुर्व्यसनों को नष्ट कर सकता है, जो वास्तव में इनको अपने क़ाबू में लाने की इच्छा करता है।"

दुर्व्यसनों का इलाज यह है कि उनके भोगने की इच्छा का नाश कर दिया जाय। इच्छा पहिले होती है और उसके बाद कर्म। इच्छा होने पर ध्यान आकर्षित हो जाता है। इच्छा बनी रहे और कर्म न किया जावे, इससे कुछ भी लाभ नहीं होता। क्योंकि इच्छा बिना नाश के दुर्व्यसन का नाश नहीं होता। "यदि तुम में अपना सुधार करने के लिए मनुष्यत्व शेष नहीं रह गया है, तो तुमको किसी वैद्य की शरण लेनी चाहिए, जो तुम्हारा इलाज करे। और यदि इससे भी कुछ काम न बने, तो यह निश्चय है कि तुम अपने दुर्व्यसनों के सदा गुलाम बने रहोगे।"

भोजन बनाने की विधि

स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त भोजन बनाने के सम्बन्ध में दो एक बात कह देना अनावश्यक न होगा :—

हज़ारों व्यक्ति जो विशेष कर नगरों और शहरों में रहते हैं, बढ़िया लज़ीज़ और मसालेदार भोजनों के उपलब्ध होने पर भी सच पूछो तो एक प्रकार से भूखे ही रहते हैं। क्योंकि स्वास्थ्य और बल के लिए तुम 'कितना खाते हो?' और 'क्या खाते हो?' केवल इन्हीं दो बातों से काम नहीं चलता बल्कि शरीर को आरोग्य और सामर्थ्यवान रखने के लिए उत्तम (स्वास्थकर) पदार्थों का चुनाव, उनका अन्य आवश्यक वस्तुओं से मिश्रण

और उनका पाक इन तीन बातों पर विशेष ध्यान देने की बड़ी आवश्यकता है।

साधारण रीति से खौलते हुए पानी को देकर भोजन—तरकारी दाल, फलियां इत्यादि पकाने से उन पदार्थों का स्वास्थ्यकर अंश नष्ट हो जाता है। इन भोज्य पदार्थों के उबल जाने पर जो पानी बच रहता है, वह तो फेंक दिया जाता है और बचे हुए पदार्थ खा लिए जाते हैं।

खाद्य पदार्थों के स्वास्थ्यकर अंश का इस प्रकार नष्ट हो जाना कोई काल्पनिक या सिद्धान्तिक बात नहीं है। नष्ट हुआ अंश जल में घुल जाता है। अतः दीख नहीं पड़ता और इसीलिए लोग उस ओर ध्यान ही नहीं देते और यह कितनी बड़ी हानि है इसकी लोग परवाह भी नहीं करते। विस्कांसन (अमेरिका) के विश्वविद्यालय में इस सम्बन्ध में जो परीक्षाएं की गई हैं उनसे पता चला है कि इस प्रकार की हानि बड़ी भयंकर हानि है।

इस जाँच में भिन्न भिन्न प्रकार की लगभग १६ साग-भाजियों की परीक्षा की गई तो ज्ञात हुआ कि उबालने वाले तरीके से भोजन बनाने में आलू में कम से कम १० फी सदी और कुछ साग-भाजियों में ६० से ७० फी सदी तक स्वास्थ्य कर अंश नष्ट हो गया है। कैलसियम (चूना) और लोहे का अंश तो विशेष रूप से नष्ट हो गया था।

अनुभवशून्य रसोइये और बहुतेरी गृहस्वामिनियां बहुधा तरकारियों, दाल, फलियों इत्यादि को इतना अधिक उबाल डालती हैं कि उनका स्वास्थ्यकर अंश एकदम नष्ट हो जाता है। इतना ही नहीं, वह पानी, जिनमें ये खाद्य पदार्थ उबाले जाते हैं, नाली-पनाले में फेंक दिया जाता है। कभी कभी तो पानी को

किसी किसी पदार्थ के उबालने में दो-दो तीन-तीन बार भी बदलते हैं। फल यह होता है कि उन भोज्य पदार्थों में जो प्राकृतिक नमक है, वह बिलकुल ही नष्ट हो जाता है। यही नमक शरीर को स्वस्थ्य रखने के लिये अत्यन्त आवश्यक वस्तु है।

जब इस प्रकार खाद्य-पदार्थों को उबाल कर स्वादरहित तथा लाभरहित कर डालते हैं, तब उन पर मसाला इत्यादि डालकर उन्हें सुस्वाद बनाने की व्यर्थ चेष्टा की जाती है। पर इस से क्या, खाद्य पदार्थ का स्वाभाविक लाभकारी गुण तो उबालने से नष्ट ही हो गया।

ये ही खाद्य पदार्थ यदि 'कुकर' में आधुनिक शैली से पकाए जाते हैं तो उनका वह लाभकारी अंश, जो मनुष्य के स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए आवश्यक है, नष्ट नहीं होता। उसका सच्चा स्वाद इत्यादि बना रहता है, जो मसालेदार बढ़िया से बढ़िया तैयार की हुई भोज्य वस्तुओं में, जो उबाल कर बनाई जाती हैं, कभी भी नहीं मिल सकता।

हम बहुत समय से 'कुकर' पर तैयार किया हुआ भोजन कर रहे हैं। अनेकों मेकरों के 'कुकरों' की परीक्षा करने के उपरान्त हम बेलगाँव के पेंशनयाफ़्ता सब-जज श्री० बाजीराव आर० गुट्टिकर महाशय का बनाया हुआ 'कुकर' अपने पाठकों से काम में लाने का आग्रह करेंगे। वह सर्वोत्तम, सादा, और बहुत ही कम-क़ीमत है।

अंतिम प्रबोधन

प्रिय पाठको, यह स्मरण रक्खो कि हमारा उद्देश्य स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु प्राप्त करना है, न कि बड़े बड़े उभड़े हुए पुट्ठे प्राप्त करना। इसलिए हमारा यह कहना है कि तुमको सूर्य

नमस्कारें उतना ही करना चाहिए, जितना तुम्हारे लिए उपयुक्त हो और इसी प्रकार वैसा और उतना ही भोजन तथा आराम करना चाहिए, जैसा और जितना तुम्हारे लिए आवश्यक है।

तुमको अपने काम के अनुसार आराम, सोने के अनुसार जागना तथा भोजन के अनुसार व्यायाम करना चाहिए। बस, यही एक सब से बड़ा उपदेश है।

संस्कृत भाषा में एक कहावत है कि "लोका भिन्नमतयः" अर्थात्—मनुष्य एक दूसरे से स्वभाव में नहीं मिलते हैं, इसलिए प्रत्येक मनुष्य को अपने स्वभाव के अनुसार काम और आराम तथा भोजन और व्यायाम आदि की व्यवस्था करनी चाहिए।

भगवान् श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं—

युक्तहारविहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु।
युक्त स्वप्नवबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥

[भगवद्गीता—६ । १]

अर्थात्—"यह दुखों का नाश करने वाला योग तो यथा-योग्य आहार और विहार करने वाले तथा कर्मों में यथा-योग्य चेष्टा करने वाले और यथा-योग्य शयन करने वाले तथा जागने वाले ही को सिद्ध होता है।"

इसलिए, यदि उपयुक्त खाद्य-पदार्थों को भोजन के लिए छांट कर जब-तक उपवास करने के साथ साथ नियम रूप से सूर्य-नमस्कार को किया जायगा, तो इसी पीढ़ी में स्वास्थ्य, बल, पराक्रम तथा शारीरिक आकार-प्रकार में इतनी उन्नति होगी, जिसे देखकर आश्चर्य होगा।

चौदहवाँ प्रकरण

स्वास्थ्य का मूल्य

बहुतेरे व्यक्ति यह सोचते हैं कि यदि वे अधिक काम करेंगे तो वे जीवन का सुख और भी अच्छे ढंग से भोगेंगे। वे लोग इस बात को नहीं सोचते यदि वे जीवन को अच्छी तरह बितावें, तो वे अधिक काम करने में समर्थ हों। जब तक स्वास्थ्य ठीक नहीं है जीवन का सुख दुर्लभ है। वह व्यक्ति जो प्रातःकाल ही मुस्कराते हुए प्रसन्न बदन काम करने का श्रीगणेश कर देता है, वह उस दिन के जीवन की सफलता प्राप्त कर लेता है। अतः मनुष्य का सब से प्रथम कर्त्तव्य सुंदर स्वास्थ्य प्राप्त करना है। मनुष्य की आर्थिक और सामाजिक उन्नति उसके स्वास्थ्य पर ही निर्भर रहती है।

सुप्रसिद्ध विद्वान् इमर्सन का कथन है कि मनुष्य की सब से पहली संपत्ति उसका स्वास्थ्य है। बीमार में शक्ति-हीनता है और वह किसी का भी कोई काम नहीं कर सकता। उसे जीवित रहने के—सुन्दर स्वास्थ्य प्राप्त करने के—उपायों का अवलंबन करना चाहिये। स्वास्थ्य अपने ध्येय को आप प्रकट कर देता है स्वस्थ मनुष्य अपने पास पड़ोसियों के उपकार करने के लिए सदैव तत्पर रहता है।

उद्योग-धंधों में, व्यक्तियों और कुटुम्बियों की बीमारी और

शारीरिक अयोग्यता—स्वास्थ्य हीनता—को छोड़ कर जो वार्षिक हानि होती जा रही है, उसका तखमीना करना असंभव है।

वह समय अब आ पहुँचा है जब कि इस राष्ट्रीय अधःपतन और आर्थिक हानि की भयंकरता को दूर करने के लिए प्रबल चेष्टा करना उचित हो गया है। इस ओर अबतक बहुतेरी भिन्न भिन्न चेष्टाएं की गई हैं, पर उनसे कोई विशेष लाभ हुआ नहीं प्रतीत होता है।

औषधि-विज्ञान की उन्नति होने पर भी प्राचीन रोग तो बढ़े ही हैं, साथ ही इनके नये नये रोग भी उत्पन्न हो गए हैं। इसका प्रधान कारण है—"इलाज करने की अपेक्षा रोग को रोक देना कहीं अच्छा है" उक्ति की अवहेलना करना। अब तो सारी शक्ति को रोग का इलाज करने की अपेक्षा उसे आरम्भ ही में रोक देने में लगा देनी चाहिये। इसलिए आम तौर पर बालकों को, विशेष कर स्कूल और कालेजों के विद्यार्थियों को, किसी प्रकार भी वैज्ञानिक और अनुकूल व्यायाम करने की शिक्षा दिलाने का विशेष रूप से उपाय किया जाना चाहिये।

इस प्रकार की व्यायाम-पद्धति को विश्वव्यापी और आसान बनाने के लिए निम्नांकित बातों की पूर्ति का होना आवश्यक है—

(१) उसको कोई भी अकेला आदमी—स्त्री अथवा पुरुष युवा अथवा वृद्ध—कर सके।

(२) उसको अकेला भी कर लिया जासके और ड्रिल की भाँति मिल कर भी।

(३) उसको कहीं भी—चाहे कमरे के अन्दर अथवा खुली जगह में—किया जासके।

(४) उसको दिन में अथवा रात में किसी समय किया जासके।

(५) वह प्रत्येक ऋतु के लिए उपयुक्त हो।

(६) उसके करने में किसी साथी अथवा सामान की आवश्यकता न पड़े।

(७) उसके लिए पहले से किसी ख़ास तैयारी अथवा अभ्यास की आवश्यकता न हो।

(८) उसमें कुछ ख़र्च न पड़े।

(९) वह सब प्रकार से पूर्ण हो।

(१०) वह आयुपर्यन्त की जा सकती हो।

(११) उसमें विद्यार्थियों के अभिभावकों और माता-पिताओं का सहयोग और सहायता मिलनी चाहिये।

(१२) वह कार्योपयुक्त होनी चाहिये।

चूंकि इन उपरोक्त बातों की पूर्ति सूर्य-नमस्कार के अतिरिक्त और किसी व्यायाम-पद्धति से नहीं हो सकती है और इसको नियमानुकूल करने से अगणित लाभ प्राप्त होता है, इसलिए हम अपना पूरा ज़ोर देकर यह सिफ़ारिश करते हैं कि सूर्य-नमस्कार-व्यायाम को हिन्दुस्तान के सब स्कूल और कालिजों में अनिवार्य कर देना चाहिए।

पंद्रहवाँ प्रकरण

सूर्य-नमस्कार से क्या क्या लाभ है ?

नियमित रूप से हमारे आदेशानुसार प्रति दिन सूर्य-नमस्कार व्यायाम करने से निम्नांकित लाभ होते हैं :—

१—इससे सम्पूर्ण पाचन-क्रिया में (पेट, पेड़ू , अँतड़ियां, यकृति इत्यादि में भी) शक्ति प्राप्त होती है और यह क़ब्ज़ को रोकता और दूर करता है।

२—(अ) यह मानवीय शक्ति-केन्द्र—मस्तिष्क, मेरुदण्ड इत्यादि—को शक्ति-संपन्न करता है, तथा दिमाग़ी पागलपन, विस्मृति, थकावट तथा मस्तिष्क के दूसरे रोगों को दूर करता है। यद्यपि, दूसरे अवयवों की अपेक्षा शक्तिहीन नसों को ठीक करने में अधिक श्रम और समय लग जाता है, फिर भी सूर्य-नमस्कार व्यायाम को नियमित रूप से करने पर शक्तिहीन नसें क्रमशः किन्तु निश्चित रूप से अपनी साधारण दशा पर आकर अपना निश्चित कार्य करने लगती हैं।

(ब) इससे (Solar Plexus) को शक्ति-बल-प्राप्त होता है।

३—इससे हृदय को बल प्राप्त होता है और रक्त के दबाव को रुकावट मिलती है।

४—इससे फेफड़े मजबूत होते हैं, उनमें वायु संचार होता है और क्षयी रोग होने का भय नहीं रहता।

५—इससे रक्त बढ़ता और उसका संचार होता है। रक्त का ठीक ठीक संचार होना ही स्वास्थ्य का पहला नियम है।

६—इससे मांस-पेशियों को शक्ति मिलती है, उनमें नई कार्य-शक्ति आती है। गर्दन को फैलाने और दबाने की हरकतें करने से घेघा होने का कोई भय नहीं रहता। मांस-पेशियों को ठीक ठीक हरकतें देने से स्वास्थ्य और सौंदर्य बढ़ता है।

७—इससे त्वचा का रंग खिलता है। अशुद्ध पदार्थ पसीने के द्वारा बाहर निकल जाते हैं। सुन्दर स्वास्थ्य प्राप्त होकर शरीर खिल उठता है। कार्य करने की सामर्थ्य प्राप्त होना ही मनुष्य या स्त्री के व्यक्तिगत या सामाजिक जीवन का सच्चा सुख है।

८—इससे गर्दन, कंधे, भुजा, कलाई, अँगुलियां, पीठ, कमर, पेट, पेडू, जंघा, घुटने, पिड़ली और टखनें मज़बूत होते हैं। कमर के मज़बूत होने से गुर्दे की कोई बीमारी नहीं होने पाती।

९—इससे महिलाओं की छातियां बढ़ती हैं। यह उन्हें कड़ा और लचीला रखता है।

१०—इससे गर्भाशय को शक्ति मिलती है। मासिक-धर्म का विकार दूर होता है और तत्संबंधी पीड़ा इत्यादि का नाश हो गर्भावस्था में अधिक कष्ट नहीं होने पाता।

११—इससे माताओं की छातियों में दूध उत्पन्न होता है।

१२—इससे बालों का गिरना तथा सफ़ेद होना दूर होता है।

१३—इससे नस-दौर्बल्य दूर होता है, स्त्री-पुरुषों की विशेष शक्ति-हीनता दूर होती है और इससे मनुष्य सच्चा मनुष्य और स्त्री, सच्ची स्त्री कहलाने योग्य हो जाती है।

१४—इससे पेट, कूल्हे, जंघा, गर्दन और ठुड्डी पर छाई हुई चर्बी दूर होती है।

१५—इससे गुर्दे की बीमारियाँ दूर हो जाती हैं।

१६—सामने की ओर गर्दन झुकाने की क्रिया से गटई साधारण दशा में रहती है।

१७—इससे पसीने की दुर्गंध दूर हो जाती है।

१८—इससे टांगें झुकी हुई और टेढ़ी नहीं होने पातीं।

१९—इससे न केवल शरीर का ऊपरी आकार, बल और पुट्ठे ही दुरुस्त होते हैं बल्कि शरीर के अंदर के अन्य आवश्यक पुट्ठों को भी शक्ति मिलती है और वे अपना नैमित्तिक कार्य करने में समर्थ होते हैं।

२०—इससे शरीर में रोगों को दूर रखने की शक्ति प्राप्त होती है और शरीर रोग-रहित हो जाता है। सुंदर स्वस्थ शरीर की जाँच-पहिचान-यह है कि मनुष्य को साधारण जुकाम या खाँसी भी, जो डाक्टरों इत्यादि की राय में हो जाना एक साधारण सी बात है, न होने पावे। स्वस्थ मनुष्य को अपने किसी भी अंग-प्रत्यंग की ओर से कोई भी चिंता न होनी चाहिये।

२१—इससे सरलता और निश्चित शीघ्रता और विश्वास के साथ मनुष्य की साधारण शारीरिक दशा सुधरती है और वह पूर्ण रूप से शक्ति संपन्न, सामर्थवान और स्वस्थ हो जाता है।

२२—यह यौवन को बनाये रखने तथा उसके सौंदर्य के बढ़ाने में सब से शीघ्रता पूर्वक लाभ देने का उपाय है। यौवन का सब से अमूल्य गुण यह है कि तुम्हें जीवन की पूर्णता का सच्चा अनुभव और सुख प्राप्त हो। ऐसा होने ही पर मनुष्य दूसरों के लिए आदर्श स्वरूप हो सकता है।

२३—इससे व्यायामशील व्यक्ति में अधिकाधिक मानसिक और आत्मिक बल प्राप्त होता है।

२४—यह सुंदर और स्वस्थ तथा निर्दोष जीवन का शिला है और समस्त आयु भर मनुष्य को लाभ देने वाला है। सूर्य-नमस्कार का नियमित, दीर्घ और नित्य का अभ्यास और अनुकूल भोजन मनुष्य के हृदय में मादक पदार्थों की ओर से घृणा उत्पन्न कर देगा, मसाले इत्यादि गर्म पदार्थों की ओर रुचि कम हो जायगी, तले हुए पदार्थ अच्छे न लगेंगे और मनुष्य को दीर्घ जीवन प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होगा। इंगलैंड के सुप्रसिद्ध डाक्टर सर डब्लू० अर्वथनाट लेन का कथन है कि दीर्घजीवन के उदाहरण अधिकांश रूप से मिताहारी लोगों में ही देखने में आते हैं। सच पूछो तो मनुष्य गीता की निम्नलिखित व्याख्या के अनुसार सात्विकी हो जाता है।

आयुः सात्वबलारोग्य सुख प्रीति विबर्धनाः।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्विकप्रियाः॥

[भगवद्गीता, १७—८]

अर्थात्—आयु, सात्विक वृत्ति, बल, आरोग्य, सुख और प्रीति वृद्धि करने वाले रसीले, स्निग्ध, शरीर में मिल कर चिरकाल तक रहने वाले और मन को आनन्द देने वाले आहार सात्विक मनुष्य को प्रिय होते हैं।

२५—यह मनुष्य को पाप कर्म से दूर रखता है, कारण कि शक्ति-हीनता और रुग्नावस्था ही पाप की जड़ है।

२६—इससे मनुष्य आशावादी और शुभ विचारवाला हो जाता है। इससे मनुष्य का स्वभाव दानशील और परोपकारमय

हो जाता है। इससे मनुष्य में अपनी जाति, अपने देश और अपने नृपति के लिए बलिदान करने की भावना उत्पन्न होती है।

२७—सारांश में इससे मनुष्य के लिए सुंदर स्वास्थ्य, बल सामर्थ्य और दीर्घायु का द्वार खुल जाता है जो ईश्वर की मनुष्य के लिए एक बड़ी भारी देन है।

हम यह दावा नहीं करते कि सूर्य-नमस्कार शरीर से सम्बन्ध रखने और उत्पन्न होने वाले प्रत्येक रोग का इलाज है लेकिन हम यह दावा अवश्य करते हैं कि व्यायाम की इस प्रणाली को नियमित रूप से अपनाने से इसके करने वाले को सुन्दर स्वास्थ्य, बल, सामर्थ्य और दीर्घ जीवन अवश्य प्राप्त होगा।

सोलहवाँ प्रकरण

उपसंहार

इस पुस्तक को समाप्त करने के पूर्व हम अपने पाठकों के विचारार्थ डाक्टर राधाकृष्ण, एम० बी०, बी० एस० के 'जीवन की आशा' (Expectation of Life) शीर्षक लेख का, जो लाहौर की एक मासिक पत्रिका 'वैदिक मैगज़ीन' के सितम्बर, सन् १९२७ ई० के अंक में प्रकाशित हुआ था, कुछ अंश यहाँ उद्धृत करते हैं—

हिन्दुस्तान में जीवन बढ़ाने के उपाय

जीवन बढ़ाने के उपायों को बतलाने के पूर्व यह विचार लेना उचित है, आया जीवन की वृद्धि अथवा दीर्घायु वास्तव में आवश्यक है या नहीं। डाक्टर सिलवैस्टर ग्राहम का कथन है कि यदि जीवन की वृद्धि की जायगी, तो उसकी शक्ति का ह्रास हो जायगा। क्योंकि ये दोनों एक दूसरे के विरोधी हैं। परन्तु इस बात को आजकल के शरीर-शास्त्र के विद्वानों ने भली भाँति सिद्ध कर दिया है कि यदि उपयुक्त साधन ग्रहण किये जावें तो जीवन दोनों ही प्रकार से बढ़ाया जा सकता है।

जीवन की वृद्धि इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि—

(१) वृद्धावस्था में एक अनूठा आनन्द प्राप्त होता है। स्वस्थ वृद्धावस्था वास्तव में एक सर्वोपरि सुख है।

(२) देश के हानि-लाभ के विचार से एक ८० वर्ष का बुद्धिमान मनुष्य देश की एक बहुमूल्य सम्पत्ति है। क्योंकि वृद्ध मनुष्य अपने जीवन के अनुभव और लोभादि विषयों से रहित होने के कारण परामर्शदाता तथा न्यायाधीश का काम करता है। वह जब ४० वर्ष का था तब की अपेक्षा वह अब अधिक काम का होता है और वह अकेला ४०, ४० वर्ष के एक ही स्थिति के दो आदमियों से अधिक मूल्यवान होता है। यह बिलकुल सत्य है कि स्वस्थ वृद्ध मनुष्यों की ५० वर्ष के उपरान्त की मृत्यु देश के लिए एक आपत्ति है। जीवन-वृद्धि (दीर्घायु) के साथ साथ बुद्धि की रक्षा और काम करने की शक्ति भी होनी चाहिये। इसकी प्राप्ति के लिए विद्वानों ने निम्नांकित उपाय बताये हैं—

व्यक्तियों के लिए उपाय

(१) ब्रह्मचर्य और विवाह संस्करण का सुधार।

(२) शारीरिक बल और परिश्रम की प्रतिष्ठा।

(३) सादा तथा स्वस्थ जीवन।

(४) स्वच्छता का भाव।

(५) मानसिक स्वास्थ्य, अर्थात् सहिष्णुता और उत्कृष्ट आशा।

जातियों के लिए उपाय

(६) जच्चा-बच्चा की कुशल।

(७) स्वच्छता और छूत की बीमारियों की रोक।

(८) शिक्षा सम्बन्धी साधन।

" यहाँ पर केवल उपायों के नाम ही दे दिए गये हैं। यदि इनमें से प्रत्येक का विस्तार-पूर्वक वर्णन किया जावे, तो प्रत्येक के ऊपर एक स्वतन्त्र लेख बन सकता है। हम यहाँ पर संक्षेप में दीर्घायु-प्राप्ति के केवल कुछ थोड़े से सुप्रसिद्ध कार्य-क्रमों का वर्णन करते हैं।

अमरीका देश की 'दीर्घायु समिति' की ओर से, जिसमें अमरीका के १०० चुने हुए डाक्टर हैं, जो निम्न लिखित १५ स्वास्थ्य-सम्बन्धी नियम प्रत्येक मनुष्य के लिए बताए गये हैं, वे सर्वोत्तम हैं—

(अ) वायु—

(१) अपने रहने के प्रत्येक कमरे को हवादार बनाओ।

(२) हलके ढीले और सूराखदार कपड़े पहनो।

(३) ड्रिल, बाहर काम करना और मन-बहलाव।

(४) जहाँ तक हो सके वहाँ तक बाहर सोओ।

(५) गहरा सांस लो अर्थात् प्राणायाम करो।

(ब) भोजन—

(६) कम और हलका भोजन करो।

(७) मांस और अंडों को कम खाओ।

(८) कुछ सख्त, कुछ भारी और कुछ कच्चे पदार्थ खाओ।

(९) धीरे धीरे चबा कर खाओ।

(स) विष—

(१०) पाखाना रोजाना पूरी तौर से साफ़ हो।

(११) सीधे होकर चलो, बैठो और खड़े हो।

(१२) ज़हर और दूषित पदार्थों को शरीर में न आने दो।

(१३) डाढ़, दाँत, मसूड़ों और जीभ को साफ़ रक्खो।

(द) स्फूर्ति—

(१४) अधिक काम करने, अधिक आराम करने, अधिक खेलने तथा अधिक सोने से बचो।

(१५) शान्ति-पूर्वक रहो।

इन नियमों की विशेषता यह है कि ये—

(१) बनावटी नहीं हैं, स्वाभाविक हैं।

(२) कठिन नहीं हैं, सरल हैं।

इन नियमों के पालन करने से—

(१) ह्रास तथा मृत्यु देर से होती है।

(२) व्यक्तिगत तथा जातिगत ह्रास नहीं होने पाता, और

(३) ये रोग को रोकते हैं।

पाठकों को उपरोक्त सब विषयों को ध्यान-पूर्वक पढ़ने से अब यह स्पष्ट ज्ञात होगया होगा कि हमारी सूर्य-नमस्कार की क्रिया बहुत स्वाभाविक और सरल है। और जब इसे युक्ताहार-विहार तथा उपवास के साथ किया जावेगा, तो इस उपरोक्त उद्धरण के अन्तिम भाग में जो फल दिये हुए हैं, वे सब फल इससे प्राप्त होंगे।

अन्त में हम अपने पाठकों को—स्त्री-पुरुष, युवा-वृद्ध, अमीर-

ग़रीब तथा सबल-दुर्बल—सबको निश्चय रूप से यह विश्वास दिलाते हैं कि यदि सूर्य-नमस्कारों को विश्वास-पूर्वक उपरोक्त नियमों का पालन करते हुए तथा युक्ताहार-विहार और उपवास के साथ किया जावेगा, तो इनसे केवल व्यक्तिगत ही नहीं, किन्तु राष्ट्र भर को स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु की प्राप्ति होगी।

शुक्ल यजुर्वेद वालों के लिये वैदिक तथा बीज-मंत्रों के साथ सूर्य-नमस्कार करने की विधि

संकल्प नमस्काराः

आचम्य प्राणानायम्य ॥ तिथिर्विष्णुस्तथा वारं नक्षत्रं विष्णुरेवच । योगश्च करणं विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥ अद्य पूर्वोच्चरितैवंगुण विशेषेण विशिष्टायां शुभ पुण्य तिथौ ममात्मनः श्रुति स्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं श्री सवितृ सूर्य नारायण देवता प्रीत्यर्थं च श्री हंसकल्पेनोक्त विधिना यथाशक्ति नमस्काराख्यं कर्म करिष्ये ।

अथ ध्यानम्—ध्येयः सदा सवितृ मंडल मध्यवर्ती ।
नारायणः सरसिजासनसंनिविष्टः ॥
केयूरवान् मकर कुंडलवान् किरीटी ।
हारी हिरण्मय वपुर्धृत शंख चक्रः ॥ १ ॥

(१) ॐ ह्रां हंसः शुचिषत् ॐ ह्रां मित्राय नमः ।

(२) ॐ ह्रीं वसुरन्तरिक्षसत् ॐ ह्रीं रवये नमः ।

(३) ॐ ह्रूं होता वेदिषत ॐ ह्रूं सूर्याय नमः ।

(४) ॐ ह्रैं अतिथिदुरोण सत् ॐ ह्रैं भानवे नमः ।

(५) ॐ ह्रौं नृषत् ॐ ह्रौं खगाय नमः ।

(६) ॐ ह्रः वरसत् ॐ ह्रः पूष्णे नमः ।

(७) ॐ ह्रां ऋतसत् ॐ ह्रां हिरण्यगर्भाय नमः ।

(८) ॐ ह्रीं व्योमसत् ॐ ह्रीं मरीचये नमः ।

(९) ॐ ह्रुं अब्जागोजाः ॐ ह्रुं आदित्याय नमः ।

(१०) ॐ ह्रैं ऋतजाऽद्रिजाः ॐ ह्रैं सवित्रे नमः ।

(११) ॐ ह्रौं ऋतम् ॐ ह्रौं अर्काय नमः ।

(१२) ॐ ह्रः बृहतः ॐ ह्रः भास्कराय नमः ।

(१३) ॐ ह्रां ह्रीं हंसः शुचिषद्वसुरंतरिक्षसत् ॐ ह्रां ह्रीं मित्र रविभ्यां नमः ।

(१४) ॐ ह्रुं ह्रैं होता वेदषदतिथि दुरोणसत् ॐ ह्रुं ह्रैं सूर्य भानुभ्यां नमः ।

(१५) ॐ ह्रौं ह्रः नृषद्वरसत् ॐ ह्रौं ह्रः खगपूषभ्यां नमः ।

(१६) ॐ ह्रां ह्रीं ऋतसद्व्योमसत् ॐ ह्रां ह्रीं हिरण्यगर्भ-मरीचिभ्यां नमः ।

(१७) ॐ ह्रुं ह्रैं अब्जागोजाऽऋतुजाऽद्रिजाः ॐ ह्रुं ह्रैं आदित्यसवितृभ्यां नमः ।

(१८) ॐ ह्रौं ह्रः ऋतं बृहत् ॐ ह्रौं ह्रः अर्कभास्कराभ्यां नमः ।

(१९) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रुं ह्रैं हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिष दतिथिर्दुरोणसत् ॐ ह्रां ह्रीं ह्रुं ह्रैं मित्ररविसूर्य-भानुभ्यो नमः ।

(२०) ॐ ह्रौं ह्रः ह्रां ह्रीं नृषद्वरसदृतसद्व्योमसत् ॐ ह्रौं ह्रः ह्रां ह्रीं खगपूषहिरण्यगर्भमरीचिभ्यो नमः ।

(२१) ॐ ह्रुँ ह्रैं ह्रौं ह्रः अब्जागोजाऽऋतुजाऽअद्रिजाऽ-

ऋतम्बृहत् ॐ हं हैं हौं हः आदित्यसवित्रर्कभास्करेभ्यो नमः ।

(२२)-(२४) ॐ ह्रां ह्रीं हूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ ह्रां ह्रीं हूँ ह्रैं ह्रौं ह्रः हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोतावेदिषदतिथिर्दुरोणसत् । नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजाऽऋतुजाऽअद्रिजाऽ ऋतम्बृहत् ॥ १ ॥ ॐ ह्रां ह्रीं हूँ ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ ह्रां ह्रीं हूँ ह्रैं ह्रौं ह्रः मित्ररविसूर्यभानुखगपूषहिरण्यगर्भ-मरीच्यादित्यसवित्रर्कभास्करेभ्यो नमः ॥ इति त्रिः ॥

(२५) ॐ श्रीसवित्रे सूर्यनारायणाय नमः ।
आदित्यस्य नमस्कारान् ये कुर्वंति दिने दिने ।
जन्मान्तर सहस्रेषु दारिद्र्यं नोपजायते ॥१॥
नमो धर्मविधानाय नमस्ते कृतसाक्षिणे ।
नमः प्रत्यक्षदेवाय भास्कराय नमोनमः ॥२॥
अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनं ।
सूर्यपादोदकं तीर्थं जठरे धारयाम्यहम् ॥३॥

(इति तीर्थं गृहीत्वाचमनं कुर्यात्)

ऋग्वेद तथा कृष्ण यजुर्वेद वालों के लिये वैदिक तथा बीज-मंत्रों के साथ सूर्य-नमस्कार करने की विधि

तृचाकल्पनमस्काराः

आचम्य प्राणानायम्य। ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल-प्राप्त्यर्थं श्रीसवितृसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं च तृचाकल्पविधिना नमस्काराख्य कर्म करिष्ये। (पात्रे जलं गृहीत्वा तन्मध्ये गंधाक्षतपुष्पाणि क्षिप्त्वा)

ध्येयः सदा सवितृमंडलमध्यवर्ती।
नारायणः सरसिजासनसंनिविष्टः॥
केयूरवान् मकरकुंडलवान् किरीटी।
हारी हिरण्मयवपुर्धृतशंखचक्रः॥ (इति ध्यात्वा)

(१) ॐ ह्रां उद्यन्नद्य मित्रमहः ह्रां ॐ मित्राय नमः।
(२) ॐ ह्रीं आरोहन्नुत्तरां दिवं ह्रीं ॐ रवये नमः।
(३) ॐ ह्रूँ हृद्रोगं मम सूर्य ह्रूँ ॐ सूर्याय नमः।
(४) ॐ ह्रैं हरिमाणं च नाशय ह्रैं ॐ भानवे नमः।
(५) ॐ ह्रौं शुकेषु मे हरिमाणं ह्रौं ॐ खगाय नमः।
(६) ॐ ह्रः रोपणाकासु दध्मसि ह्रः ॐ पूष्णे नमः।
(७) ॐ ह्रां अथो हारिद्रवेषु मे ह्रां ॐ हिरण्यगर्भाय नमः।

(८) ॐ ह्रीं हरिमाणं निदध्मसि ह्रीं ॐ मरीचये नमः ।

(९) ॐ ह्रूँ उदगादयमादित्यः ह्रूँ ॐ आदित्याय नमः ।

(१०) ॐ ह्रैं विश्वेन सहसा सह ह्रैं ॐ सवित्रे नमः ।

(११) ॐ ह्रौं द्विषंतं मह्यं रंधयन् ह्रौं ॐ अर्काय नमः ।

(१२) ॐ ह्रः मो अहं द्विषते रधं ह्रः ॐ भास्कराय नमः ।

(१३) ॐ ह्रां ह्रीं उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवं ह्रां ह्रीं ॐ मित्ररविभ्यां नमः ।

(१४) ॐ ह्रूँ ह्रैं हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ह्रूँ ह्रैं ॐ सूर्यभानुभ्यां नमः ।

(१५) ॐ ह्रौं ह्रः शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि ह्रौं ह्रः ॐ खगपूषभ्यां नमः ।

(१६) ॐ ह्रां ह्रीं अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं निदध्मसि ह्रां ह्रीं ॐ हिरण्यगर्भमरीचिभ्यां नमः ।

(१७) ॐ ह्रूँ ह्रैं उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह ह्रूँ ह्रैं ॐ आदित्यसवितृभ्यां नमः ।

(१८) ॐ ह्रौं ह्रः द्विषंतं मह्यं रंधयन्मो अहं द्विषते रधं ह्रौं ह्रः ॐ अर्कभास्कराभ्यां नमः ।

(१९) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रैं उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवं हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रैं ॐ मित्ररविसूर्यभानुभ्यो नमः ।

(२०) ॐ ह्रौं ह्रः ह्रां ह्रीं शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं निदध्मसि ह्रौं ह्रः ह्रां ह्रीं ॐ खगपूषहिरण्यगर्भमरीचिभ्यो नमः ।

(२१) ॐ हूँ हैं हौं हः उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह द्विषंतं मह्यं रंधयन्मो अहं द्विषते रधं हूँ हैं हौं हः ॐ आदित्यसवित्रर्कभास्करेभ्यो नमः ।

(२२-२४) ॐ हां ह्रीं हूँ हैं हौं हः हां हीं हूँ हैं हौ हः उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवं हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय । शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं निदध्मसि उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह द्विषंतं मह्यं रंधयन्मो अहं द्विषते रधम् ॥ हां हीं हूँ हैं हौं हः हां हीं हूँ हैं हौं हः ॐ मित्ररविसूर्यभानुखगपूषहिरण्यगर्भमरीच्यादित्यसवित्रर्कभास्करेभ्यो नमः ॥ इति त्रिः ॥

(२५) ॐ श्रीसवित्रे सूर्यनारायणाय नमः ।
आदित्यस्य नमस्कारान् ये कुर्वन्ति दिने दिने ।
जन्मान्तरसहस्रेषु दारिद्र्यं नोपजायते ॥ १ ॥
नमो धर्मविधानाय नमस्ते कृतसाक्षिणे ।
नमः प्रत्यक्षदेवाय भास्कराय नमोनमः ॥ २ ॥
अनेन तृचाकल्पनमस्काराख्येन कर्मणा भगवान् ।
श्रीसवितृसूर्यनारायणः प्रीयताम् । न मम ।
अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।
सूर्यपादोदकं तीर्थं जठरे धारयाम्यहम् ॥ ३ ॥

(इति तीर्थं गृहीत्वाचमनं कुर्यात्)